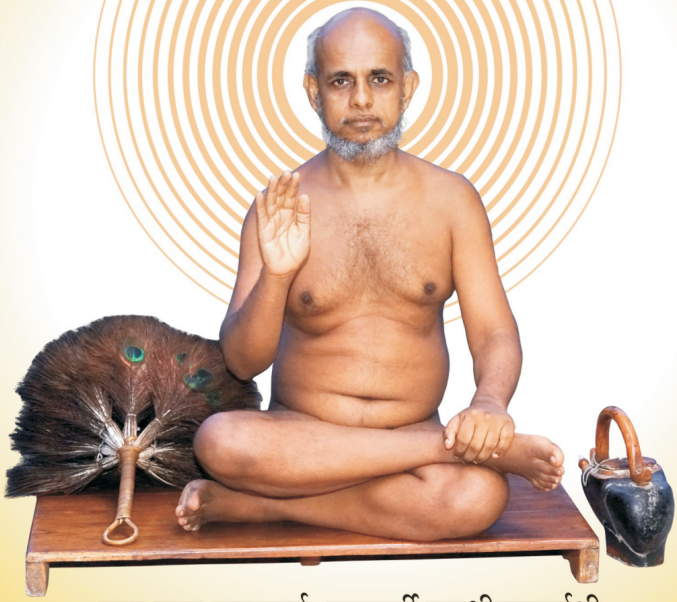


परम पूज्य तपश्चर्या–चक्रवर्ती पट्टाधीशाचार्यश्री

सुविधिसागर जी महाराज

के

50 वें जन्मदिवस के पावन अवसर पर

सुविधि–परिवार के द्वारा आयोजित

जिनवाणी-महोत्सव

सहस्रग्रन्थसंग्रह

❊ जन्मदिवस 19–03–1971 ❊ मुनिदीक्षा–11–05–1989 ❊ आचार्यपद– 20–06–2004

पट्टाधीशपद– 24–12–2010 (20–06–2004 को की गई उद्घोषणा के अनुसार)

परम पूज्य आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज के द्वारा की गई उद्घोषणाः–

हमारी समाधि के पश्चात् आपको इस संघ के संचालकपद पर नियुक्त करते हैं।

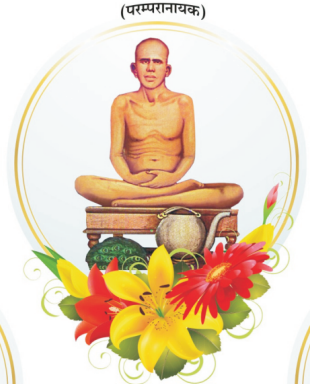
(अंकलीकर वाणी–जुलाई 2004) (अक्षयज्योति–अक्तूबर 2004)

श्री सुमति विलास

कर्त्ता
मनसुखलाल हरिलाल

प्रकाशक
स्वधर्मनिष्ठ प्रेस

(परम्परानायक)



परम पूज्य चारित्र-चक्रवर्ती,
आचार्यश्री आदिसागर जी महाराज
(अंकलीकर)

(द्वितीय पट्टाधीश)



परम पूज्य तीर्थभक्त-शिरोमणि,
आचार्यश्री महावीरकीर्ति जी महाराज

(तृतीय पट्टाधीश)



परम पूज्य सिद्धान्त-चक्रवर्ती,
आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज

(चतुर्थ पट्टाधीश)



परम पूज्य तपश्चर्या-चक्रवर्ती, आचार्यश्री सुविधिसागर जी महाराज

दिगम्बर साधु निरन्तर पगविहार करते रहते हैं। ग्रन्थभण्डार को साथ में रख कर विहार करना अशक्यप्रायः होता है। फलतः उनको ग्रन्थों के सन्दर्भ देखने में असुविधा होती है। उनकी सुविधा के लिये इस कोश का निर्माण किया गया है। इस कोश के निर्माण में किसी भी प्रकार का व्यापारिक हेतु नहीं है।

आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न श्रावकबन्धुओं से निवेदन है कि वे ग्रन्थ का विक्रय कर अध्ययन करने की परम्परा को कायम रखें।

मुखपृष्ठ पर हमने ग्रन्थकर्त्ता, अनुवादक, सम्पादक, प्रकाशक आदि के नाम दिये हैं। किसी संस्थान का कर्तृत्व हमने लुप्त नहीं किया है।

इस कोश के लिये आवश्यक ग्रन्थ हमें अनेक स्रोतों से प्राप्त हुये हैं। हम उन सभी का आभार मानते हैं।

सुविधि-परिवार



॥ श्री सुमति विलास ग्रंथ ॥

कर्त्ता

श्री मनसुखलाल हरिलाल

दोहरो.

विमल सुमति मंगल करण, आ श्री सुमति विलास;
हरि अबोध जानुपरे, करे सुज्ञान प्रकाश.

छपावी प्रसिद्ध कर्त्ता

संतोकचंद माणेकचंद

तथा

गांधी नाथजी मनसुखलाल.

आवृत्ति १ ली–प्रत १०००

मुंबई.

"स्वधर्मनिष्ठ" प्रेसमा छाप्युं

सवत् १९६३ सने १९०७

मूल्य रु. १–०–०

शुद्धि पत्र.

पृष्टांक.	लिटी.	अशुद्ध.	शुद्ध.
५	२१	सामश्यं	सामाश्यं
७	२३	वनमा	वनमां
१३	१३	समती	सुमती
२०	१०	कमं	क्रम
२०	१७	जिनोकत	जिनोक्त
२३	१७	जाणीऐ ठीऐ ऐ	जाणीए ठीए ए
२४	२	ऐवा	एवा
६४	२२	गेर	ठोर
६६	१०	पोत	पोते
७०	१७	अन्यतंर	अन्यंतर
७७	२१		"माटे हे चेतना" ते पहेलां (२) मृषानुबंधी रौद्रध्यान-लखवुं जोइए
७०	२		"जेम पृथ्वी उपर" ते पहेलां (३) चोर्यानुबंधी रौद्रध्यान-लखवु जोइए
७७	४	मोख्कस्स	मोक्कस्स
१०६	४	ते उपशम	ते क्षयउपशम
१०६	५	तथा उपशम	तथा क्षयउपशम
१११	७	पृथक्	पृथक्त
१४४	२३	निक्षेपा ?	निक्षेपा
१५१	३	स्वपरजावथी	सर्व परजावथी
१५३	१७	निगृह्णति	निगृह्णाति
१६७	२०	पोतापणं	पोतापणुं

पृष्टांक.	लिटी.	अशुद्ध.	शुद्ध.
१६८	३	प्रतित अने	प्रतित करी
१६९	२	केवल ज्ञाने	केवल ज्ञानीने
१६९	२५	ढवी	ढती
१७२	२	आवी पूर्व वर्गणा साथे वंधाय छे	आवे
१७८	३	अलोका काशमां	लोकालोकमां
१७८	८	श्रुतज्ञन	श्रुतज्ञान
१९७	१५	शुद्धा शुद्ध पणाने	शुद्धा शुद्ध कर्त्ता पणाने
२२७	१३	उपन्नोग	उपयोग
२४०	८	तनी	तेनी
२४७	१६	सिद्धा	सिध्ध्या
२५७	२६	निमलता	निर्मलता
२५९	२४	पारणति	परिणति
२६२	२४	नाह्	नहि
२६३	८	जुवाब	जवाब
२६४	२५	उत्तरे	उतरे
२६७	१	ज्ञाकयता	ज्ञायकता
२७५	२७	वनन	वचन
२७६	५	नींदनीय छे	निंदनीय छे)
२७६	६	छोढी	छोडी
२७६	१४	यागे	योगे
२७८	१३	ज्ञनामृत	ज्ञानामृत
२८०	१४	दशामा	दशामां
२८३	२०	रुथ्यो	रथ्यो
२८७	८	पोनानुं	पोतानुं

ॐ

श्री सुमतिविलास ग्रंथ.

॥ दोहरा ॥

शासन रहे जिन आणथी, आज्ञाए व्यवहार
निजमत कल्पीत जे कहे, ते न लहे नवपार ॥ १ ॥
शिवमग जेणे अनुज्ञव्यो, ते श्री जिनवर देव
ए विण वहु मति कल्पना, काल अनादि कुटेव ॥ २ ॥
निजमत हठ सवि ठोडिने, करि जिन वचन विचार
उत्तम नरज्नव पामीने, निजपर आतम तार ॥ ३ ॥

सामायक सिद्धयुपाय, सम्यक् न्यायसुधारस, आत्मवोध पत्रिका, शुद्धोपयोग प्रवेशिका अने अनुज्नवप्रवेशिका ए नामना अति सरल वालवोधक द्रव्यानुयोग, उत्सर्ग, अपवाद, कारण, कार्य, कारक, शुद्ध ज्ञान, शुद्धक्रिया, शुद्धव्यवहार अने निश्चयने यथार्थ जणावनार, अनंत-शुद्ध अध्यात्मरस पोषक अने कुष्ट कुमतिथी ठोमावी मोक्षमार्गे दोर-नार, शुद्धदया शुद्धन्याय अने शुद्धज्ञानना दातार, वहु सिद्धांतनी साक्षी-पूर्वक, जेनो अमूल्य परमार्थ मात्र वांचवाथी जणाशे एवा पांच ग्रंथनो संग्रह " सुमतिविलास " नामे ग्रंथ सारा उंचा कागलमां मोटा शुद्ध टाईपमां सुपररोयल आठ पेची चालीश फोर्ममां ठपावी वहार पाड्यो ठे.

केटलाक पुरुषोपुरुं विचार्या विना एकांते एम वोले ठे के आतो एकांते निश्चय ठे अथवा एकांते व्यवहार ठे पण पक्षपात रहित न्याय विचारी ज्ञानीओना वचन प्रमाणे तपासी चोकस करता नथी. तेम ग्रंथने पहेलेथी ठेला सुधी पुरो वांचता नथी अने अनादर करे ठे, वली कोई अणसमजुना कह्या प्रमाणे पुरुं चोकस कर्याविना खरानें खोटुं तथा खोटाने खरुं कहेठे. एम एकांत निश्चय करी अथवा व्हेम लावी सर्वे जणनी वात न सांज्नले तो ते पोतानी मतिए साचा तत्वने पामे नहि. पण निरपेक्षपणे अनेकांतनये ग्रथने पूरो वांची आगमं

प्रमाणें तथा ज्ञानीओना कह्या प्रमाणे तपासवाथी खरा खोटानी समजण पडे, वली ते छतां जो कोई शंका पमे तो ते ज्ञानीने पूछी शंका साफ करी साची वात होय ते कबुल करवी. पण ग्रंथनो पहेलेथी निरादर करवो नहीं, पुरुं तपास्या विचार्या विना खरुं खोटुं कहेवुं नहीं अने खरी वात छतां कोई हठ कदाग्रह अभिमाने करी अथवा बीजानुं अपमान करवा खरी वातने मरमशे, जूठी कहेशे अथवा छुपावशे ते ज्ञानावरणी, दर्शनावरणी, मोहनी तथा वीर्यांतराय बांधी अनंत संसार भ्रमण करशे. खराने खोटुं तथा खोटाने खरुं कहेवुं ते वात ठीक नथी. अने जे खरी वातने छूपावशे नहीं ते ज्ञानावरणी, दर्शनावरणी, मोहनी अने अंतराय कर्मनो नाश करी अनंत सुखना भोगदारी थशे. आ ग्रंथमां कोई ठेकाणे कांई शंका पमे तो ते ज्यांथी ग्रंथ मलेछे त्यां खुशीथी लखी पूछवुं तेथी तेनो खुलाशो मलशे. आ ग्रंथनी अंदर भावनी कोई साची भूल जणाय तो ते महेरबानी करी अमोने लखशो एटले सुधारी लेवामां आवशे.

आ ग्रंथनी कीम्मत रु. १–०–० राखवामां आवीछे.

नंग दश सामटा लेनारने नंग १) वधु, नंग ५०) सामटा लेनारने नं. १०) वधु छूट तरीके आपवामां आवशे.

पैसा नहि आपीशकाय एवापण मोक्षजिज्ञासु जीवने फक्त पोष्टेज पैसा मोकलवाथी विना मूल्ये आपवामां आवशे.

"कर्मग्रंथ मूल" छए ग्रंथो सारा टाईपमां छपावी बाहेर पाडेल छे तेनी कीम्मत रु. ०–४–० छे आमां पण कमीशन विगेरे उपर प्रमाणे समजवुं.

वली सुमतिविलास ग्रंथनो बीजो भाग विविध बोध प्रकाशक पद्यबंध छपाय छे ते पण थोडा दिवसमां बहार पडशे.

उपरना ग्रंथ मलवानुं ठेकाणुं:—गांधीनाथजी मनसुखलाल मु. वेजलपुर (जील्ले पंचमहाल) स्टेसन खरसालीआ. ए सरनामे मलशे.

प्रस्तावना.

आ सुमति विलास नामना ग्रंथमां सारी रीते न्याय, ज्ञान, परम-दया, अध्यात्म तथा द्रव्यानुयोगनो विषय छे एने जाणतां समकीतनी परम दृढता थाय ए माटे वहु सन्माने आ ग्रंथ वांचवानो अभ्यास करवो. घणा प्रमाणिक पुरुषोना वचननी साक्षी सहित अनुभव ज्ञाने निर्धार करी लखायो छे आ ग्रंथमां निर्मल आत्मवोध थवा अर्थे, अने रागद्वेषादिमटी शुद्धात्मभावमां स्थिर समाधि प्राप्ति माटे नव तत्वादि भाव जिनेश्वरना प्ररुपेला नय निक्षेप पक्ष प्रमाण कारकादिके करी सारी रीते सुगम समजाय एम वर्णन छे. जूठा अलंकार खोटी उपमाओ, अने कल्पित वातो लखवामां आवी नथी

आ ग्रंथमां मोक्ष मार्गनो अधिकार छे मोक्ष जिज्ञासु भव्य जीवो आ ग्रंथना अधिकारी छे, भव्य जीवो शुद्धात्म अधिकार पामे ए फल छे पूर्वाचार्योंना करेला महान् ग्रंथो घणा छे पण देश काल अनुसरी वर्तमान भाषा अने सुगम युक्तिथी समजाववामां आवे तो भव्य जीवो सहेलाइथी वोध पामे ए हेतु छे. सद्गुरुनी परंपराए वोध पामेलानी गुरुगम लेवाथी शुद्धवोध विस्तार पामे अने सकल क्लेशनो अंत आवे अने परमानंदनी प्राप्ति थाय. हृदयमां विचारतांज परम आल्हाद उपजे एवा सामायकसिध्युपाय, सम्यक्न्यायसुधारस, आत्मवोध पत्रिका, शुद्धोपयोग प्रवेशिका अने अनुभव प्रवेशिका ग्रंथोनो समावेश छे. एकांत निश्चय अथवा एकांत व्यवहारनी वात नथी स्याद्वाद शैलीप्रमाणे लखाण थएलुं छे, तेमां प्रमादवशे मतिदोषथी तथा लखाण दोषथी कंइ भूल थइ होय तो ज्ञानी पुरुषोना वचन प्रमाणेज वावत कबुल करवी.

अनुक्रमणिका.

सामायकसिध्ध्युपाय	पान.	१—१६४.
सम्यक् न्यायसुधारस	,,	१६५—१९४
आत्मबोध पत्रिका	,,	१९५—२११.
शुऊोपयोग प्रवेशिका	,,	२१३—२४५.
अनुभव प्रवेशिका	,,	२४७—३१६



॥ सामायकसिध्ध्युपाय ॥

ढाल पहेली.

॥ अथ श्री स्तवन ॥

॥ परम पुरुष परमातमा साहीवजी ॥ ए राग ॥

श्रीगुरु वचन सुवासमां साहीवजी, लही मुजमन मधुकर तृप्ति हो,
अलवेली वाणी जीनवीरनी साहेवजी० ॥
सम एक आतम भावमां सा० दाखुं शिवपद ज्ञप्ति हो ॥ अ० ॥ १ ॥
सामाइकना अर्थनो सा० करशुं शुद्ध निबंध हो ॥ अलवेली ॥
नयनिक्षेप प्रमाणथी सा० चेतन शक्ति संबंध हो ॥ अ० ॥ २ ॥
पुद्गलमां आपो लखी सा० परभावे थइ रक्त हो ॥ अलवेली ॥
ज्ञानादिक निज धर्मनी सा० उलटी कारक शक्ति हो ॥ अ०॥३ ॥
बहु भेदे अभेद छे सा० आतम शक्ति अनंत हो ॥ अलवेली ॥
ते सवि विषम पदे करी सा० ग्रही पुद्गल खंध अत्यंत हो ॥ अ० ॥ ४ ॥
ज्ञानावरणादिक थइ सा० विविधा ऽवरणनी व्याध हो ॥ अल० ॥
विविध विज्ञाने टालवा सा० सेवो समपद साध्य हो ॥ अ० ॥ ५ ॥
ज्ञान ज्ञान नहि समबीनु सा० दर्शन चरण न कोय हो ॥ अल० ॥
संवर निर्जरा शिव नहि सा० जीन आणा कीम होय हो ॥ अ० ॥ ६ ॥
समाचारी समपद विना सा० जूठी जाणो तेह हो ॥ अलवेली ॥
जीनवचनामृत सेवतां सा० टले विषमता एह हो ॥ अ० ॥ ७ ॥
तप जप पूजा प्रभावना सा० समभाव विना कीम थाय हो ॥ अ० ॥
समजावे साचुं सवे सा० निज संपत्ति प्रगटाय हो ॥ अ० ॥ ८ ॥

ढाल बीजी. राग

कंचन कोटि दीन प्रते मन मोहन मेरे, लाख वरस दिये दान
॥ मन मोहन मेरे० ॥
सामायक फल मापमां मन० नहि आवे तसमान ॥ मन० ॥ १ ॥

मिथ्या दृष्टी न लहि शके मन० लाज सामायक शुद्ध ॥ मनमो० ॥
माटे तजी मिथ्यातने, मन० भेद ज्ञानी थइ बुद्ध ॥ मन० ॥ २ ॥
निज सुख संपत्ति निज विषे, मन० नहि परद्रव्यादिकमांहे ॥ म० ॥
अस्ति नास्ति विचारतां, म० भ्रम दुःख रहे नहि त्यांह ॥म० ॥ ३ ॥
सम एक आतम भावमें, मन० रही ज्ञान अनंतनी आय ॥ मन० ॥
केवल ज्ञानादि अनंतनो, मन० पूरण सिद्धि उपाय मन० ॥ ४ ॥
बाहिर कारण मात्र छे, मनमो० अंतर कार्य अनुप ॥ मनमो० ॥
बहिरंतर समता भजी मन० द्रव्य भाव शुचिरुप मनमो० ॥ ५ ॥
नय नय मतमत कल्पना मन० तजी मिथ्या उपचार ॥ मनमो० ॥
राग द्वेष जेथी टले मन० ते आचरणा धार ॥ मनमो० ॥ ६ ॥

ढाल त्रीजी.

तजी बहिरातम भावीये, मन मोहनारे लाल, अंतर आतम
मांह्यरे ॥ भवी बोहनारे लाल० ॥
परमातमपद जीनसमो, मन० जीहां उपाधि न कांयरे ॥ भवी० ॥ १ ॥
समभावे परखी ग्रहो, मनमो० जीनवाणी गुरुदेव रे ॥ भवी० ॥
वचन देव गुरु समविना, मन० मिथ्या कष्ट कुटेव रे ॥ भवी० ॥ २ ॥
ढंडी कुनयनी वासना, मन० सुनय निपुण थइ आप रे ॥ भवी० ॥
जूठो लिंग मुकी वरो, मन० अकलुष अमल प्रताप रे ॥ भवी० ॥ ३ ॥
द्रव्यानुयोग दूरे करे, मन० मिथ्या मोह अंधार रे ॥ भवी० ॥
निर्मल सम्यक् पद लही, मन० टालो राग प्रचार रे ॥ भवी० ॥ ४ ॥
आर्त्त रौद्र तजी ध्याइए, मन० धरम शुकल शुभ ध्यान रे ॥ भवी० ॥
त्रिकरण सावध्य वरजीने, मन० टाली पाप स्थान रे ॥ भवी० ॥ ५ ॥
इंद्रि विषय विकार तजीने, मन० हणीये चार कषाय रे ॥ भवी० ॥
हिंसादि अविरत तजी, मन० शुद्धोपयोग जीम पाय रे ॥ भवी० ॥ ६ ॥
विनय देवगुरु शास्त्रनो, मन० करो अंतर बाह्य अभंग रे ॥ भवी० ॥

नावो वार चउनावना, मन० लहि जीन आणारंग रे ॥ नवी० ॥ ७ ॥
इत्यादिक वहु नेदथी, मन० विधि निषेधनी चाल रे ॥ नवी० ॥
रागद्वेष टाली रहो, मन० आतम शक्ति संनाल रे ॥ नवी० ॥ ८ ॥

ढाल चोथी.

आवी चडीउं इणसमे हो राज, तुज शासन महाराज, तारक तुं मिल्यो० ॥
काल अनंत दुःखमें गम्यो, हो० जो न लही समसाज ॥ ता० ॥ १ ॥
मन मगन जीन वचनमां, हो० नमोवीर जीनराज ॥ तारक तुं० ॥
मुख शिवकारण उपदेस्यो, हो० खरुं लह्युं में आज ॥ ता० ॥ २ ॥
मिथ्यातम फेडी करे, हो० निर्मल आतमबोध ॥ तारक० ॥
गुण अनंताणंदमें, हो० जलहल केवल ज्योत, ॥ तारक० ॥ ३ ॥
धर्म तीर्थ थापी हणे, हो० रागादिक परजाव ॥ तारक० ॥
चोविसे जीनवर नमुं, हो० तुं नवजलनिधि नाव ॥ ता० ॥ ४ ॥
वंदन नमन सकल समय, हो० कीजे अवसर पाम ॥ तारक० ॥
दर्शन निर्मलता लहो, हो० सहजानंद विराम ॥ ता० ॥ ५ ॥
शिव फल देवा एहने, हो० कल्पवृक्ष सम जाण ॥ तारक० ॥
अखूट आत्म निधि राखवा, हो० चित्रावेल प्रमाण ॥ ता० ॥ ६ ॥
कामीत पुरे दुःख हरे, हो० रतन चिंतामणी सार ॥ तारक० ॥
आतम संपत्ति पामवा, हो० सकल धर्म आधार, ॥ ता० ॥ ७ ॥

॥ ॐनमः सिध्धेन्य. ॥

जे उत्कृष्ट–परम ज्योतिमां पोताना तथा परना त्रिकाल वर्त्तिना सकल पर्यायो दर्पण तलनी पेठे नासे छे, ते परमज्योति जयवंत थाउं ॥ ते परमज्योतिना प्रकाशक श्री रुषनादि चोवीश तीर्थंकर जयवंत थाउं. ॥ वली श्री जिनेश्वर देवनी वाणी

जयवंत थाउं, ॥ के जेने सेवी नव्य जीवो पूर्ण समजाव पामी सादिअनंत अव्याबाध पूर्ण आत्मिक सुखना नोगी थाय छे. वली पूर्ण परमानंदमां लीन सकल सिद्ध ते जयवंत थाउं.॥ तथा मारा धर्माचार्य जयवंत थाउं ॥ के जेणे निज आत्मिक अनुनव नावद्वारा जिन प्ररुपित श्रुत समुद्रनो पार लीधो, जेना पसायथी हुं मारी आत्म सत्ताने जाणी समजावनो कामी थयो. नव्य जीवोना मिथ्यात्वादि ताप दूर करनार श्री जिनेश्वरनां समजाव जनक अमृत सादृश वचनो परम गुरुना गुरुगमथी मने प्राप्त थयां तेनो सार स्वपरोपकारार्थे लेश मात्र दर्शाववानी मारी उमेद ते श्रीतीर्थंकर देवना अतिशय पसाये पूर्ण थाउं. ॥

तथा श्रीजीनेश्वरना अपायापगमना अतिशय पसाये समपद अन्यासी नव्य जीवोनां सकल विघ्न दूर थाउं. तथा श्री तीर्थपतिना वचनातिशय पसाये सर्वे जीवो आप आपणा प्रश्नोनी समाधानी पामो. वली श्री देवाधिदेव अरिहंतना ज्ञानातिशय पसाये आत्म स्वरुप साधनार प्राणीउंना सर्वे संशय दूर थाउं. तथा श्रीजिनेंद्रदेवना पूजा अतिशय पसाये सर्वे आत्मा आपणा परमपूज्य पदने पामो. ॥

ते समजावने अर्थे श्री तीर्थंकर देवे सर्वे आगमो प्ररुप्यां छे. ठेकाणे ठेकाणे समजावज उपादेय कह्यो छे. ते समजावमां स्थिर रहेवुं ते सामायक छे. माटे सामायकसिध्ध्युपाय नामे ग्रंथ लखवानो आरंन करुं छुं.

सामायक---ए पहेलुं चारित्र तथा नवमुं शिक्षाव्रत छे. सामायक शब्दनी व्युत्पत्ति सम+आय+इक शब्दोथी थाय छे.

१ सम—समजाव—पूरण गलनधर्मे सामान्य सर्वे पुद्गलो, तथा चैतन्य धर्मे सामान्य एवा सघला जीवो; तेमांथी एकने इष्ट अने

एकने अनिष्ट न कल्पतां मध्यस्थ वृत्तिए शुद्धात्मज्ञानमां स्थिर रहेवुं.

१ आय=इक=समज्ञानथी-थतो ज्ञान दर्शन चारित्रनो लाज ते आत्मज्ञानज छे

माटे शुद्धात्मज्ञानमांज (समज्ञानमांज) स्थिर रहेवुं ते सामायक छे.

प्रश्न–हे परमगुरु आपे जे सामायक वर्णव्युं ते सामायकनुं फल जाणवानी मारी इछा, कृपा करी पूर्ण करशोजीः–

उत्तर–हे वत्स, चित्त स्थिर करी सांजल. ठेकाणे ठेकाणे आत्मानुभवी पुरुषो सामायक (समज्ञान) नी अनहद एके अवाजे प्रशंसा करे छे. ते आगम अनुसारे हुं कहुं तुं–

गाथा–दिवसे दिवसे लख्खं, देइ सुवन्नस्स खंमियं एगो,
एगो पुण सामाइयं, करेइ न पहुप्पए तस्स.

अर्थ–कोइ पुरुष दररोज लाख खांडी सोनानुं दान आपे तो पण एक सामायकना तोले आवे नहीं.

ध्यान वृष्टे र्दया नद्याः शमपूरे प्रसर्पति ।
विकार तीर वृक्षाणां मूलाऽन्मूलनं भवेत् ॥

अर्थ–ध्यानरुपी वृष्टिथी दयारुपी नदीनुं शमता रुपी पूर प्रसरते सते तीरे उगेलां विकार रुपी वृक्षो जरु मूलथी उखडी जाय छे

वली गाथा.

सामइयं मिउकए, समणोइव सावउ हवइजह्मा ।
एएण कारणेणं, वहुसो सामाइयं कुज्जा ॥

अर्थ–सामायक वखते श्रावक साधु समान छे. माटे वहुवार (वारंवार) सामायक करवुं. तथा.

श्लोक–स्वयंभू रमण स्पर्द्धि, वर्द्धिष्णु समतारसः ।
मुनिर्येनोपमीयेत, कोऽपि नासौ चराचरे ॥

अर्थ–स्वयंभूरमण समुद्रनी होड करनार, वर्धन स्वभाववाला समता रस युक्त मुनिनी, चराचर जगत्मां कोइनी साथे सरखामणी थइ शके नहीं. तथा.

ज्ञान ध्यान तपःशील, सम्यक्त्व सहितोऽप्यहो ।
तं नाप्नोति गुणं साधुर्यं प्राप्नोति शमान्वितः ॥

अर्थ–व्यवहारज्ञान, व्यवहारध्यान, व्यवहारतप, व्यवहारशील, अने व्यवहार सम्यक्त्व वालो साधु जे गुण (लाभ) ने नपामे ते गुण (लाभ) शमभाव वालो पामे छे. वली.

श्लोक–शम सूक्त सुधासिक्तं, येषां नक्तं दिनं मनः ।
कदापि तेन दह्यन्ते, रागोरग विषोर्मिभिः ॥

अर्थ–जेनुं मन अहोरात्रि शमता बतावनार जिन प्ररुपित सुवचनामृतथी सिंचायलुं छे. ते राग रुपी सर्पना झेरनी उर्मिउंथी कदापि कलेश पामता नथी. वली.

श्लोक–गर्जद् ज्ञान गजोत्तुंगा, रंग ध्यान तुरंगमाः ।
जयन्ति मुनिराजस्य, शम साम्राज्य संपदः ॥

अर्थ–गर्जना करता ज्ञानरुपी हस्तिउं वडे अति प्रधान छे; तथा हर्षथी उल्लासित ध्यानरुपी अश्वो जेने विषे छे, एवी मुनिराजनी शमसाम्राज्यनी संपदा विजयवंत छे ॥ जेनी बराबरी जगत्नी कोइपण संपदा करी शके नही. तथा.

श्लोक–किं स्तुमः समतां साधौ या स्वार्थं प्रगुणीकृता ।
वैराणि नित्य वैराणामपि हंत्युपत स्थुषां ॥

किं दंभेन तपोभिर्वा यमैश्च नियमैश्च किं ।
एकैव समता सेव्या तरिः संसार वारिधौ ॥

अर्थ–एवा साधुनी समता–शमजावनुं शुं वखाण करियें ? जेणे पोताना आत्मानी सिद्धि करवाने समता आदरी एवा मुनि ते समता घरमां रहेता थका आ जवना तथा आगला अनेक जवना वैरजाव टाली नांखे छे, जेम नित्य पासे वसतां थकां कूतरा तथा बिलाडीनां वैर पण शमी जाय छे. कपटी वेश धारण करवायी शुं थाय ? तथा घणी तपस्यायें पण शुं थाय ? वली मौन धारी अतीतनी पेरे इंद्रीयो दमन कीधे शुं थाय ? अने व्रत धारण करे पण शुं थाय ? मात्र एक समताज–समजावज संसार समुद्र तरवामां नौका जेवी छे. तेनुंज सेवन करवुं तेज श्रेष्ट छे. तथा.

श्लोक–अर्गला नरकद्वारे, मोक्ष मार्गस्य दीपिका ।
समता गुणरत्नानां संग्रहे रोहणावनिः ॥
मोहाद्यादित नेत्राणामात्मरुपमपश्यताम् ।
दिव्यांजन शलाकेव समता दोषनाशकृत् ॥

वली–समता ते नरकने वारणे जोंगल जेवी छे, अने मोक्ष मार्गनी दीपिका छे. वली गुण रुप रत्नोने संग्रह करवामां रोहणा चल पर्वतनी जूमिका जेवी छे जेनां नेत्र मोहवडे ढंकायां छे ते पोताना रुपने जोइ शकता नथी तेने समता ते दिव्य अंजन शलाका रुप छे. अने अज्ञान पमलने छेदनारी छे. वली जुवं. वाहुवली, आहार, पाणी निद्रा विना, शीत, ताप, पाणी, मछ, मांस विगेरे अनेक जंगली प्राणीउंथी थता उपसर्ग सहता सुंदर राजजुवन तजी अघोर वनमा एकला वार महीना सुधी काउसगे रह्या पण हुं मोटो अने मारा वीजा जाइ नाना तेने केम नमुं ? एवी माने थयेली विषमताथी प्रचंम उग्र तपनुं फल

न पाम्या. अने ते विषमताने तजी परमोत्कृष्ट समभाव मित्रने आदरतां तरतज अनंत ज्ञान दर्शन चारित्र अनंत वीर्यआदि अबाधित लक्ष्मीने सहज पाम्या.

वली प्रसन्न चंद्र राजरुषिए, खामी वगरना बाह्य चारित्रने सेवता पण समभाव मित्रने विसारतां तरतज सातमी नरकनां दलीयां तैयार कीधां अने तत्क्षणज थोडीवारमां अनंत करुणा पात्र समभावने सेवतांज केवल कमलाने पाम्या.

आ संसार समुद्र. विषय कषाय रुप जले भरेला, काम तृष्णा-रुप वडवानल सहीत, जन्म जरा मरण शोक वियोग भूख तरस ठंड ताप छेदन भेदन, तथा अशरण अचानक रोग अगुप्त आदि अनेक भय रुप मछ कछप मगर आदि जल जंतुनो आवास, तथा अनेक विकल्प रुप मोजांवाळा महा भयंकर अगाध भव समुद्र जेमां एक क्षण मात्र पण शाता न मले एवा दुःख दायक समुद्रमांथी तारी, एकांतिक आत्यंतिक सहज अकृत स्वाधिन निरुपचरित निर्द्वंद्व अविचल अनंत सुखरुप शीव नगरे पहोंचाडवा एक-समभा-वज समर्थ छे. उक्तंच.

सेयंबरो, य आसंबरो य बुध्धो अ अहव अन्नोवा ।
समभाव भावि अप्पा, लहेइ मुक्कं न संदेहो ॥

वली.

प्रगट भेद विज्ञान, आपगुण परगुण जानै ।
परपरिनति परित्यागि शुद्ध अनुभौ थिति ठानै ॥
करी अनुभव अभ्यास सहज संवर परगाशै ।
आश्रव द्वार निरोध कर्मघन तिमिर विनाशै ॥
भय करी विभाव समभाव भजी, निर्विकल्प निजपद गहै।
निर्मल विशुद्ध शाश्वत सुथिर परम अतींद्रिय सुखलहै ॥

एम सर्व ठेकाणे समजावनुंज वखाण जोवामां आवे ठे. समजाव अनुपम ठे. तेने कोनी उपमा आपीए? तेनुं जेटलुं वखाण करीए तेटलुं उंचुं ठे तेनुं वर्णन करवाने कोइपण समर्थ थाय नहि. वधारे शुं कहिये? पूर्ण समजाववालाना सुखने वर्णववाने केवली जगवंतनी जीव्हा पण असामर्थ्य जजे ठे तो अन्यनी शी गणत्री?

सोरठा—समजावज एक समर्थ, अनुपम शिवसुख आपवा।
ते विण सघली व्यर्थ, व्रत तप संजमनी क्रिया॥

माटे ज्ञान ध्यान तप संयम ए सौ शमजावरुप अलंकारवकेज प्रशंसाने पामे ठे नहि तो संसारसुखने आपी संसार वधारनार होवाथी अहितकारीज कहेवाय.

अनिच्छन् कर्म वैषम्यं ब्रह्मांशेन समं जगत्।
आत्माज्ञेदेन यः पश्येदसौ शिवं गमी शमी॥

अर्थ—कर्मथी थता वैषम्यने नहि गणकारतां जगतना सर्वे जीवोने चेतन्य सत्ताए सामान्य जाणे ठे अने सर्व पुद्गलोने पूर्ण गलन धर्मे सामान्य जाणे ठे. ते इष्टानिष्ट विकल्पने तजी समजावने जजतां मोक्षगामी थाय ठे अने अतीन्द्रिय शाश्वत निष्प्रपासिक स्वाधीन निरंतर आत्मिक सुखने पामे ठे.

सामायक सिध्युपायस्य प्रथमोधिकारः संपूर्णः

श्री सामायकस्वरुपवर्णनोनामः
द्वितीयोधिकारः

पण मिथ्या सामायकने सत्य सामायक जाणनार ने माननारने पूर्वोक्त फळनी प्राप्ति थाय नहि. यथा–

श्लोकः–यतः प्रवृत्ति र्न मणौ, लभ्यते वा न तत्फलम् ।
अतात्विकी मणीज्ञप्ति, र्मणि श्रध्धाच सा यथा ॥
तथा यतो न शुध्धात्म, स्वभावावरणं भवेत् ।
फलं दोष निवृत्ति र्वा, न तद् ज्ञानं न दर्शनम् ॥

जूठा मणिने मणि जाणवाथी खरा मणिनुं ज्ञान अवराय छे. वली तेज जूठा मणिने मणिपणे निर्धार करवाथी मणिनुं दर्शन पण अवराय छे. तेथी खरा मणिनुं आचरण पण थतुं नथी तेमज मणिना लाभभोगादि पण मलता नथी. ए प्रमाणे चपल पुद्गलमां आत्म पणुं (पोतापणुं) मानवाथी अने विषयादि रोगोमां भोग मानवाथी आत्माना सर्वे स्वभाव चपल थइने आप आपणुं काम करी शकता नथी (आवरणने पामे छे.) तो खोटी मणिने खोटी जाणवाथी खरी मणिनुं ज्ञान थाय छे. तेम जे पुद्गलभावथी न्यारुं एवुं आत्म स्वरुप ते मांहेज आत्मबुद्धि थवाथी, अने पुद्गलने पर अने जरु जाणवाथी, अथवा दुःखनुं स्थानक जाणवाथी, पुद्गल संगे उपजेलो संकल्प विकल्प सर्वे नाश पामे छे. एटले सर्वे आवरण नाश पामी आत्माना केवल ज्ञानादि गुणो प्रगट थाय छे.

प्रश्न–हे भगवंत तो मने साचा सामायक तथा जूठा सामायकनुं स्वरुप कृपा करी समजावशो?

उत्तर–हे वत्स तुं विनय, विवेकसहित शांत चित्ते निर्विकल्पपणे परमोपकारी सर्वज्ञ आप्त जिनेश्वरनां अमृत समान वचनो सांभली

हृदयमां ग्रहण कर, कारणके ज्यां सुधी जेनुं चित्त दृष्टिराग, द्वेष, मूढता, कदाग्रह, विगेरेथी अशुद्ध छे त्यांसुधी तेने सद्बोधनी प्राप्ति थवी असंजाव्य छे

काव्य.

असद् ग्रावमये हि चित्ते, न क्वापि सद्भावरस प्रवेशः ।
इहांकुरश्चित्त विशुद्ध बोधः, सिध्यांत वाचां वत कोपराधः॥

अर्थ–ते कदाग्रही माणसनुं चित्त पथ्थर जेवुं छे जेम पथ्थरमां पाणी जेदे नहि तेम जिनवाणी रुप रस ते कदाग्रही माणसमां प्रवेश करे नहि. तेथी तेना चित्तरुप वृक्षमां शुद्ध बोध रुप अंकुर प्रगटे नहि.

असद्ग्रहाग्नि र्ज्वलितं यदंतः, क्व तत्र तत्व व्यवसाय वल्लिः।
प्रशांति पुष्पाणि हितोपदेशं, फलानि चान्यत्र गवेषयंतु ॥

अर्थ–जेनुं अंतःकरण अशठता पदार्थना कदाग्रह रुप अग्निवडे वलेलुं छे तेना हृदयमां तत्वव्यापाररुप वेलि केम करी ऊगे ? अने समतारुप फुल केम फुटे ? तथा हितोपदेशरुप फळ क्यांथी थाय ? ते माटे कदाग्रह तजी तत्व ग्रहण करवुं.

उपजातिवृत्तम्.

कुतर्क दात्रेण लुनाति तत्ववल्लीरसान्सिंचति दोष वृंदं ।
क्षिपत्यधः स्वाङफलं शमाख्यमसद्ग्रहः कोपि कुहुविलासः॥

जे कदाग्रही छे ते कुविचाररुप दातरडे करी तत्वरुप वेलीने छेदे छे अने पापरुप वृक्षने जल सिंचे छे तथा समतारुप अमृत फळने धूलमां नांखे छे एवो कदाग्रहरुप अमावास्यानी रात्रिनो विलास छे.

उपजातिवृत्तम्.

स्थालं स्वबुध्धिः सुगुरोश्च दातु, रुपस्थिता काचन मोदकाली ।
असद्ग्रहः कोपि गलेग्रहितस्तथापि नोक्तुं न ददाति दुष्टः ॥

शिष्यनी बुध्धिरुप थालमां सुगुरु शुध्ध ज्ञानरुप मोदक पीरसवा मांडे छे, पण कदाग्रह आवी गलुं पकडे छे, तेथी जिनवचनरुप मोदक जमी शकाता नथी. एवो कदाग्रह दुष्ट छे.

आमे घटे वारि धृतं यथा सद्विनाशयेत्तं च घटं च सद्यः ।
असद्ग्रह ग्रस्तमतेस्तथैव, श्रुतात्प्रदत्ताऽनयोर्विनाशः ॥

जेम काचा घडामां पाणी भरवाथी घडानो तेमज पाणीनो नाश थाय छे, तेमज कदाग्रही माणसने शास्त्र शीखवतां—अर्थ आपतां शास्त्रनो तेमज तेनो पोतानो बंनेनो विनाश थाय छे.

असद्ग्रहो यस्यगतो न नाशं, न दीयमानं श्रुतमस्य शस्यं।
न नाम वैकल्य कलंकितस्य प्रौढा प्रदातुं घटते नृपश्रीः ॥

जेम कोइ घेला आदमीने महोटी राज्यलक्ष्मी आपवी घटे नहि, तेम जेहनो कदाग्रह गयो नथी तेवा प्राणीने धर्मोपदेश आपवो योग्य नथी.

विद्या विवेको विनयो विशुध्धिः, सिध्धांत वात्सल्य मुदारताच ।
असद्ग्रहाद्याति विनाशमेते गुणास्तृणानीव कणाद्वान्नेः ॥

जेम अग्निथी घासनो समूह भस्मिभूत थाय छे तेम विद्या, विनय, विवेक, विशुध्धि अने सिध्धांत उपर वत्सलतापणुं अने उदारता ए सर्व कदाग्रहथी नाश पामे छे.

वली श्रीमद्यशोविजयजी कदाग्रहविषे पद कहे छेः—

राग प्रभाती.

दृष्टिरागे नवि लागीये, वली जागीये चित्ते ॥
मागीए शीख ज्ञानी तणी, हठ त्यागीये नित्ये ॥ १ ॥
जे छती दोष देखे नहि, जिहां जिहां अति रागी ॥
दोष अछता पण दाखवे, जिहांथी रुची त्यागी ॥ २ ॥
दृष्टिरागे चले चित्तथी, फेरे नेत्र विकराले ॥
पूर्व उपकार न सांभरे, पमे अधिक जंजाले ॥ ३ ॥
वीर जिन जव हुता विचरता, तव मंखलि पुत्तो ॥
जिन करी जग जने आदर्यो, इहां मोह अतिधूत्तो ॥ ४ ॥
रुक्मिनंडार रमणी तजी, त्यजी आपमति रागो ॥
दृष्टिरागे जमाली लह्यो, नवी नवजल तागो ॥ ५ ॥
वली आचार्य सावध्य जे, हुवं अनंत संसारो ॥
दृष्टीरागे समती पण थयो, महा निशीथ विचारो ॥ ६ ॥
हुए जिन धर्म आशातना, अजाण्युं कहे रंगे ॥
मंगु आगळे जीनवरे, वदीउं जगवइ अंगे ॥ ७ ॥
गामना नटने मूर्खनो, मिल्यो जेहवो जोगो ॥
दृष्टीराग मिल्यो तेहवो, कथक सेवक लोगो ॥ ८ ॥
आपण गोठडी मीठडी, हठीने मन लागे ॥
ज्ञानी गुरु वचन रळीयामणां, कटुक तीरसां वागे ॥ ९ ॥
दृष्टीरागे भ्रम उपजे, ज्ञान वधे गुणरागे ॥
एहमां एक तुमे आदरो, जलो होय जे आगे ॥ १० ॥
दृष्टीरागी कदा मत हुवो, सदा सुगुरु अनुसरजो ॥
वाचक जशविजय कहे, हितशिख मन धरजो ॥ ११ ॥

वली दृष्टीराग उपर रक्तपुरुषनी कथा.

सामंत नगरमां एक वहुधान्यक नामनो चोधरी रहेतो हतो. तेने सुंदरी अने कुरंगी नामनी वे स्त्रीउं हती. तेने कुरंगी नामक युवा स्त्री पामीने वृद्धा सुंदरीनो अन्नाव थयो. केटलाक दिवस पढी वहुधान्यके सुंदरीने कह्युं के हे नद्रे! तुं पोतानो हिस्सो लेइ पुत्र सहित वीजा घरमां जइ रहे. त्यारे ते सुशिलाए पतिनी आज्ञा प्रमाणे कवुल कर्युं. त्यार पढी ते वहुधान्यकने कुरंगी कुटीलाए पोतानी चालाकी वडे वश कर्यो. केटलाक दिवस वाद ते वहुधान्यकने राजाना हुकमथी परदेश जवानो अवसर आव्यो त्यारे ते पोतानी कुरंगी स्त्री पासे जई कहेवा लाग्यो के हे कुरंगी! हुं परदेश जाउं हुं; तुं घरमां खुशीथी रहेजे, मारे राजानी सेना साथे अवश्य जवुं पडशे. ते वचन सांनली कुरंगी कहेवा लागी के, हुं पण तमारी साथे अवश्य आवीश. तमारो विरह, अग्नि सरखो, हुं क्षणमात्र सही शकती नथी. हे स्वामी! आपना सन्मुख अग्निमां प्रवेश करी मरवुं नलुं जाणुं हुं पण विरह-रुपी शत्रूने वश थवुं नलुं जाणती नथी. हे नाथ! जेम वनमां शरण रहित हरणीने सिंह मारी नांखे छे तेम तमारा वगर मने पण वियोग मारी नाखशे. एवां कपट सहित कुरंगीनां वचन सांनली वहुधान्यक बोल्यो के हे मृगाक्षी! एवुं वोलीश नहि. स्थिर थइ घेर रहे, केमके राजा नारे व्यभिचारी छे ते तने देखतां ग्रहण करीले. ए प्रमाणे कुरंगीने समजावी धन धान्यथी नरेलुं घर तेने सोंपी ते चोधरी राजानी सेना साथे गयो. सरागीनो एवो स्वन्नाव होय छे के, स्वेछित वस्तुने पामी पढी कोइनो विश्वास करतो नथी, तेना वियोगथी मरणने पण श्रेष्ट गणी लेछे; पण जेना उपर दृष्टीराग बंधायो तेना दुर्गुणने देखी शकतो नथी. जेम नीच कूतरो कृमीजाल अने मलथी लिप्त निरस मांसने अमृत समान जाणे छे तथा सुका हाडकाने रसा-

यण समान जाणी चाटे छे तेम रक्त मूर्ख अहितकारीने हितकारी मानी लीए छे.

ते कुरंगी पोतानो पति गया पठी पोताना यारो साथे निःशंकपणे रमवा लागी, अने थोमा दिवसमां तेओने पोतानुं समस्त धन दोलत आपी खाइ खोइ पुरूं कीधुं. केटलाक दिवसे पोताना पतिनुं आववुं नजीक जाणी उत्तम पतिवृतानो ढोंग धारी रहेवा लागी वहुधान्यके पोताना गामनी जागोळे आवी एक वृक्ष तळे विश्राम कर्यो, अने पोताना नोकरने कुरंगी पासे मोकल्यो, ते नोकरे कुरंगी पासे जइ कह्युं के हे कुरंगी ! तमारा प्रिय पति आवी गया छे माटे तेमने माटे जोजन विगेरे तैयार करो. अे सांजली कुटिलाए कह्युं के ए वात सुंदरी स्त्री पासे जइ कर, केमके श्रेष्ट पुरुष होय ते पोतानो कुलक्रम ओलंघीने चाले नहि माटे सुदरी पासे ए वात कर. आखरे ते मोटी छे. माटे पहेले दिन तेने त्यांज जोजन थवुं जोईये. कुरंगीए ते माणसने आप्रमाणे समजावी मोटी स्त्री पासे मोकल्यो, तेनी साथे कुरंगी पण गई. ते जई सुंदरीने कहेवा लागी के, वेन तमारा पति आव्या छे, अेमने माटे घणी स्वादिष्ट रसोई वनावो. केमके तमे मोटां माटे पहेले दिन तमारे त्यां जमशे, ए सांजलीने सुंदरी वोली, हुं उत्तम स्वादिष्ट जोजन वनावीश; पण पतिने तारा हाथनी रसोई विना मारा तरफनुं कांईपण प्रसन्न आवे तेम जणातुं नथी. कुरंगी कहे के ते वातनी फीकर न करीश ए तो जमशे. पठी तेणे वहु प्रकारे सुंदर रसोई वनावी सज्जन पुरुष सर्वेने पोतासमान समजे छे, दुरिजन कुटीला हमेशां पोताना दोष ढुपाववानी युक्तिमां रहे छे. त्यार पठी कामथी पीडायलो एवो चोधरी कुरंगीने घेर आव्यो. तो मेघविना आकाश जेवुं अने लोक रहित नगर जेवुं पोतानुं घर तेणे देख्युं, पण कुरंगीनुं मुखकमल जोवानी आतुरतामां रह्यो तेथी पोताने चक्रवर्ती करतां पण अधिक मानी रह्यो; अने मनमां मानेछे के मारी प्रिय कुरंगी जे कार्य करे

अगर जे कार्य न करे ते सर्वे मने प्रिय छे. दृष्टिरागवालो योग्य अयोग्य न देखे, नजाणे अेमां कांई आश्चर्य नथी. तेम दृष्टिरागी जीव पोताना आत्महितने जाणतो नथी के कयुं वचन मारा आत्माने हितकारी थशे अने कयुं वचन मारा आत्माने अहितकारी छे; ते समजी शकतो नथी.जेनां नेत्र रागरुप धंतुराना रस वडे नमी गयां छे,ते पोताना स्वाधीन सुखने छोडी सुखने माटे पराधीन थाय छे, रागग्रशित जीव उतावलो मोटी आपदामां पडे छे, जेम मांसनी डली परोवेला लोहनी तिखी अणीवाला कांटामां फसाएली माछलानी जीभने ते माछलुं पोते पाछुं काढी शकतुं नथी—पण आखर मरणने पामे छे तेम दृष्टी रागवालो कुमतमां पडी शुरू न्यायनां तत्वामृत उपजावनारां वचन समजी शकतो नथी. दृष्टीरागीने देखीने सज्जन पुरुषोना मनमां करुणा अने फीकर थाय छे के अरेरे! आवां प्रत्यक्ष न्यायनां वचन अेने केम नहि समजातां होय? अने दुर्जन पुरुषो तेनी हांसी करे छे; के कोई आपदा अेवी नथी के जे ते रक्त पुरुषने न भोगववी पडे. बुध्धिवानने लायक छे के चित्तमां मृदुता करी अेकांत हठ छोडी वचनना गुण दोष जाणी लेवा. सापनुं वील जाएया पछी कोण बुध्धीवान् तेमां हाथ घालशे ? अेकांतीनुं मों सापना वील सरखुं जाणी बुध्धिवंते पक्षपात छोडी न्याय मार्गे चालवुं. पछी ते वहुधान्यक चोधरीअे कुरंगीनुं मुख जोतां जोतां रसोईघर सामुं जोयुं, तो सुना घर सरखुं मालूम पडयुं. पछी कुरंगीने कहेवा लाग्यो के हे प्रिया! मने उतावलुं भोजन कराव! त्यारे जमना दूत सरखी आंखो करी बोली के हे! दुष्ट तारा कुलक्रम प्रमाणे मोटी स्त्रीने घेर भोजन कर! एवां कुरंगीनां वचन सांभली ते मूंगो थई वेठो. दुर्निवार संताप भोगववा लाग्यो. अेवामां सुंदरीनो छोकरो आवी प्रार्थनापूर्वक बोल्यो हे पिताजी! घरे चाली भोजन करो. अेवुं सांभलतां छतां पण चिंतातुर बेसी रह्यो अेटले कुरंगी क्रोधसहित बोली आ तें शुं पाखंड मांडयुं छे ? ताहरी

वहाली स्त्रीने त्यां जई केम जोजन करतो नथी ? एवां कुरंगीनां वचन सांजली ते चोधरी सुंदरीने घेर जमवा गयो त्यां पहोंचतांज सुंदरीए परम स्नेह साथे निर्मल चित्तथी कोमल उत्तम आसन आप्युं अने पतिनी निकट अनेक पात्र मूकी सरस रसीलां जोजन पीरस्यां परंतु निर्मल शुरू जिनवाणी जेम कदाग्रहीने रुचती नथी तेम ते सुंदरीनां पीरशेलां जोजन सर्वे अस्वादिष्ट लाग्यां तेणे श्वेवुं मानी लीधुं के आ जे जे करे ठे ते सर्वे मने अनिष्ट ठे, एवा विचारथी तेने ते जोजन रुच्यां नहि कामरुपी अंधकारथी आछादित थयेला वहुधान्यके चितव्यु के चंऽमानी मूर्ति समान सुंदर रुपवाली कुरंगी केम क्रोऽीत थई मारा तरफ दृष्टी पण करती नथी ? निश्चय करी में एनी विरुऽ कंई कर्युं हशे. एवी चिंताथी जम्याविना ऊनो थयो, ते देखी सर्व कुटुंवीओश्वे कह्युं के अहींआं सर्वे मनोहर जोजन ठे, ते तमने शुं सारां लागतां नथी ? त्यारे ते वोल्यो के मने एक पण पसंद नथी मने कुरंगी पासेथी कंईपण जोजन आणी पीरशो तो हुं प्रसन्न थाउं. श्वेवां पतिनां वचन सांजली सुंदरी तरतज ऊठी कुरंगी पासे गई, ने कह्युं के स्वामी माटे सरस रुचे श्वेवु जोजन आपो कुरंगी वोली के आजे ताहारे घेर जोजन करवानुं हतुं तेथी मे कंईपण वनाव्युं नथी जो ते रक्त वुऽी मारुं आपेलुं गोवर (ठाण) खाई लेशे तो मारा समस्त कुपण पण खमी लेशे एवुं मनमां विचारी गरम गरम चावेला घऊंना दाणावालुं निंद्य पातलुं गोवर लावी मशालाथी वघारी कह्युं के हे सुंदरी ले आ शाक लई जई स्वामीने पीरश. सुंदरीश्वे जई ते गोवर वहुधान्यकने पीरश्युं के तरतज सर्वे सुंदर जोजन ठोडी वार-वार वहु प्रशंसा करतो जुडनी माफक ते गोवर जमी प्रसन्न थयो

आचार्य कहेठे के ऽष्टीरागवऽे जेनी सुऽष्टी मुऽित थइ ठे, ते अधर्मने धर्म, कुगुरुने सुगुरु, कुराचरणने सदाचरण, कुःखने सुख, कुमार्गने सुमार्ग, मानी लेठे तो वीचारो वहुधान्यक गोवरने सरस

जोजन मानी ले एमां शुं आश्चर्य ? जेनुं चित्त ऽष्टीराग, कदाग्रह जूठी हठ रुपी वज्रमय कोटथी विंटायलुं ठे, तेना चित्तमां सद्‌बोधनो केम करी प्रवेश थाय ? जेम अग्निमां कमल निपजे नहि, तपेला लोह उपर पडेलुं मेघविंडु तुरत नाश पामे, तेम सद्‌गुरुना मुख कमलथी उपजेलां अमृतमय जिन वचन कदाग्रहीना चित्तमां बीलकुल असर करी शकतां नथी. तथा पूर आवतां नदीना तीरे कोमल ठोड टकी शकता नथी तेम कदाग्रहीना चित्तमां सद्‌बोध टकतो नथी अने हमेशां कुतर्करुपी कीकाउं तेना चित्तने अतिशय क्लेशित करे ठे अने सद्‌बोधनां बीजने खाई जाय ठे तो सद्‌बोधनी वृद्धि केम थाय. अने शम सुखनी प्राप्ति केम करी थाय ? जेम घूवडने सूर्यनुं दर्शन थाय नहि तेम कदाग्रहीने सम सुख नजरे पण पडे नहि. एवा कदाग्रहीनो संसर्ग पण वर्जनीय ठे—

काव्यं.

असद् ग्रहस्थेन शमं समंतात्सौहार्दमृद्दुःखमवैति तादृग् ।
उपैति यादृक्कदली कुवृक्ष स्फुटन्नुटत्कंटक कोटी कीर्णा ॥

जेम केलनुं वृक्ष ते कंथेरादिक वृक्षने संगे कांटाये करी कोराय ठे तेम जे प्राणी कदाग्रही साथे मित्राई करे ते अंते दुःखना विपाकने पामे ठे. माटे कदाग्रहीनो संग तजी भव भयथी उद्‌विज्ञ थई, विषयादिकने असार जाणी आठ मद रहित थइ, लोकिक रीतथी पराङ्मुख तथा गुणग्राही थइ विनयपूर्वक स्वसमयमां प्रवर्त्तावनार जिनेश्वरनां वचन सांजलो. कारणके "विनयमूले पन्नत्तो धम्मो" एवुं सुत्रनुं वचन ठे. धर्मनो विनयीज धर्म पामे.—

जिनेश्वरनां सर्वे वचनो परसमयथी मूकावी स्वसमयमां आचरण करावनार ठे—

शुध्धातम अनुभव सदा, स्वसमय एह विलासरे ।
परवस्तु वांछा जेह पमे, ते परसमय निवासरे ॥

गाथा.

जीवो चरित्त दंसण, णाणठ्ठिउं तं हि ससमयं जाणं ।
पोग्गल कम्मपएसठ्ठियंच हि जाण परसमयं ॥

सम्–यथार्थपणे अने अय्–जाणवुं जवुं–माटे कषाय रहित, पोताना शुध्ध ज्ञान दर्शन चारित्रमां स्थिर रहेवुं ते स्वसमय छे तथा जे वचनोवडे स्वसमयनी प्राप्ति थाय ते पण स्वसमय छे. माटे जिनेश्वरनां वचनो स्वसमयमां स्थित करनार होवाथी मात्र तेज स्वसमय छे. ते माटे स्वसमयने रुचि सहित सांभलो ग्रहण करो. ते अर्थने सन्मुख थाउं तेना परमार्थने पूछो जाणो माटे हे वत्स हवे स्वसमय अनुसार जूठा तथा साचा सामायकनुं स्वरुप कहुं छुं ते सावधान चित्ते सांभळ

सामायकनुं स्वरुप–शम्+आय, इकः एम सामायक शब्द सिध्ध थाय छे

शम्–शमभाव–पूरण गलण धर्मे सामान्य सर्वे पुद्गलो तथा चैतन्य धर्मे सामान्य सर्वे जीवो तेमांथी एकने इष्ट अने एकने अनिष्ट न कल्पतां, मन वचन काया स्वपर जीवना द्रव्य भाव प्राणनी हिंसामां न प्रवर्तावतां निज शुध्ध ज्ञान दर्शन चारित्रमां स्थिर रहेवुं ते शब्द नये सामायक छे. ते आत्म स्वभावज छे तेज धर्म छे.–

चारित्तं खलु धम्मो, धम्मो जो सो समोत्ति णिद्दिठ्ठो ।
मोह क्खोह विहूणो, परिणामो अप्पणो सम्मो ॥

अर्थ–चारित्र तेज निश्चय धर्म छे, अने शमभाव तेज निश्चय धर्म छे, अने मोह क्षोभ रहित शुध्ध आत्म परिणाम तेज शमभाव छे.

उक्तंच नगवति सूत्रेः " आया खलु सामाइयं " पण शमनावनी अपेक्षा विना मात्र " सामाइय वय जुत्तो " आदिपाठ बोलवा अने द्रव्य प्राण नाव प्राणनी रक्षानी अपेक्षा न राखवी अने नावनी शुद्धिवीना मन वचन कायानुं आर्त्त रौद्रपणे प्रवर्तावतुं ते खरुं सामायक नथी.

द्रव्य क्षेत्र काल नाव सहीत जे वस्तु छे ते सत् छे. नाव धर्म विना वस्तु सत्य कहेवाय नहि माटे नावधर्म विना द्रव्य परंपरा ते अहितकारी, जिनेश्वरनी आज्ञाथी वहार छे. उक्तंच—

लोयाणं एस ठिइ, अजाय पजाय गयाय मजाया।
दव्व परंपर ठवणा, कुल क्कमं नेव मिल्हिस्सं ॥

मात्र लोकनी स्थिति कुलपरंपरा प्रमुख मर्यादा ते द्रव्य परंपरा स्थापना कहिये कुल परंपराथी आवेली नहि गोमीये, ए संसारनो व्यामोह जाणवो--अर्थात् पोतानी कुलक्रम मर्यादा पाले पण शुद्ध अशुद्धनी वहेंचण न करे ते लोकस्थिति द्रव्य परंपरा जाणवी.

मूढाणं ए स ठिइ, चुक्कंति जिणुत्त वयण मग्गाउं ।
हारंति बोहिलानं, आय हियं नेव जाणंति ॥

मूर्खोनी ए पूर्वोक्त स्थिति कुलक्रमागत मर्यादा जिनोकत मार्गथी चुके छे, ते आत्म हितने जाणता नथी. दुर्लन्न सद्बोधना लानने हारे छे.

दव्वपरंपर वंसो, संजम चुक्काणं सव्व जिवाणं ।
नाव परंपर धम्मो जिणंद आणाउ सुपसिध्धो ॥

अर्थ--द्रव्य परंपरा वंश एटले जे कुलने विषे जन्मे ते वंश कहीए. ते सप्तदश विध संजम भ्रष्ट सर्व जीवोने छे अने नाव परंपरा धर्म ते जिनेंद्र आज्ञाथी सारी रीते सुप्रसिद्ध छे पण वितरागनी आज्ञा-

विना द्रव्य परंपराए तप जप संजम क्रिया सर्व ठार उपर लिंपण समान नकामुं जाणवुं. माटे लौकीक द्रव्य परंपरा हेय ठे अने लोकोत्तर आवश्यकादि क्रिया आज्ञापूर्वक फलदायक ठे

गाथा.

अणुयोगदारसुत्ते, लोगुत्तर वस्सयं जिणवरेहिं ।
आणाए अणुचिन्नं, मुक्खफलं होइ भव्वाणं ॥

अर्थ--अनुयोगद्वार सूत्रमां लोकोत्तर आवश्यके वितराग देवे प्ररुप्युं ठे के--आज्ञा पूर्वक आचरेलुं अनुष्टान भव्य जीवोने मोक्षफल आपे.

गाथा.

आणाए अणुचिन्ना, वस्सय कालंमि समण संघेहिं ।
लोउत्तरीआ ठविआ, परंपरा वियरागेहिं ॥

अर्थ--आज्ञा पूर्वक श्रमण संघे आचर्यो जे व्यवहार ते लोकोत्तर स्थापना भाव परंपरा ठे एम जिनेश्वर देवे कह्युं ठे

गाथा.

जंकिंचि अणुठाणं जिणेंद आणाए बहु फलं होइ ।
जह वम तरुव्ववीयं, विठारं लहई वुढंते ॥

अर्थ--जिनेंद्र आज्ञा पूर्वक करेलुं थोडुं पण अनुष्टान बहु फल आपनारुं थाय जेम नानु पण वमनुं बीज विस्तारी शाखा प्रतिशाखा बहु फलने आपे तेम जिनेश्वरनी आज्ञा सहितनु अनुष्टान उत्तम फलने आपे

गाथा.

थोवंपि अणुठाणं, आण पहाणं करेइ पावन्नरं ।
लहुउं रवि कर पसरो, दहदिशि तिमिर पणासेइ ॥

थोकुं पण अनुष्टान आज्ञा प्रधान करेतो पापजर ते पण लघुकर्मी थाय जेम सूर्यनां किरणो पसरते छते दशे दिशानो अंधकार नाश पामे.

गाथा.

जो पूइजाइ देवो, तव्वयणं जे नरा विराहंति ।
हारंति बोहिलाभं, कुदिठि राएण अन्नाणी ॥

जे जिनवर देवने पूजे पण तेनुं वचन जे पुरुष विराधे ते पुरुष मिथ्याऽष्टी रागवरे बोधवीज सम्यक्त्व प्रते हारे. अने जे देवने पूजीए ते देवनी आणा मानीए तो सुखदायी थाय.

गाथा.

पूआ पच्चखाणं, पोसह उववास दाण सीलाइ ।
सव्वंपि अणुठाणं, निरत्थयं कणय कुसुमुव्व ॥

जिनपूजा, महाव्रत, प्रमुख मूलोत्तर गुण, पच्चख्खाण, पोसह, पर्व तिथि, अनुष्टान, ऊपवास, चऊविहार, दान, शील, ब्रह्मचर्य इत्यादिक सर्वे अनुष्टान आणा रहितने धंतुराना फूलनी पेठे निरर्थक जाणवां. जेम धंतुरानुं फूल देखीतुं शोभे छे पण अंदरथी झेर वालुं अने सुगंधी रहित तेम प्रतिक्रमणादि क्रिया जिनेश्वरनी आणा वाजु मेलीने होय तो जिन आणा रुप सुवासविना अने मिथ्यात्वादिक झेर युक्त माटे निरर्थक जाणवां. जेनी आज्ञा आराधवा ऊपर अने आज्ञा जाणवा ऊपर बुध्धि नथी तेने गाय, हरण, वृक्ष, पथ्थर, गधेडा, तरणां, कूतरा, सरखा जाणवा.

गाथा.

जेसिं न आण बुध्धि, विद्या विसाण चौरीमा सुध्धी ।
तो गोमिअ रुख पथ्थर, खरतिण सुसाइ सारीछं ॥

जे पुरुषने जीनेश्वरनी आज्ञा आराधन बुध्धि नथी ते पुरुष

अथवा स्त्रीओने गाथामां कहेला ऊभ, गाय, पथ्थरादीक जेवा जाणवा जे वीजी विद्या विज्ञान अने चतुराईवंत छे पण जिनेश्वरनी आज्ञा रहित छे ते निरर्थक छे. जिन आज्ञा तत्वार्थ विषयिक बुद्धि नथी. तेमां श्रुत ज्ञाननी चतुराई मन शुद्धीए पण गुण नथी ते जीवो कूतरा, गधेथाथी हीण जाणवा जिन आणा रहित अनुष्टान ते वंझ्या पुत्र समान अने नूमिना बिडजेवुं, आकाशना वाचका जरवा जेवुं, आंधला आगल प्रधान स्त्रीना हावजाव सरखु जाणवुं वहेराने करण जाल, तथा वहेरा आगल वीणा वगाडवी, तेम आज्ञाभ्रष्टनुं चारित्र नटनी पेठे विडवना रुप जाणवुं.

गाथा.

आणा भ्रष्टं चरणं, वेसा दासीण णेह तुल्लं ।
किंवाग फल मसारं, तत्ताय सीसाइ अं नीरं ॥

आज्ञा भ्रष्ट चारीत्र वेश्या तथा दासीना स्नेह तुल्य किपाक फलनी माफक असार अथवा तप्त लोहने स्वांति नक्षत्रना जलनी पेठे निरर्थक छे

संतोकचंद कहे छे–जीन आज्ञा विना सरवे निरर्थक छे ते आपणे जाणीऐ ठीऐ ऐविषे वधारे लखवानी शी जरुर छे ?

ऊत्तर–हजु तमे नथी जाणता के मित्रादिक चार जावनाओ हमेश अवश्य आपणे जावी जोईए के चौद राज्य लोकमां जे जीव छे ते आपणा बंधु जाणवा एटले एमांथी कोई जीव जेखधारी कुगुरुओना सपाटामां आवे नहि जाहेर पापी अने मिथ्यात्वी जीवो देखाय तेनो तो कोई जरोंसो राखतो नथी पण ऊपरथी जैननो जेख देखी जोला लोको जरुसो करे माटे चेतवुं जोईए जे लोको एवाने सेवे छे अने सारो माल खवडावे छे विनयादिक करे छे. तेज जोला लोकोने खोटी धामधुम करी जरमावी देव, चक्रवर्ती आदिना विष-

योनी लालचमां पाछी संसार समुद्रमां डुबावे छे. के जीवोतो बापडा अनादि विषयोना लालचु छेज ते भूले तेमां शो अचंबो छे?माटे एवा कुगुरुओथी दूर रहेवा माटे चेतवणी आपी छे. अने जे एवा कुगुरु-ओनी सेवा नथी करता तेने तो ए कांइ बूडावी शकता नथी. अने ज्ञानी पुरुष ऊपर मछर धरी वेगलेथी पण घणां कुफेरु खडां करे छे के जेम ज्ञानीओने हरकत पहोचे, एम छे तो पण आपणे तो गमे तेवो जीव संसार समुद्रथी तरे ते उद्यम करवो. कोइ उपर द्वेश धरवानी जरुर नथी. अने परमेश्वरनी आज्ञानो महिमा वधारवा माटे लख्युं छे. वली अन्यमती कहे छे-" आगे जीव विषय लालची तेहने जोग देखाड्या रची " एटले जे लोको विषयोने चाहे छे तेज एवानी पासे शास्त्र कथाउं सांभले छे. पण जिन आणा विनानुं जे कथन ते भव भ्रमणनो हेतु जाणवो. जिनेश्वरनी आणामां वर्त्ततां मोहादिक शत्रुउंनुं जोर चाले नहि, जीन आणारुप मंदिरमां मिथ्यात्व अने रागादि चोरटाउं प्रवेश करी शकता नथी माटे जिन आणा मांहेज रहेवुं.

वली आज्ञा रहित चारित्र केवुं छे ते कहे छे.

गय भूत कविठ फलं, पयंग रंगुव्व तहया मिग्ग तन्हा ।
विणय विहुणं रुवं, संझारागुव्व विज्जुलयं ॥

अर्थ-हाथीनुं खाधेलुं कोलुं ते असार छे तेम आज्ञा विनानुं चारित्र असार तथा पतंगना रंगनी पेरे आज्ञा रहित चारित्रने भ्रष्ट थतां वार लागे नहि. वली मृगतृष्णाजलनी पेरे साचुं देखाय, पण तृष्णा न भागे तेम आज्ञा रहित चारित्रथी परमानंद अमृतनी तृषा न भागे. विनय विना रुपनी पेठे, एटले पुरुष घणो रुपवंत होय पण विनय विना शोभा न पामे वली भादरवा महिनामां वादलांनो तरेह तरेह वार रातो पीलो संध्यानो रंग थाय छे ते क्षणेकमां नाश थइ जाय तेम आज्ञा रहित चारित्र नाश पामे छे. जेम वीजलीनो झब-कारो न रहे तेम आज्ञा रहितनुं चारित्र अस्थिर जाणवुं.

हवे आणा रहित धर्म केवो छे ते कहे छे.

नयण विहिणं सुमुहं, रसोइआ लवण भाव वाहिरियां।
निइ विणा किं रङ्ग, पिम्मं विणा ण परवंधो ॥

नयनविना सारु मुख, लवण विनानी रसोइ, नीति विनानुं राज्य अने प्रेम विनानो सवध जेम असार छे तेम आज्ञा विनानुं अनुष्टान असार जाणवुं

लछि विणा ण सुखं, सोआरविवज्जिअं च वखाणं।
पुत्तं विणा ण वंसो, तह आण विवज्जियो धम्मो ॥

लक्ष्मी विना सुख न होय, एटले धन धान्यादि लक्ष्मी विना संसारिक सुख न होय, तेम आणा रुप लक्ष्मी विना जीव धर्म करे पण मोक्ष सुख न पामे आणा वर्जितने व्याख्यान न शोभे, एटले व्याकरण, न्याय, काव्य कोपाडिक चतुराई विना व्याख्यान न शोभे. तेम आणा रुप चतुराई विना धर्म न शोभे. पुत्रविना वंश न चाले एटले पुत्रविना जेम वंश न चाले तेम जिन वचन-रुप पुत्रविना धर्म-रुपी वंश न चाले तेमज पूर्वोक्त प्रकारे जिन आज्ञा वर्जित धर्म न होय.

हवे जिन आणा रहित धर्म कयों लेखे न आवे
ते दृष्टांत सहित दृढ करे छे.

इक्कमय सुण रहिउं, दस गुणीउं तहइ कोमि माइप्पं।
तव्वीरहे किं सन्ना, लहेइ सखाइ सह मिल्लं ॥

एकमाना अंकविना जेम हजारो मीलां पण संख्याने पामे नहि, तेम जिन आणा रहित क्रिया वांछित फलने आपे नहि क्रियातो क्रियाना फलने आपे पण वांछित फलनी प्राप्ति जिन आज्ञा सहितनी क्रियाथी वने.

इक्कं जिणेंद आणा, सुन्नोवमि आइ आण रहिआइं।
वय दाण सील नाणं, न लहइ इक्कंपि तंवमयं ॥

एकमाना अंक सरखी जिन वितरागनी आज्ञा अने शून्य मीमां सरीखां व्रत, दान, शिल, ज्ञान ते एक दमडी मात्र पण मूल्य न पामे.

जो कोइ आणा रहिउं, पूआपमुहं करेइ तिक्कालं ।
तस्सवि सव्वमसुद्धं आणा बज्झं अणुठाणं ॥

जो कोई पुरुष आज्ञा, रहित त्रणे काल पूजा प्रमुख करे, तेहनुं पण सर्व क्रिया अनुष्टान, अशुद्ध जाणवुं. आज्ञा बाहिर अनुष्टानपणाथकी.

जह कोइ मिस्सदिठी, उन्नउं कालं करेइ सज्झायं ॥
नालियर दीव मणुआ, अन्ने राउन्न दोसत्तं ॥

जेम कोइक मिश्रदृष्टिनी उन्नय काल सांज, सवार प्रतिक्रमणा दिकनी क्रिया, ते नालियेर द्वीपना मनुष्यनी पेठे निष्फळ जाणवी. नालियेर द्वीपना रहेवाशी मनुष्योने नालियेर घणां मलवाथी अनाज उपर राग अथवा द्वेष होतो नथी, तेमज मिश्रदृष्टी जीवने जिनेश्वरनी आणा उपर राग अथवा द्वेष होतो नथी तो आणा ग्रहण विनानी क्रिया ते निष्फळ जाणवी.

ते मरुव मणि तुल्ला, घंटा लालुव्वककच किं तणया ।
कुक्कर चम्म रसिलो, सायं न लहेइ गुसिणस्स ॥

ते मिश्रदृष्टीवंत डमक डमक वाजती वादीगरो वगाडे छे एवा मरुक तुल्य जाणवा. उन्नय बंधितपणाथी एटले जेम मरुक मणी बे तरफ बांधेलुं होय तेम मिश्रदृष्टीने विधि अविधि वे कर्मबंध कर्त्ता थाय. वली घंटाना लोलनी पेरे एटले घंटानो लोल बे तरफ अथडाय तेम मिश्र धर्मवालो पण बे तरफ पाछो अथडाय अने चक्रधारा समान एटले जेम चक्र करवत धाराथी बेहु तरफ कपाय तेम मिश्र धर्म विधि अविधिथी बेहु तरफ कपाय. वली कुक्कर कहेतां

श्वाननी पेरे धर्म आस्वाद रसिक स्वाद सुख न पामे. एटले जेम श्वान रसनो सुख स्वाद न पामे तेम विधि अविधिए कर्यो अनुष्टान धर्म रुप रसनो स्वाद न पामे.

गाथा.

आणा खंमण कारी, जइवि तिकालं महाविभूईए ।
पूएइ वीयरायं, सव्वंपि निरत्थयं तस्स ॥

श्री वीतरागनी आज्ञाने खंमण करवावालो पुरुष जो मोटी संपदा वचे करीने त्रणे काल वीतरागनी पूजा करे तो पण ते सर्व क्रिया जेनी पूजा करे छे तेनी आज्ञा वाहिर होवाथी निरर्थक छे.

गाथा.

रन्नो आणा भंगे, इक्कुच्चिय होइ निग्गहो लोए ।
सव्वन्नु आणभंगे, अणंतसो निग्गहो होई ॥

आ लोकने विषे राजानी आज्ञानो भंग करवाथी एकज वार दंड थाय छे, परंतु सर्वज्ञनी आज्ञानो भंग करे छे ते अनंती वार बहु जन्मोने विषे छेदन, भेदन, जन्म, जरा, मरण, शोक अने मोहादि दुःखने पामे छे

गाथा.

जह तुस खंमण मयमं, मणाइ रुण्णाइ सुन्न रन्नंमि ।
विहलाई तह जाणसु, आणा रहियं अणुठ्ठाणं ॥

जेम फोतरांनुं खांडवुं, मडदाने शणगारवुं, सुना वगडामां रोवुं निष्फल छे, तेम जिन आज्ञा वगरनुं अनुष्टान पण निष्फल जाणवुं

जह भोयण मविहिकयं, विणासए विहिकयं जियावेई ।
तह अविहि कउं धम्मो, देइ भवं विहिकउं मुरुखं ॥

जेम अविधिए करेलुं जोजन शरीरनो विनाश करे छे ने विधिए करेलुं जोजन जीवाडे छे, बळ, पुष्टि, आयुष्य, कांती वधारे छे तेम अविधिए करेलो धर्म संसारने वधारे छे अने विधिए करेलो धर्म मोक्षने आपे छे.

विधि अविधिने यथार्थ जाणवा माटे पांच क्रियाउंनुं वर्णन.

श्रीपालना रासमांथी चोथा खंडमां देशनानी ढालमांथी.

विष गरल अनुष्ठान छे, तद्हेतु अमृत वलि होयरे ।
त्रिक तजवा दोय सेववा, ए पांच जेद पण जोयरे ॥ ए ॥ सं० ॥
विष किरिया ते जाणीए, जे अशनादिक उद्देशरे ।
विष ततखिण मारे यथा, तेम एहज जवफल लेशरे ॥ ते० ॥ सं० ॥
परजवे ईंजादिक रुद्धिनी, इछा करतां गरल थायरे ।
ते कालांतर फलदिये, मारे जिम हमकियो वायरे ॥ मारे० ॥ सं० ॥
लोक करे तिम जे करे, उठे बेसे संमूर्छिम प्रायरे ।
विधि विवेक जाणे नहि, ते अन्यानुष्ठान कहायरे ॥ ते० ॥ सं० ॥
तद्हेतु ते शुद्ध रागथी, विधि शुद्ध अमृत ते होयरे ।
सकल विधान जे आचरे, ते दीसे विरला कोयरे ॥ ते० ॥ सं० ॥
करण प्रीति आदर घणो, जिज्ञासा जाणनो संगरे ।
शुन्न आगम निर्विघनता, ए शुद्ध क्रियानां लिंगरे ॥ ए० ॥ सं० ॥
द्रव्यलिंग अनंतां धर्यां, करी किरिया फल नवि लद्हरे ।
शुद्ध क्रिया तो संपजे, पुद्गल आवर्त्तने अद्हरे ॥ पुद्० ॥ सं० ॥

१ आजवनी पुद्गलिक सुखनी लालचे एटले आहारादिक पामवाने अर्थे जे क्रिया करवी ते विष क्रिया छे.

२ अने परजवना इंजादिक सुखनी लालचे जे क्रिया करवी ते गरल छे.

३ अपमान टालवाने अर्थे अथवा मान वधारवा लोकना देखा-देखी करवी ते अन्यानुष्टान क्रिया जाणवी.

ए त्रणे क्रिया परमेश्वरे तजवानी कही छे अने आत्मगुणने हितकारी थाय एवी तद्हेतु तथा अमृत समान सर्वे कर्मरोगने तुरत नाश करवावाली अमृत क्रिया-ए वे क्रियाउं परमेश्वरे आदरवानी कही छे. जोला लोको सम्यक् स्वरुपने जाण्याविना साध्य शून्य क्रिया करीने अमे सुखी थइशुं एम जाणी जिनोक्त संसार तरवा रुप क्रियाने भुले छे अने शुऊ क्रिया आदरी शकता नथी वली ऊव्यलिंग अनंतां कर्यां अने क्रिया पण करी पण समकीत विना ते क्रिया होवाथी वांछीत फल पाम्यो नहि, कारणके शुऊ क्रिया समकीत पाम्या वगर थायज नहि अने शुऊ क्रिया वगर वांछीत फल पण मले नहि, माटे पहेलां तो सम्यक् रत्ननी प्राप्ति माटे सद्गुरुनां चरण कमळ सेववां अने सम्यक्त प्राप्त करी रागादिकनो नाश करी केवल ज्ञाननी प्राप्ति अर्थे जिनोक्त शुऊ क्रिया अवश्य आदरवी

सबोध सत्तरिमांथी. पा २६ गा. ४०

आणाइ तवो आणा, इ संजमो तद्दय दाणमाणाए ।
आणा रहीउं धम्मो, पलाल पुल्लूव पम्हिाई ॥

आज्ञाएज तप, आज्ञाएज चारित्र, आज्ञाएज दान करवुं, केमके आज्ञा रहित जे धर्म छे ते तृण समूहनी पेठे शोभतो नथी

माटे आणा रहित क्रिया भाव शून्य होवाथी हितकारी नथी, पण अहितकारी छे केमके एवी अशुऊ क्रियामां रोकाइ रहेवाथी शुऊ क्रिया आचरी शकतो नथी तेथी ज्ञान, दर्शन अने चारित्र ए त्रण गुण निर्मल शी-रीते थाय ?

तेमज समकीत रहित क्रिया भाव शून्य होवाथी निष्फल जाणवी.

गाथा.

सम्मत्त रयण भ्रठा, जाणंता बहु विहावि सत्ताइ ।
शुध्धाराहण रहीआ, भमंति तहेव तहेव ॥

सम्यक्त रत्न भ्रष्ट बहु प्रकारना शास्त्रने जाणतो होय तो पण शुद्ध तत्व श्रद्धान विना शुद्ध आराधना रहित माटे वारंवार संसार भ्रमण करे.

गाथा.

जे दंसणेण भ्रठा, नाणे भ्रठा चरित्त भ्रठा जे ।
ए ए भ्रठ विभ्रठा, सेसंपि जणं विणासंति ॥

जे सम्यक्ते भ्रष्ट होय ते ज्ञान, चारित्रे पण भ्रष्ट होय अने शुद्ध नये तो ज्ञान, दर्शन चारित्र ए त्रणेमांथी एक गुणे पण भ्रष्ट होय ते त्रणे गुणे भ्रष्ट जाणवो.

गाथा.

जह मूलंमि विणठे, दुमस्स परिवार नत्ती परिवुड्ढी ।
तह जिण दंसण भ्रठा, मूल विणठा ण सिझंति ॥

जेम मूल विणस्या थकी वृक्षनी शाखा प्रतिशाखा आदिनी वृध्धि न होय तेम जिन दर्शन (समकीत) मूल विना चारित्र रुपी वृक्ष मोक्ष फल आपे नहि.

गाथा.

जे विण नाण प्रमाण न होये, चारित्र तरु नवि फलियो ।
सुख निर्वाण न जे विण लहीए,समकित दर्शन बलिउंरे।भ०सि०

गाथा.

तत्रादौ सम्यक्त्वं, समुपाश्रयणीयमखिल यत्नेन ।
तस्मिन् सत्येव यतो, भवति ज्ञानं चरित्रं च ॥

सम्यक्त्व विना अगीआर अंगनुं ज्ञान पण अज्ञान कहेवाय छे. तथा महाव्रतादिक पण संजम न जाणवुं. परंतु सम्यक्त सहित थोडुं जाणवुं पण ज्ञान अने थोमो पण त्याग ते चारित्र जाणवु.

वली समकीतविना—गाथा.

दाणं वसणं लिन्हं, सीलं रंकुव्वपालणं अहलं ।
जरदाहुव्व तवाइ, झाणं डुक्के नीयाणं च ॥

समकीत विना दान ते व्यसन रुप जाणवुं अने शीयल रांक, नीखारीनी पेरे. अने तपादिक ज्वरदाह पेरे जाणवा. वली जे ध्यान ते डु.खनो निदान कष्ट रुप जाणवुं.

गाथा.

कुग्गह गह गहिआणं, सुतीव्व जत्ताय चित्त भमणुव्व ।
भमणुव्व भावणाउं, दंसण भ्रष्टेण जाणेण ॥

कुमत, कदाग्रह रुप ग्रहे ग्रहित एटले गढ ममत्व कदाग्रहमां फसेला प्राणिउंनी तीर्थयात्रा ते चित्त भ्रमण रुप जाणवी अने तेउंनी भावना ते भव भ्रमणरुप जाणवी. तेमज दर्शन भ्रष्टने पण जाणवी.

साध्य सापेक्षता विना जे क्रिया ते क्लेश मात्र जाणवी. जेम अनेक प्रजाय सहित घट द्रव्य छे अने ते माटी द्रव्यनो थाय छे अने नुवन व्ययरुप प्रजाय पलटावी पूरण पदे घट निष्पन्न करवो, एवुं ज्ञान जेने नथी अने दंड चक्रादिनी प्रवृत्ति कर्या करे तेथी अनंत काले पण घट थवानो नथी, तेम आत्मसिद्धिना अनंत प्रजायनु ज्ञान नथी अने आत्मसिद्धि कया उपादान वडे थाय छे ते जाण्या विना शरीर अने बाह्य उपकरणोथी क्रिया प्रवृत्ति करे छे एवी प्रवृत्ति अनंत काल सुधी करतां पण आत्मसिद्धि न थाय माटे साध्य सापेक्ष क्रिया सिद्धि आपे एम जाणवु. साध्य सापेक्ष ते समकीत सहित अने जिन आणा सहित छे. जिन आणा सहित तेज

समकीत सहित अने साध्य सापेक्ष सहित छे. समकीत सहित तेज साध्य सापेक्ष अने जिन आणा सहित छे.

दर्शन ते धर्मनुं मूल छे अने जे परमेश्वरनी आणा अंगिकार करे छे ते दर्शनवंत गुरु वंदनीक जाणवा. अने परमेश्वरनी आणाने जे आदरता—गणकारता नथी, स्वछंदाए स्वछंदपणे चाले छे, मार्ग चलावे छे ते वंदवा लायक अथवा संग परिचय करवा लायक नथी. तेनी साथे आलाप संलाप करतां पण पाप लागे, माटे आणा रहित भाव शून्य क्रिया करवावाला तथा करावनावाला, समकीत रहित, साध्य निरपेक्ष धामधूम चलावनार एवा अगीतार्थ, मार्गने लोपनार, उन्मार्गनी देशना देनार, मत कदाग्रह धारी, गीतार्थना द्वेषीथी दूर रहेवुं. तेउं साथे आलाप संलाप अने संग परिचय करतां पाप लागे, तो वांदवुं नमवुं अने आहारादिकनुं देवुं ते तो केम कराय ?

दंसण मूलो धम्मो, उवइठो जिणवरेहि सीसाणं ।
तं सोउण सकन्ने, दंसण हीणो न वंदिव्वो ॥

(आगम अष्टोत्तरीमांथी)

जिनेश्वर देवे धर्मनुं मूल सम्यक्त्व कह्युं छे, एवुं पोताना काने सांभलीने दर्शन रहितने वंदवुं नहीं. कारणके दर्शन हीणनुं सन्मान करतां दर्शन गुणनो नाश थाय.

पासत्थो उंसन्नो, होइ कुसीलो तहेव संसत्तो ।
अहछंदोविय ए ए, अवंदणिजा जिणमयंमि ॥

पासत्थो, उंसन्नो, संसत्तो, अहाछंदो, कुशीलीउं, एउं जिनमतने विषे अवंदणिक छे. कारणके ए रागद्वेषने वधारनारा एटले समभावने विरुद्ध तेथीज अवंदणीक कह्या माटे एवाउंनो संग तजी समभावने भजवो.

पासत्थाइ वंदमाण,–स्स नेव कित्ती न निज्जरा होई ।
जायइ कायकिलेसो, बंधो कम्मस्स आणाई ॥ (संबोध)

पूर्वे जेनां नाम वताव्यां छे एवा पासत्थादिकने वंदन करनार जनोनी कीर्ति थती नथी, तेम निर्जरा पण थती नथी, परंतु काय-क्लेश थाय छे वंदन करवाना प्रयासथी आठे प्रकारना कर्मनो बंध थाय छे अने जिनाज्ञानो भंग थाय छे.

एवा पासत्थादिकनुं दर्शन पण वर्जनिय छे.

कुसीलोसन्नपासत्थे, सवदे सवले तहा ।
दिठीएविइमे पंच, गोयमा न निरक्कए ॥ (महानिषीथ)

श्री वीरस्वामी कहे छे हे गौतम! पासत्थादि पंच कुसाधुओने नजरे पण जोइश नहि.

जह लोहसिला अप्पं,–पि वोलए तह विलग्ग पुरिसंपि ।
इय सारंभो य गुरू, परमप्पाणं च वोलेई ॥ (संबोधसत्तरि)

जेम लोहनी शिला पोते बूडे छे अने तेने वळगेला पुरुषोने पण बूडाडे छे, तेमज सारंभी परिग्रही साधुओ पोते बूडे छे अने तेना उपासकने पण भवसमुद्रमां बूडाडे छे.

पंचेएसु महापावे, जो न वज्जिज्ज गोयमा ।
संलावादीहिंकुसीलादी, भमेहिसो सुमती जहा (महानिषीथ)

हे गौतम! पासत्थादि पंच महापापीओ साथे आलाप संलाप तथा निवास करनार सुमतिनी पेठे भवभ्रमण करशे.

किइकम्मं च पसंसा, सुहसीलजणंमि कम्मबंधाय ।
जे जे पमायठाणा, ते ते उववूहिया हुंति ॥
एवं णाऊण संसग्गि, दंसणालाव संथव ।
संवासं च हियाकंखी, सव्वोवाएहिं वज्जए ॥संबोधसत्तरि॥

सुखशीलीआ भ्रष्टाचारी गुरुउनी कृतिकर्म–द्वादशावर्त्त वंदन अने प्रशंसा, पूजा करवाथी कर्मबंध थाय छे; वली प्रमादनी वृद्धि थाय छे माटे पासत्यादि कुगुरुओनो संसर्ग, दर्शन, तेमनीसाथे आलाप संलाप, तेमनी स्तुति,तेमनो सहवास,हितवांछक मुमुक्षु पुरुषे कदापि करवो नहि.

अंबस्स य निंबस्स य, दुण्हंपि समागयाइ मूलाइं ।
संसग्गेण विणट्ठो, अंबो निंबत्तणं पत्तो ॥ संबोधसत्तरि ॥

आंबानां अने लींबडानां ए बंन्नेनां मूल एकठां थयां तेमां लींबडाना संसर्गथी आंबो विनष्ट थयो अने लींबडापणाने पाम्यो, तेमज कुगुरु अज्ञानीनी सेवा तथा सहवासथी अज्ञाननी प्राप्ति थाय.

अगीयत्थ कुसीलेहिं, संगं तिविहेण वोसिरे ।
मुक्खमग्गंसिमे विग्घं, पहंमि तेणगे जहा ॥संबोधसत्तरि॥

अगीतार्थ, कुशीलीआनो संग त्रिविधे (मन वचन कायाए) करी त्यजी देवो केमके पंथमां चोरनी पेठे तेउ मोक्षमार्गमां विघ्न करनारा छे.

वरं वाही वरं मच्चू, वरं दारिद्द संगमो ।
वरं अरण्ण वासो अ, मा कुमित्ताण संगमो ॥ (संबोध)

व्याधि, मृत्यु अने दारिद्रनो संगम तेमज अरण्यमां वास ए सघलुं श्रेष्ठ छे परंतु कुमित्रनो संगम श्रेष्ठ नहि.

पक्कणकुले वसंतो, सउणीपारोवि गरहिउ होई ।
इय दंसणा सुविहिआ, मज्झि वसंता कुसीलाणं ॥संबोध॥

चंडालना कुलने विषे वसतो एवो शकुन पारख (ज्योतिषी) पण निंदनीक थाय छे; तेमज सुविहित एवा मुनी पण कुशीलीआमां वसता थका निंदनीक थाय छे.

उम्मग्ग देसणाए, चरणं नासंति जिणवरिंदाणं ।
वावन्नदंसणा खलु, न हु लप्पा तारिसं दुहुं ॥ संबोध ॥

ऊन्मार्गनी देशना देवाथी श्री जिनेश्वर भगवंतनुं कहेलुं चारित्र नाश पामे छे माटे निश्चे नाश पाम्युं छे सम्यक्त जेनुं एवा तेउंनुं देखवुं पण न थाउं.

परिवार पूअहेऊ, उसन्नाणं च आणुवित्तीए ।
चरणकरणनिगूढइ, तं डुलहं बोहिअं जाणं ॥ संबोध ॥

परिवारनी पूजाना हेतुए ऊसन्नानी अनुवृत्तिए चाले अने चरण शित्तरी करण शित्तरीने गोपवे तेने समकित डुर्लभ जाणवुं.

नवि तं केरेसि अग्गी, नेव विसं नेव किन्ह सप्पो अ ।
जं कुणइ महादोसं, तिव्वं जीवस्स मिछत्तं ॥ ॥ संबोध ॥

तीव्र मिथ्यात्व जीवनी साथे जेटलो महान् द्वेष करे छे तेटलो द्वेष नथी करतो अग्नि, नथी करतुं विष, अने नथी करतो कालो सर्प. माटे एवा मिथ्यात्वी, जिन आज्ञा रहित, साध्यनी अपेक्षा नहि राखनार, भाव शून्य क्रियाकरनार, कुसाधुउंनां टोळां ते संघ नथी.

मूल गुणेहि विमुक्कं, बहुगुणकलियंपि लद्धिसंपन्नं ।
उत्तमकुलेवि जायं, निद्धाम्मिज्जइ तयं गछं ॥ संबोध ॥

कोईपण मुनि बीजा बहु गुणे अलकृत होय, लब्धि संपन्न होय अने ऊत्तम कुलमां उत्पन्न थएला होय, तो पण मूल गुणे करीने विमुक्त होय तो तेने काढी मूके छे एवो गछ तेज गछ छे

जत्थ य अज्जा लक्खं, पम्हिग्गहमाइय विविह मुवगरणं ।
पम्हिलुंजइ साहूहिं, तं गोयम केरिसं गछं ॥ संबोधसत्तरि ॥

जे गछमां साधवीए लावेलां वस्त्र पात्रादि उपकरणो साधुउं जोगवे छे हे गौतम! ते केवो गछ ? अर्थात् कांई नहिं एवो जाणवो.

गाथा.

जहिं नत्थिसारणा वा,-रणा य पडिचोयणा य गछंमि ।
सो अ अगछो गछो, संजमकामीहि मुत्तव्वो ॥

जे गछमां सारणा, वारणा, चोयणा, पडिचोयणा, थती नथी ते गछ अगछ तुल्य छे तेथी संयमना वांछक मुनिउंए ते गछने तजी देवो.

गाथा.

सुहसीलाउं सछं-दचारिणो वेरिणो सिवपहस्स ।
आणाभ्रठाउं बहु-जणाउं मा भणह संघुत्ति ॥

(गौतम स्वामी प्रत्ये श्रीवीर भगवंत कहे छे.)

सुखशीलिया अर्थात् सुखने विषे स्थापन कर्यो छे आत्मा जेणे एवा अने स्वछंदचारी अर्थात् स्वेछा मुजव वर्त्तवा वाला तथा शिवमार्ग जे मोक्ष मार्ग तेना वैरी, तेमज जिनाज्ञाथकी भ्रष्ट एवा घणा लोको होय तो पण तेने संघ एम न कहीश.

गाथा.

एगो साहू एगा, य साहुणी सावउंवि सही वा ।
आणाजुत्तो संघो, सेसो पुण अठ्ठीसंघाउं ॥

एक साधु, एक साधवी, एक श्रावक, एक श्राविका (आ चार भेदे करीने संघ कहेवाय छे) तेमां जे जिनआज्ञाए करीने युक्त होय तेने संघ कहेवो. बाकीनाने हाडकांनो समूह कहेवो.

गाथा.

निम्मलनाणपहाणो, दंसणजुत्तो चरित्तगुणवंतो ।
तित्थयराण य पुज्जो, वुच्चइ एयारिसो संघो ॥

निर्मल ज्ञाननी छे प्रधानता जेने विषे अर्थात् निर्मल ज्ञानवान, दर्शन जे सम्यक्त्व तेणे करीने युक्त अने चारित्रना गुणे करीने अलं-

कृत एवो जे संघ छे ते तीर्थंकर भगवंतने पण पूज्य छे तेथी एवा गुणवानने संघ कहीए.

गाथा.

गच्छं तु उवेदंतो, कुव्वइ दीहंभवे विहीएउं ।
पालंतो पुण सिज्झइ, तइअ भवे भगवई सिद्धं ॥

गच्छनी अपेक्षा करे तो दीर्घ–लांबा भव करे अने विधिपूर्वक पालन करे तो त्रीजे भव सिद्धि पद पामे ए प्रमाणे श्री भगवती सूत्रमां सिद्ध पणे कह्युं छे.

गाथा.

आणाजुत्तं संघं, दट्ठुं जो मन्नएण मन्नरिउं ।
सो संजम पन्निन्नो, मिच्छादिट्ठि मुणेयव्वो ॥

आणा युक्त संघने देखीने जे प्राणी मत्सर अभिमान थकी माने नहि तेने संजम प्रतिपन्न–एटले संजमनी क्रिया करतां छतां पण मिथ्याडष्टी जाणवो जे प्राणी सिद्धांत पंचांगी प्रमाणे आणा युक्त समाचारी आदरवा वाला तेउने गछ कदाग्रह ममत्ववालो कहेके एतो पूर्वे हतो, हमणां तो गछ ममत्व परंपराए चाले ते संघ छे एवुं कहीने लोकोने भमावे अने आज्ञा युक्त संघने न माने वली तेना ऊपर मत्सर, अभिमान, द्वेश धरे ते बाह्य संजम व्यवहार आदरता छतां पण मिथ्याडष्टी जाणवा. समाचारी–एटले समाचारीनो परम रहस्यार्थ ए छे के समजावनुं विविध युक्तिए करिने आववुं थाय, ते मुख्य मतलब नहि जाणतां पोते काली धारे भूवे छे, बीजा भोला जीवोने पण भुवावे छे, माटे हे चेतना! ऊत्सूत्र बोलवुं मन वचन काया अने स्वप्ने पण तने न घटे तेमज बीजा पासे ऊत्सूत्र बोलाववुं बोलतानें भलो जाणवो ए पण मिथ्यात्वनुं लक्षण छे.

गाथा.

अमराण वंदियाणं, रुवं दठ्ठुण जेसि मणतावो ।
सो संतावो तेसिं, भवे भवे होजाणंत गुणो ॥

देवने पण वांदवा योग्य एवा साधु मुनीराजने जोइने जेना मनमां संताप थाय ते संतापथी भवो भवे अनंत गुण संतापने पामे. केमके जेणे जिनेश्वरनी आणा सन्मान करनार उपर मछर धर्यो तेणे जिन आज्ञा उपर मछर धर्यो एम जाणवुं.

सवैया इकतीसा.

कुंजरको देखि जैसे रोष करी भुंसे श्वान,
रोष करै निधन विलोकि धनवंतको ।
रेनके जगैयाको विलोकि चोर रोष करै,
मिथ्यामति रोष करै सुनत सिध्धांतको ॥
हंसको विलोकि जैसे कागमनि रोष करे,
अभिमानी रोष करै देखत महंतको ।
सुकविको देखि ज्यों कुकवि मन रोष करै,
त्यौंही दुर्जन रोष करे देखी संतको ॥

एनो अर्थ व्यवहारमां खुल्लो छे पण नीचे प्रमाणे भावथी अर्थ विचारी लेवो. जेम संजम गुणे गज समान एवा मुनिराजने देखी कूतरा एटले सूत्रथी उलटुं बकनारा कूतरानी पेठे भसनार समजवा. ज्ञानादिक धने धनवान साधु श्रावक सम्यक्तवंतने देखीने ज्ञान, दर्शनादिक धने रहित एवा मिथ्याडृष्टीउं रोष करे छे. अमथाज पोते बले छे. आत्म सत्तामांहे सचेत रहेता देखीने परधन हरवा-वाला एटले ज्ञान दर्शनादि आत्म धनने लुंटवावाला चोर पोतानो अर्थ नहि थवाथी रोष करे छे. धन, कुटुंब, शरीर विगेरेमां ममत्व

करावनारो, पोताना कल्पित हठ कदाग्रहने नहि ठोरुनारो, जिनेश्वरना सिद्धांत सांजलीने रोष करे छे. के जे कोइ जीवपरिणाम पुद्गलपरिणामनुं जेद ज्ञाने वेहेंचण करी हस पेठे स्वगुण प्रजाय रुप मुक्ताफल चुगनार, आणंद लेनार एवा जिन आणा युक्त स्वपर विवेकी पुरुषने देखी मृतक पदार्थ मांस, विष्टामां मग्न रहेनारो, जगत् जीवनी एंठ चाखनारो कागनो रोष करे छे अजिमानी एटले साध्य शून्य, वचन निरपेक्ष, क्रियाना अजिमानी, आडंबरी, समता गुणे उदासीन गुणे जरेला महंतने देखीने रोष करे छे सुकवि एटले आत्माना ज्ञानादि गुणो, मिथ्यात, अव्रत, राग, प्रमादादिके दबाएला, हणाएला, जेथी प्रगट थाय एवां वचनो तरेहवार ठंदोथी स्वसमयने वर्णवे छे एवा, जवी जीवोने धर्म हेतु करनारा एवा शासनना प्रजावक सुकवि उपर, कुकवि के जेना वचनमां असत्य वखाण छे जेवा के स्त्रीना स्तन जे मांसना गोला तेने कचनना कलश कहेवा, सलेखमादि रहेवानुं स्थान जे महोटु तेने चंडमा सरखु कहेवुं, हाडकाना दांतने दाडमनी कली जेवा कहेवा, दुर्गंधी श्रवता एवा उंटने परवालां सरखा कहेवा, अनंत वेदना उपजावनार काम रोग तेने जोग कहेवा, वहु ज्रमण करावनार चक्रवर्ति आदिनां इंद्रियजन्य रोगोने जोग कहेवा, इत्यादि विपरितता जीवो जेथी पामे एवा शृंगारादि रसना ग्रथ बांधनारा कुकवि ते उपरप्रमाणेना सुकविने जोइने रोष करे छे. विकथा ते विनाकारणे आत्माने जव ज्रमण करावनारी छे, एम जाणी हे चेतना! तारे स्वज्ञमां पण विकथामा पडवुं नहीं.

दोहा.

विन आतम जे जे कथा, निष्फल जाणो तेह ।
आत्म कथा अनुज्रव सहीत, आपे शिवपुर गेह ॥

आत्म सिवाय अथवा आत्म आराधना सिवाय जे जे कथा ते सघली विकथा जाणवी. ते द्रव्यथी चार प्रकारे (१) राज्यकथा ते अमुक राजा चक्रवर्तिनी पेठे तथा इंद्रनी पेठे सुख जोगवे छे इत्यादि. (२) देश कथा ते अमुक देशमां तरेह तरेह वारना मेवा, मिष्टान, खानपान, गणिकाउं, मणि, माणेक आदि पुष्प सुगंधी, अत्तर, दुध, मांस, मसालादिकनां सत्व, तरेह तरेहवारनां मध उंषधो विगेरे वहु सस्तां अने जोइए तेवां मली शके छे. वली लोकोनी हवेलीउं इंद्रनी इंद्रापुरी जेवी शोभती रहेली छे. घोडा हाथी विगेरे इत्यादि.

(३) स्त्री कथा—हस्तनि, चित्रनी, शंखनी, पद्मनीनां रुप, कामबल, कामकला, चतुराइ साध्यअसाध्यनी वार्ताओ.

(४) जोजन कथा—शिखंड, मोसुव, मांस, दारु आदि वखाणे के अमुक जनावरना मांसमां एवो स्वाद होय छे के एकवार चाखेतो ते स्वाद कदीए जुले नहि. वली गुण एवो होय छे के घणुं वीर्य तथा लोहीने वधारे छे पण आपणे शा कामनुं? तेमज अमुक रसोइमां यथायोग्य मशालो पडवाथी एवो स्वाद थाय छे के अमृत तेना आगळ शो माल छे? एम जक्ष तथा अजक्ष वस्तुउंना स्वाद अने गुण वर्णन करवा सुगंधादिकनुं वखाणवुं अथवा निंदवुं ते जोजन कथा जाणवी.

ए चारे विकथाओ विनामतलबे जवजमण करावनारी छे माटे सम्यक्दृष्टी जीवोए ए थकी दूर रहेवुं.

जे बंजचेरजठा, पाए पाडंति बंजयारीणं।
ते हुंति टुंटमुंटा, बोहिवि सुउल्लहा तेसिं॥ ॥ संबोध॥

जे ब्रह्मचर्य (शुद्धात्मजाव) जष्ट पुरुष ब्रह्मचर्यधारी पुरुषने पोताना पगे लगाडे छे ते लूला पांगला थाय छे अने सम्यक्त्व पामवुं पण तेने अत्यंत दुर्लज थाय छे.

कष्टं करेसि अप्पं, दमेसि अत्थं चयंसि धम्मत्थं ।
इक्कं न चयंसि मिछ–त्त विसलवं जेण बुड्ढिहसि ॥ संवोध ॥

कष्ट करे छे, आत्माने दमे छे अने धर्मने अर्थे द्रव्यने तजे छे पण जो विषलव तुल्य मिथ्यात्वने तजतो नथी तो ते सर्व निरर्थक छे कारणके मिथ्यात्वे करीने संसार समुद्रने विषे बूडे छे.

मेरुस्स सरिसवस्स य, जित्तियमित्तं तु अंतरं होई ।
दव्वत्थय भावत्थय, अंतरमिह तित्तियं नेयं ॥ संवोध ॥

मेरु पर्वतमां अने सरशवमां जेटलुं अंतर छे तेटलुं अंतर अहि द्रव्यस्तव अने भावस्तवमां जाणवु

श्लोक–तात्त्विकः पक्षपातश्च, भावशून्या चयाक्रिया ।
अनयोरंतरं ज्ञेयं, भानु खद्योत योरिव ॥ योगदृष्टि ॥

तत्व ज्ञाननो पक्ष अने आत्म भाव शून्य क्रिया, ए बेमां सूरज अने खजुआ जेटलुं आंतरुं जाणवुं, एटले ज्ञान ते सूरज समान अने क्रिया ते खजुआ समान जाणवी

उक्कोसं दव्वत्थयं, आराहिय जाइ अच्चुयं जाव ।
भावत्थएण पावइ, अंतमुहुत्तेण निव्वाणं ॥ संवोध ॥

द्रव्य स्तवनो उत्कृष्टो आराधक अच्युत नामना बारमा देवलोक सुधी जाय पण सम्यक्त्व विना संसार भ्रमण कायम रह्युं, अने भाव-स्तवे करीने अंतर्मुहूर्त्तमां निर्वाण पद पामे.

मंडुक्कचुन्नकप्पो, किइया जाणिउं कउं किलेसाणं ।
तद्दुर चुन्नकप्पो, नाण कउं त च आणाए ॥ द्रव्यगुण ॥

क्रिया क्लेशथी जे कर्म क्षय थाय ते देडकाना चुरण समान जाणवुं एटले एक देरकाथी थयेलुं चुरण फरीथी पृथ्वी पाणी योगे अनेक नवां देरका थवानुं कारण छे, तेम क्रिया कष्टथी बांधेलुं जे

पुण्य ते उदय आव्याथी मद मान विषयादि सेवी वहु पापनुं कारण थाय छे.

जंजीयम सोहिकरं, पासच्च पमत्त संजयाइणं ।
वहु एहिवि आयरियं, न तेण जीएण ववहारो ॥ आगम ॥

अर्थ–आत्म शुद्धि रहित पासथ्थादिक घणा साधुओए आचरेलो व्यवहार ते जीत व्यवहार नथी.

जं जीयं सोहीकरं, संविग्ग परायणेण दंतेणं ।
इक्केणविय आयरियं, तेणइ जीएण ववहारो ॥ आगम ॥

अर्थ–मोहादिक कर्म शत्रुने जीती अनंत चतुष्टय प्रगटतानुं कारण एक पण संविग्न गीतार्थ आचर्यो होय ते जीत व्यवहार जाणवो.

धन्नाणं विहिजोगो, विहिपक्काराहगा सया धन्ना ।
विहिवहुमाणा धन्ना, विहिपक्क अदूसगा धन्ना ॥ संवोध ॥

विधिनो योग धन्य पुरुषोने थाय छे. विधि पक्षना आराधन करनारने सदा धन्य छे. विधिनुं वहु सन्मान करनारने धन्य छे अने विधि पक्षने दूषण आपे नहि तेने पण धन्य छे. माटे अविधिए करेलुं अनुष्टान सर्वे कष्ट मात्र छे (निष्फल छे).

जं अन्नाणी कम्मं, खवेइ वहुआइं वासकोमीहिं ।
तन्नाणी तिहिंगुत्तो, खवेइ उस्सासमित्तेणं ॥ संवोध ॥

वहु क्रोडो वरसोए करी अज्ञानी जेटलां कर्मोने क्षपावे तेटलां कर्म ज्ञानी त्रण गुप्तियुक्त वर्तता एक श्वासोश्वासमां खपावे.

श्लोक–आगमं आयरंतेणं, अत्तणोहिय कंखिणा ।
तित्थनाहो गुरू धम्मो, सव्वे ते वहु मन्निया ॥ आगम ॥

अर्थ–आगमने अर्थात् आगमोक्त रहस्यने आचरता वता आत्माना हित इछक पुरुषने तीर्थनाथ, अरिहंत भगवंत, सद्गुरु अने

केवली प्ररुपित धर्म, ए सर्व बहु माननीय सत्यपणे अंगिकार करवा योग्य थाय छे.

एवा बहु माननीय सुसाधुउंनी जे निंदा करे छे ते निचे लखेला फलने पामे छे.

ुठ्ठा सुसाहु निंदा, इह परलोए विुठ्ठ दारिद्दा ।
पइ जम्मं विघ्घकरि, सुपक्का वायेण दठ्ठव्वा ॥ आगम ॥

अर्थ–जे ुठ्ठ सुसाधुनी निंदा करें ते आलोकने विषे अने परलोकने विषे दरिद्रपणुं पामे. वली ते साधुनी निंदा जन्मोजन्म विघ्नकारी थाय अने अनेक विघ्नोनी करवावाली थाय, सुपक्कनो अजाव माटे जावार्थ के जे प्राणी सुसाधुउंनी निंदा करे के ए बारे कुलनी गोचरी करे छे. वली मलिन गात्रे रहे छे. सफेत कपमां पहेरे छे पण रंगता नथी. लोक परंपरानी वात मानता नथी ने सिद्धांत परंपरा ग्रहण करे छे देव देवीनी स्तुति करता नथी इत्यादिक निंदामां प्रवर्त्ते ते प्राणी आलोक परलोकमां दरिद्र थाय अने जन्मोजन्म दान लाज जोग उपजोग अने विरजना विघ्नने पामे अने जलो पक्व तो मलेज नहीं.

ुठ्ठतणेण पिसुणतणेण, ुविियट्ठ कोह बहुलेण ।
हारंति बोहिलाभं, कीम पयंगाय जायंति ॥ आगम ॥

अर्थ–ुठ्ठ जावे करीने, पिसुनपणे चुगली करवे करीने, ुविदग्धपणे करीने, क्रोधना बोहोलपणे करीने, सम्यक्त्वना लाज प्रत्ये हारे, अने मरीने कीमा पतंगना अवतारने पामे. जावार्थ आज्ञा युक्त साधुउं उपर ुठ्ठ जाव चितवे ने तेउंनी चुगलि करे ने तेउं उपर क्रोध करे ते प्राणी कीमा पतंगीआनी गति प्रत्ये पामे.

जे पर पुठे साधुनी निंदा करे तेनां फल कहे छे.

पिट्टिमंसे रसिआ, जल सप्पिणी पमुह रुहिर सोसाय ।
वालय मिजळा किमिआ, जायंतिअ ङुन्नि गंधीछा ॥

अर्थ–पुष्ट मांस रसिक एटले पुठे दोषना बोलवावाला ते जल सर्पणी प्रमुख रुधिर सोसवावाली जलो अने वाला ने विष्टाना क्रिमीआ ङुर्गंध शरीर साथे जन्मे.

हवे साधु असाधु कोइनी पण निंदा न करवी अने करे ते एवा ङुःख प्रत्ये पामे ते कहे छे.

टूंटा मुंगा अंधा, दारिद्दा घोर ङुक्क वाहुछा ।
सूला जिन्न सरिरा, साहु असाहुण निंदाए ॥ आगम ॥

अर्थ–छता अछता दोषना नाम लइने राग द्वेष करे तेने निंदा कहीए, पण शिक्षा बुद्धिए कहीए ते निंदा न कहीए. अने राग द्वेष बुद्धिए निंदा करे ते टुंटा मुंगा आंधळा शूल जिन्न शरीर इत्यादिक पूर्वोक्त अवतार पामे.

हवे जे परने वंचे अथवा पराया अपवाद बोले ते उपर कहे छे.

पर वंचणेण रत्ता, परापवाएण अप्प संसणय ।
ताणं कत्तो बोहि, परमप्पाणया च बोलेइ ॥ आगम ॥

अर्थ–भोला जीवोने जूठो धर्म बतावीने ठगे. अने धर्मवंतना अपवाद बोले, पोतानी प्रशंसा करे ते प्राणीउंना पिंडमां सम्यक्त्व तो क्यांथीज होय? पण पोताना अने परना आत्माने संसारमां डुबाववा वाला जाणवा केमके जिन आणाथी अजाण छे.

हवे कोइना पण अवर्णवाद न बोलवा पण पांचना अपवाद अवश्य वर्जवा ते कहे छे.

ठाणंग अंगे भणियं, पंच एह मव्वणवाय बहुलेण ।
ङुल्लह बोहिय भावं, लहंति जिवाय णिच्चंपि ॥ आगम ॥

अर्थ–श्री ठाणांगने विषे कह्युं छे के पांचना अवर्णवाद बोलवा वालाने बोध पामवो दुर्लभ थाय. निश्चे करीने पांच एटले १ अरिहंत २ केवलि प्ररुप्यो धर्म, ३ सूत्र सिद्धांत, ४ चतुर्विध संघ, ५ ब्रह्मचर्य पालीने देव थया ते. ए पांचना अवर्णवाद बोलनारने सम्यक्त्व पामवुं दुर्लभ छे

ए पांचना गुणानुवाद बोलतो जीव सुलभबोधी थाय ते कहे छे.

एसिं सुवन्नवाए, जीवा पावंति सुलह बोहित्तं ।
जह मग दाहिव कण्ह, एहिं लद्धं खु सम्मत्तं ॥ आगम ॥

अर्थ–पूर्वोक्त पांचेना सुवर्णवाद बोलवे करीने जीव सुलभ बोधने पामे. जेम श्रेणीक राजा तथा श्रीकृष्णवासुदेव क्षायक समकीत वीगेरे पाम्या श्रीमहावीर स्वामी तथा नेमनाथ स्वामीना गुणानुवाद वंदन पुजन करीने सम्यक्तने पाम्या तिर्थंकर गोत्र बांध्युं पण

आगम मायरणाणं, सच्चुवएसे कहा सुरसिआणं ।
जे गारवं करंते, सम्मत्त विवज्जिआहुंति ॥ आगम ॥

आगम प्रमाणे आचरण करता प्रत्ये, वली सत्य उपदेशना रसिकजनो प्रत्ये जे गर्व करे छे, ते समकीत रहीत होय.

नइ देहं वंदिज्जइ, न जाइ कुल रुववण रुवंच ।
गुण हीणं को वंदे, समणं वा सावयं वावि ॥ आगम ॥

शरीर कांइ वंदवा लायक नथी कारणके प्राणी मात्रने देह शरीर छे, जाती वंदवा लायक नथी कारणके राजाने पण जाती छे अने सर्वने जाती होय छे, कुल पण वदवा लायक नथी केमके पिता पक्ष सर्वेने छे, रुप पण वंदवा लायक नथी कारण के सर्वे जीवोमां पुन्यप्रकृतिए रुप लाधे छे, पण देहादिके सहित, आत्मगुणे हीनने कोण मूर्ख वंदे? नाम साधु नाम श्रावकने जाती तो छे अने कुल पण छे, देह पण छे,

तथा रुप पण छे, पण आत्मगुण हीन देह, जाती, कुल, रुप, ऊत्तम पण होय एटले पुन्य प्रकृतिवालुं होय पण आत्मगुणे रहित ते वंदवा लायक नथी. पण आत्मगुणे सहित तेज वांदवा लायक छे. साधु, श्रावक, समकिती, अेवां नाम देहनां नथी पण आत्मगुणनां छे. देहादिक ऊपर साधु श्रावकनी कल्पना करवी ते जूठी छे. गुणाधिकने वांदवा एवुं आगम मांहे कह्युं छे तेथी जे न्युन गुणवालो होय ते अधिक गुण वालाने वंदे.

चंदण पवक पणुल्लिय, परिमल रसिआ वरेवि चंदणया
चंपक कुसुम सुगंधिया, तिल्लाउं होइ चंपिल्लो ॥ आगम ॥

चंदन वृक्षना पवने करी प्रेर्या परिमल रसिक ते वरे वीजा लींबादिक चंदन थाय, चंपाना फुलनी सुगंधे करीने तेल, चंपेल, नामने पामे छे, तेम आणायुक्त सुपुरुपनी संगते सुपुरुषपणुं प्राप्त थाय पण मिथ्यात हग्राहिओनी सोवते मिथ्यात्वनीज पुष्टी थाय माटे जिन आणाने नजवी.

असुइठाणे पमीआ, चंपकमाला न कीरइ सीसे ।
पासत्थाई ठाणे, सुवट्टमाणो तह अपुज्जे ॥ संबोधसत्तरि ॥

अशुची स्थानके पमेली चंपाना फुलनी मालाने कोइ मस्तके नहीं चमावे तेम पासत्थादिकना साथे रहेतो भलो साधु पण अपूज्य जाणवो.

मियमद गंधे लसणं, न चाइयइ विअप्पणो गंधं ।
रविकर पसरंतेहिं, अंधत्तं होइ उलूआणं ॥ आगम ॥

अर्थ—कस्तुरीनुं खातरकरी लसण वावे तोपण लसण पोतानी दुष्ट गंधने न मुके, अने सूर्यनां किरणो पसरे छते पण घूवड न देखे तेमज सद्गुरुना ऊपदेशथी कदाग्रही पुरुष पोताना मिथ्यातने न मुके.

समयायार भ्रष्टाणं, जाणंता लज्ज गारव भ्रएणं ।
तेसिंपि नहि बोहिं, पावं अणुमोअमाणाणं ॥ आगम ॥

जैन सिद्धांतना आचारथी भ्रष्ट वेषधारीने, लाज मान आदिना भयथी पण जे जोजनादि आपे, सन्मान करे, ते प्राणीने बोध बीज नथी केमके अशुद्ध आचारीनी क्रिया पाप रुप छे. ते पापने अनुमोदतो, सन्मान करतो, सम्यक्त रत्नने हारे.

उक्तंचः आचारांग सूत्रे. आठमा अध्ययने

से वेमि समणुन्नस्सं वा असमणुन्नस्सं वा असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा वत्थं वा पडिग्गहं वा कवलं वा पाय पुंछणं वा णोपाएज्जा णोनिमंतेज्जा णोकुज्जावेयावडियंपरं आढायमाणेत्ति वेमि ॥

हुं कहुंतुं के स्वमति पासत्था प्रमुख अथवा परमति सांख्यादि असयतिने, जोजन पाणी अथवा खादिम स्वादिम वस्त्र पात्र कंबल पायपुछण विगेरे आपवां नहि अगर आपवा माटे निमंत्रण करवुं नहि अथवा तेउनी वैयावच्च करवी नहीं. केमके ऊन्मार्गनी पुष्टी थाय छे.

जे केवि धम्मसीला, संजम तव नियम जोग जुत्ताय ।
ताणं दोस भणंता, भगा भगत्तणंविंति ॥ आगम ॥

धर्मी शीलवंत संयमी तथा तप जोग नेम युक्त पुरुषोने जे दोषवंत कहे छे ते पोते भ्रष्ट थएलो छे तथा बीजाने भ्रष्ट कहे छे.

श्लोक-कत्थ अम्हारिसा पाणी, दूसमा दोसदूसिआ ।
हा अणाहा कहंहुता, न हुंतो जइ जिणागमो ॥ संबोध ॥

हा! खेद थाय छे के दूषम कालना दोषे करीने दूषित एवा अमो अनाथनी जो जिनागम न होत तो शी दशा थात?

जिण वयणं उसहमिणं, विसयसुह विरेअणं आणन्निभूयं।
जरमरण वाहि हरणं, खयकरणं सव्व दुःखाणं ॥ आगम ॥

जिन वचनरुप उंसड ते विषयना विकाररुप कल्पित सुख महा व्याधि तेनुं विरेचन एटले रेच सरखुं छे. प्रतिहत् शक्तिवंत जरा मरण रुप व्याधि हरवा वालुं तथा सरवे दुःखनुं क्षय करवा वालुं छे.

जिणवयणं उसहेणं, कंखा वाहि न फिट्टए जेसिं।
अमियंवि सुव्वतिसिं, अणंतसो लहइ मरणाइ ॥

जिनेश्वरनां वचन सांभलीने पण एटले जीन वचनरुप उंषधे करीने पण कंखारुपी व्याधि (अन्य दर्शननो, मिथ्या दर्शननो अभिलाष) न मटे तेने अमृत पण विषनी पेरे परिणमे अने अनंता मरणादि कने पामे.

लप्पइ सुरसामित्तं, लप्पइ पहुअत्तणं न संदेहो।
एगं नवरि न लप्पइ, उल्लह रयणं च सम्मत्तं ॥

इंद्रपणुं मले, अने प्रभुता पण मले, ऐश्वर्यता, ठकुराइ पणुं पामवुं ए सरवे सुलभ छे पण चिंतामणि रत्न समान एक सम्यक्त पामवुं अति दुर्लभ छे.

द्वितीयोऽधिकारः संपूर्णः

तृतिय सामायक साधनाधिकार.

श्री अरिहंतादि पंच परमेष्ठी, जे समभावना स्थानक छे तथा पूर्ण समभावने प्राप्त होवाथी समभावनो साधनमां पुष्ट निमित्त छे तेउने समभावनी प्राप्ति, स्थिरता निमित्त नमस्कार करु छुं, अर्थात् मारा परिणामने समभाव सन्मुख वाळुं छुं, वाळवानो उद्यम करुं छुं. केवा छे ते पंचपरमेष्टी—

णट्ठ चउ घाइकम्मो, दंसण सुह णाण वीरियमइउं ।
सुहं देहत्थो अप्पा, सुद्धो अरिहो विचिंतिज्जो ॥

जेणे पूर्ण समभाव आदरी चार घातियां कर्मनो नाश कर्यो छे. तथा अनंत ज्ञान, अनंत दर्शन, अनंत सुख तथा अनंत वीर्य, प्रगट कर्यां छे. वली जे अढार दोषथी मुक्त थया छे

णट्ठछकम्मदेहो, लोयालोयस्स जाणवो दट्ठा ।
पुरिसायारो अप्पा, सिद्धो ज्झाएह लोयसिहरत्थो ॥

जेणे घाति अघाति आठ कर्मनो नाश कर्यो छे, जे देह रहित छे, वली लोकालोकना ज्ञाता द्रष्टा छे. त्रैलोक्य शिखरे वसनार शुद्धात्मा ते सिद्ध परमेष्टीने नमस्कार करुं छुं.

दंसण णाण पहाणे, वीरिय चारित्त वर तवायारे ।
अप्पं परं च जुञ्जइ, सो आयरिउं मुणी ज्झेउं ॥

ज्ञान आचार, दर्शनाचार, चारित्राचार, तपाचार तथा वीर्याचार ए-पंचाचारमां पोते प्रवर्त्ते छे, अने बीजाउने प्रवर्त्तावे छे ते आचार्य-मुनिने नमस्कार करुं छुं

जो रयणत्तयजुत्तो, णिच्चं धम्मोवएसणे णिरदो ।
सो उवझाउं अप्पा, जदिवर वसहो णमो तस्स ॥

जे रत्नत्रय युक्त निरंतर धर्मोपदेश करे छे. एवा शुद्धात्मा उपाध्यायने नमस्कार करुं छुं.

दंसण णाण समग्गं, मग्गं मोक्कस्स जो हु चारित्तं ।
साधयदि णिच्च सुद्धं, साहू स मुणी णमो तस्स ॥

मोक्षना कारण सम्यक् ज्ञान दर्शन चारित्रने निरंतर साधनारा शुद्धात्मभावस्थित साधु मुनिराजने नमस्कार करुं छुं.

ससरीरेवि निरीहा, बज्झाब्भिंतर परिग्गह विमुक्का ।
धम्मोवगरणमित्तं, धरंति चारित्तरक्कठा ॥
पंचिंदियदमणपरा, जिणुत्तसिद्धंत गहिय परमत्था ।
पंचसमिया तिगुत्ता, सरणं महएरिसा गुरुणो॥संबोधसत्तरि॥

पोताना शरीरने विषे पण इछा विनाना, बाह्य अने अभ्यंतर परिग्रहथी विमुक्त थएला, चारित्रनी रक्षाने अर्थेज मात्र धर्मोपकरणने धारण करनारा, पांच इंद्रियोने दमन करवामां तत्पर, जिनोक्त सिद्धां तथी ग्रहण कर्यो छे परमार्थ जेणे, पांच समितिए समिता अने त्रण गुप्तिए गुप्ता एवा गुरु महाराजनुं मने शरण थाउं.

वली सकल संपूर्ण अविनाशी सुखनिधान मोक्ष मार्ग जोवा माटे त्रणे लोकमां एकज नेत्ररुप, तथा सकल नयोथी प्रकाशित जन्मांध पुरुषोना हस्तिविधान, एकांत मतना विरोधने मथनार, अनेकांत-स्याद्वादयुक्त आत्मबोध दातार, समभावना कारण वीतराग प्रणित परमागमने नमस्कार करुं छुं.

जो के अनेक भंग नय युक्त जिनशासन पुरमां प्रवेश करवो अति दुष्कर छे, तो पण प्रवचन भक्तिये प्रेरीत, पंच-

परमेष्टी तथा परमागमनुं शरण ग्रही सामायकनुं किंचित् व्याख्यान मारी अल्पमति अनुसारे स्वपर हितार्थे करुं छुं.

सामायक-ए पहेलुं चारित्र तथा नवमुं शिक्षाव्रत छे.

व्यवहार निश्चयौ यः, प्रबुध्य तत्त्वेन भवति मध्यस्थः ।
प्राप्नोति देशनायाः, स एव फलमविकलं शिष्यः ॥

जे पुरुष व्यवहार तथा निश्चयने वस्तु स्वरुपद्वारा यथार्थ जाणीने कोइ पण नयनी उपेक्षा नहि करतां माध्यस्थ भावे रहे छे ते शिष्य उपदेशना संपूर्ण फलने पामे छे. तेनेज अर्थनी सिद्धि थाय छे पण जे व्यवहार, निश्चयनी अपेक्षा वगरनो, निश्चयथी तुटो पडतो छे, ते व्यवहार नय नथी पण नयाभास छे.

वली जेथी कार्य प्रगट थतुं नथी ते कारण नथी. जिनेश्वरना मतमां कारण कार्यने समयभेद नथी वली जेमांथी भाव प्रगट थतो नथी ते द्रव्य नथी

सामायक-ए पहेलुं चारित्र छे तेनुं स्वरुप.

चारित्रं भवति यतः, समस्त सावद्य योगपरिहरणात् ।
सकल कषायविमुक्तं, विशदमुदासीनमात्मरुपं तत् ॥

सकल कषाय रहित समस्त सावद्य योग परिहरी सर्व जीवोना द्रव्य भाव प्राणनी रक्षायुक्त परपदार्थोथी विरक्तरुप शुद्ध ज्ञान, दर्शनमां स्थिर रहेवुं ते चारित्र आत्म स्वरुपज छे, तेज धर्म छे. उक्तंच (दशवैकालिके

श्लोक-धम्मो मगल मुक्किट्ठं, अहिंसा संजमो तवो ।
देवावि तं नमंसंति, जस्स धम्मे सयामणो ॥

धर्म ते उत्कृष्ट मंगल छे. ते धर्म अहिंसा संजम अने तपमय छे. अहिंसा एटले द्रव्य अने भावथी छकाय जीवना स्वपर प्राणने न्हणे

अंशे धर्म जाणवो एम चोथा गुणठाणाथी मांडी चौदमा गुणठाणाना चरम समय पर्यंत पूर्ण अंशे आत्म धर्म प्रगट थाय. परमसमाधि रुप सिद्ध स्थानकने वरे.

सामायक—एटले आत्माना ज्ञान दर्शन चरण गुणो पुद्गल संगे विषमताने पामेला तेने सम थीरथोन करवा. द्रव्य अने नावप्राण हाणीमां मन वचन कायाना जोगोने न प्रेरवा. राग द्वेश विना शुद्धातम नावमां स्थीर रहेवुं.

करेमि नंते सामाइयं, सावज्जं जोगं पच्चरकामि
जाव जीवं पज्जुवासामि, तिविहं तिविहेणं
मणेणं, वायाए, काएणं, नकरेमि, न कारवेमि
सव्वं करंतंपि अन्नं न समणुजाणामि, तस्स नंते
पम्हिक्कमामि, निंदामि, गरिहामि, अप्पाणं वोसिरामि ॥

अर्थ—करुं बुं हे नगवंत ! समनाव रुपी सामायक व्रत. मन वचन कायाना जोगो जीवता सुधी सावद्य व्यापारथी रोकुं बुं. त्रिविधे—एटले मनथी वचनथी कायाथी सावद्य व्यापार न करुं, न करावुं, अने कर्त्तानें अनुमिति न आपुं. अने पूर्वे मन वचन कायाना जोगो सावद्य व्यापारमां प्रवर्त्ताव्या तेने सावद्य व्यापारथी निवर्त्तावुं, पूर्वे सावद्य व्यापार आदर्यो तेने निंदु बुं. गरिहामि के० गुरु समीपे विशेषे निंदु बुं. के हवे सावद्यमां जोगो नहीं प्रवर्त्तावुं. अशुद्ध आत्म नावने बोलुं बुं. साधुने तो ए प्रमाणे जावजीव समनावमां वर्त्तवुं अने श्रावक देशव्रती छे. माटे नीचे प्रमाणे सामायक उचरे.

करेमि नंते सामाइयं सावज्जं जोगं पच्चरकामि, जाव नियमं पज्जुवासामि दुविहं तिविहेणं मणेणं वायाए काएणं नकरेमि नकारवेमि तस्स नंते पम्हिक्कमामि

निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि ॥

जगवंत हुं करुं हुं समतारुप सामायक. सावद्य योग एटले द्रव्य जाव हिसारुप मन वचन कायानो व्यापार तेनो त्याग करुं हुं. ज्यां सुधी वे घडी प्रमुख नियम ठे त्यांसुधी अंगिकार करीश त्रिविहेणं कहेतां सावद्य व्यापार करुं नहि, करावुं नहि. तिविहेणं कहेतां मन वचन कायाथी तस्स कहेतां पूर्वे सावद्य व्यापार कर्यो ठे ते सावद्य प्रवृत्तिथी जोगने पाठा वाली आत्म स्वजावमां स्थिर करवुं निदामि कहेतां जोगना सावद्य व्यापारने गुरु साखे निंदु हुं. गरिहामि कहेतां जोगने हवे सावद्य व्यापारमां न प्रवर्त्तावुं, अने अप्पाणं वोसिरामि कहेतां अशुद्ध आत्म जावने ठांरुं हुं. एवी रीते धारेला नियम प्रमाणे मन वचन कायाना जोग सावद्य व्यापारमां नहि प्रवर्त्तावतां जावथी सम परिणामे रहेवुं ते वत्रीश दोष टाली सामायिक सूत्रमां कह्या प्रमाणे जावत् सामाश्य वयजुत्तोना पाठसुधी निरवद्य स्थिर परिणामे प्रवर्त्तवुं. ते वत्रीश दोषनां नाम मनना दश–वचनना दश–कायाना वार मनना दश दोष ते निचे प्रमाणे.

१ अविवेक दोष–सामायकनुं स्वरुप नहि जाणवाथी मनमां एवो विचार करे के आथी शुं फल थवानुं हतुं ? आथी ते कोण तर्युं हशे ? एवा विकल्पनुं नाम अविवेक नामा दोष.

२ यशो वांछा–पोते सामायक करीए तेथी बीजा मनुष्यो मारी प्रशंसा करे एवा परिणामे करवुं ते यशो वांछा दोष

३ धन वांछा–धननी इछाए करवुं ते धन वांछा दोष.

४ गर्वदोष–मने लोक धर्मी कहे ठे अने हुं सामायक पण तेवुंज करुं हुं एवो अध्यवसाय ते गर्व दोष

५ जय दोष–हुं श्रावक कुलमां जन्म्यो हुं, मने लोको मोटा

तरीके माने छे अने जो सामायक नहि करुं तो कहेशे के आटली क्रिया पण नथी करतो एम निंदाना भयथी सामायक करे ते भयदोष.

६ निदान दोष--सामायक करीने तेना फलथी धन, स्त्री, पुत्रादिक मलवानुं इछे ते निदान दोष.

७ संशय दोष--सामायकनुं फल हशे के नहि होय एवो विकल्प करे ते संशय दोष.

८ कषाय दोष--सामायक क्रोधादिकथी करवा बेसी जाय किंवा पाछो क्रोध मान माया लोभमां वृत्ति धरे ते कषाय दोष.

९ अविनय दोष--विनय वगर सामायक करे ते अविनय दोष.

१० अबहुमान दोष--भक्तिभाव अने उमंग पूर्वक सामायक न करे ते अबहुमान दोष.

वचनना दश दोष.

१ कुबोल दोष--सामायकमां कुवचन बोलवुं ते कुबोल दोष.

२ सहसात्कार दोष--सामायकमां साहसथी अविचार पूर्वक बोलवुं.

३ असद्आरोपण दोष--बीजाए खोटा बोधादिक आपवा ते.

४ निरपेक्ष दोष--सामायकमां शास्त्रनी दरकार सिवाय एटले जिन आणा सिवाय कंइ पण बोलवुं ते निरपेक्ष दोष.

५ संक्षेप दोष--सूत्रना पाठ इत्यादि टुंकामां बोलीने वेठनी पेठे यथार्थ उच्चार करे नहि ते संक्षेप दोष.

६ क्लेश दोष--कोइथी कंकाश करे ते क्लेश दोष.

७ विकथा दोष--स्त्रि आदिक चार के सात प्रकारनी विकथा मांडी बेशे ते विकथा दोष. अथवा पुद्गल कथा रसे आत्म परिणाम सम परिणति चूके ने विभावनो कामनावंत थाय.

८ हास्य दोष–सामायकमां कोइनी हांसी मश्करी करे ते हास्य दोष.

९ अशुध्ध दोष–सामायकमां सूत्रपाठ न्यूनाधिक अने अशुध्ध बोले ते अशुध्ध दोष.

१० मुणमुण दोष–गडबड गोटाथी सामायकना सूत्रपाठ बोले जे पोते पण पुरुं समजी शके नहि तो बीजाने क्यांथी समजाय ? ते मुणमुण दोष

कायाना वार दोष.

१ अयोग्यासन दोष–सामायकमां पग उपर पग चकावीने बेसे ते श्री गुरु आदि प्रत्ये अविनय रुप आसन.

२ चलासन दोष–डगडगते आसने बेसी सामायक करे ते; किंवा वारंवार ज्यांथी उठवुं पडे तेवे आसने बेसे ते चलासन दोष

३ चलदृष्टी दोष–कायोत्सर्गमां आंखो चंचल राखे ते.

४ सावद्यक्रिया दोष–सामायकमां कांइ पापक्रिया के तेनी संज्ञा करवी ते.

५ आलंबन दोष–भींतादिके उंघींगण देइ बेसे तेथी भींते बेठेला जंतुनो नाश थाय के तेने पीडा थाय तेमज पोताने प्रमादनी प्रवृत्ति थाय ते आलंबन दोष.

६ आकुंचन प्रसारण दोष–हाथ पग सकोची लांबा करे ए आदि ते आकुचन प्रसारण दोष

७ आलस दोष–अंग मरडे टचाका वगाडे ए आदि ते आलस दोष

८ मोडन दोष–आंगली वगेरे वांकी करी टचाका वगाडे ते मोडन दोष.

९ मल दोष--घरना घरड करी सामायकमां चेल करी मेल खंखेरे ते.

१० विमासण दोष--गलामां हाथ नांखी बेसे इत्यादि ते विमासण दोष.

११ निद्रा दोष--सामायकमां ऊंघवुं ते निद्रा दोष.

१२ वस्त्र संकोचण दोष--सामायकमां टाढ प्रमुखनी जितीथी वस्त्रथी शरीर संकोचे ते वस्त्र संकोचण दोष.

आ बत्रीश दोष रहित सामायक करवुं. आ बत्रीश दोष टाल्या विना जे सामायक करे छे ते सामायकना फलने पामतो नथी. वली पंच अतिचार टालीने सामायक करवुं.

हवे मुहुपत्तीना पचास बोल.

(१) सूत्र अर्थ तत्व साचो करी सद्दहु (२) समकीत मोहनि (३) मिश्र मोहनि (४) मिथ्यात्व मोहनि परिहरुं (५) कामराग (६) स्नेहराग (७) दृष्टीराग परिहरुं (८) सुदेव (९) सुगुरु (१०) सुधर्म आदरुं (११) कुदेव (१२) कुगुरु (१३) कुधर्म परिहरुं (१४) ज्ञान (१५) दर्शन (१६) चारित्र आदरुं (१९) ज्ञान, दर्शन, चारित्र विराधना परिहरुं (२२) मनगुप्ति, वचनगुप्ति, कायगुप्ति, आदरुं, (२५) मनदंड, वचनदंड, कायदंड परिहरुं (३१) हास्य, रति, अरति, भय, शोक, दुगंछा परिहरुं (३४) कृष्ण लेस्या, नीललेस्या, कापोतलेस्या परिहरुं (३७) रसगारव, रिद्धिगारव, शातागारव परिहरुं (४०) मायाशल्य, नियाण शल्य, मिथ्यात्वशल्य परिहरुं (४४) क्रोध, मान, माया, लोभ परिहरुं (५०) पृथ्वीकाय, अप्काय, तेऊकाय, वायुकाय, वनस्पति काय, त्रसकायनी रक्षा करुं.

ए उपर कहेला बोलमांहेथी केटलाक बोलो स्त्रीउने उभा कहेवा

पके छे. ते जे तजवाना कह्या ते द्रव्य नावथी तजवा अने जे आदरवाना कह्या ते द्रव्य नावथी आदरवा.

एम समजाव रुप आत्मनाव सन्मुख थइ द्रव्य प्रवृत्ति करवी. ते द्रव्य सामायक जाणवुं पूर्ण समजाव वारमे गुणठाणे शुक्लध्याननना बीजा पाया एकत्ववितर्कमां छे ते तुरत केवल ज्ञान दर्शन रुप लाजने आपे छे. पण चोथे गुणठाणेथी सिद्धसमान पोताना आत्मानी सत्ता जाणीने सिद्धसमान पोताना स्वरुपने नावतो एटले परजीव तथा पर पुद्गलादि द्रव्यमां शुनाशुन अने इष्टानिष्ट संकल्प तजी राग द्वेश विना पोताना शुद्धात्मनावमां परिणति स्थीर रहेवानो अन्यास करतां जेटलो जेटलो समजाव स्थीरता वधति जाय तेटलो तेटलो ज्ञान दर्शनादि आत्मगुणनो लाज थतो जाय तेने सम अने आय कहिये. अने आत्मनाव एटले एकलो निर्मल आत्मनावज रहे माटे सामायक कहेवुं. पूर्ण सामायक पूर्ण गुणने प्रगट करे ते तो यथाख्यात चारित्र जाणवुं. माटे अवसर पामी प्रमाद छोडी जेम वने तेम सर्वे उद्यमे समजाव करवो.

समजाव करवानो अनिलाषी थइ समजाव करवा मांमे त्यांथी सामायक कहीए

उक्तंच नगवइ अंगे.

चलमाणे चलिए जाव णिज्जरिज्जमाणेणिज्जिणे॥इत्यादिपाठवेा॥

एटले ज्यांथी समजाव करवा मांड्यो त्यांथी सामायक कहिए. सिद्ध समान आत्मसत्ता जाणी सिद्ध परमात्मानी पेठे समजावे रहेवानो अन्यास करवो. ए रुडे प्रकारे जिन आणा अगर नवतत्व, षट् द्रव्यादिक, जे पदार्थ आगममां कह्या तेने द्रव्य, क्षेत्र, काल, नावथी अने नामादि चार निक्षेपेथी हेय, ज्ञेय, उपादेय सहित, संशय, विभ्रम, विमोह रहित, जाणी सद्दहतां जे जीव सम्यक्त

पामेलो तेज यथार्थ सामायकना लाभने लेइ शके, पण रमत अथवा वेष भजवतां सामायकनो लाभ मळी शकतो नथी माटे जिन आणाए वस्तु तत्वनो निर्धार करी समभावे वर्त्तवानो अभ्यास करवो. आत्मानी सत्ता सूत्रमां सिद्धसमान कही छे, यतः अप्पा सो परमप्पा—संशय—एटले जीवादिक पदार्थो कह्या तेम छे के नहि एवी जे शंका ते संशय.

विभ्रम—एटले अशुद्ध निश्चय करवो जेम जीवमां अजीवपणानो निश्चय, पुद्गलादिक अजीवमां जीवपणानो निश्चय, ते विभ्रम—अथवा कांइनुं कांइ समजी असत्य निर्धार करवुं तेने विभ्रम कहीए—विमोह एटले—जीवके अजीव कंइ जाणतो नथी अने जाणवानो अभिलाष पण नथी ते विमोह कहीए तेथी मिथ्यादृष्टी शुद्धात्म भावनो कामी थइ सामायकना लाभने लेइ शकतो नथी.

एकता ज्ञान निश्चय दया, सद्गुरु तेहने भाखे ।
निर्विकल्प उपयोगमां, निज प्राणने राखे ॥ (आत्म)

हुं ज्ञान छुं, मारा स्वरुपमां भासता ज्ञेय रुप षद्द्रव्य, पर पदार्थोथी मने कांइ प्रयोजन नथी, ए उपयोगे परसंबंधे रागादि परिणामे बंधाएली आत्म परिणति पर संबंध छोडी पोताना स्वरुपथी तन्मय करी, सर्वे संकल्प छोडीने निर्विकल्प भावे स्थिरथोज स्वरुप अभेदे तन्मयताए राखे संकल्प विकल्प परिणामे हणाता आत्मवीर्य ज्ञानादि प्राणने निर्विकल्प परिणामे एटले निर्विकल्प उपयोगे बचावे ते निश्चय दया कहीए. माटे अहिंसा समभावनेज दया कही जिनशासनमां समभाव एज मुख्य साध्य छे.

देशी सुरती महिनानी.

बहु भेदे पण जेह अभेदी आत्म स्वभाव ।
मिथ्या रागादिक परयोगे, प्रगट्यो सघलो विषम विभाव॥

आत्मामां ज्ञान, दर्शन, चारित्र, दान, सुख, वीर्य, लाज्ञादि वहु गुणो ठे अने जूदा जूदा कार्यो करे ठे, माटे जेद स्वज्ञाव कहीए. पण ए सर्वे गुणो आत्माथी जूदा नथी (अजिन्न) माटे अजेद स्वज्ञाव कहीए.

मिथ्या ऽष्टिथी पुद्गलमां हुं अने मारापणानी बुद्धि तथा विषयादि रोगोमां सुख बुद्धि अने देव गुरु धर्ममां विपरित बुद्धि—एटले खरा देव नहि तेने देव जाणवा, जे गुरु नहि तेने गुरु जाणवा, जे धर्म नहि तेने धर्म जाणवो, जो के सर्वेजीवो चैतन्य लक्षणे करी सामान्य ठे ठतां तेमांथी एकने इष्ट अने एकने अनिष्ट कल्पवो ए शुज्ञाशुज्ञ कल्पनाथी राग ऊपजतां आत्माना ज्ञान दर्शन चारित्रादि सर्वे गुण विकारी थया

ज्ञानादिक थइ विषम विकारी, निजनिज कार्यकरे नवि शुद्धा
ऽव्यनी परिणति अक्षय त्रिकाले, तेथी गुण थया कार्य विरुद्धा॥

एम आकरा विकारने पामीने ज्ञानादिक सर्वे गुणो पोतपोताना शुद्ध कार्यो करी शके नहि अने ऽव्यनी परिणति त्रिकाले अखंड (अविनाशी,) होवाथी मूल स्वज्ञाव ठोडे नहि. पण विकारने लीधे शुद्ध कार्यने वदले उलटा (विपरीत) कार्य करवा लाग्या. ज्ञान अज्ञान रुपे, दर्शन अदर्शन रुपे, चारित्र पराचरण रुपे, एम सर्वे गुणो आवरण वाला थया.

निज निज शुद्ध परणति वियोगे, न लही स्वतंत्री आत्मशक्ति।
समज्ञावे शुद्ध परणति योगे, रमतां प्रगटे पुरण व्यक्ति ॥

पोतानी शुद्ध परिणतिना वियोगथी आत्माए पोतानी परिणतिने स्वतंत्र जाणी नहीं, अने जोगवी नहीं पण ज्यारे पुद्गल उपरनो शुज्ञाशुज्ञ संकल्प मटाडी स्थिर परिणामी थइ आत्म स्वरुपमां

पोतानुं लक्ष रमावे (समन्नावमां रहे) तो आत्मानी (पोतानी) सर्वे शक्ति दबाएली ते स्वतंत्र प्रगट थाय.

तेह सम इक आतमन्नाव छे, न्नाष्यो न्नगवइ श्री जिनन्नाण।
कर्म कलंक टाली न्नवी लहीए, तेथी पूर्ण पद निर्वाण ॥

पुद्गलना रागथी आत्माना सर्वे गुणो विकारी थया ते रागरूपी मेल जवाथी शुद्ध थीर थाय एक आत्मन्नावज रहे तेनेज सूर्यसमान श्रीवीर न्नगवाने न्नगवती सूत्रमां सामायक प्रकाश्युं छे (कह्युं छे) एथीज (एज सामायकथीज) ज्ञानावर्णादिक कर्म कलंक टालीने संपूर्णपणे आत्म गुणनी निर्मलताने पामीए एटले निर्वाण पदने पामीए माटे हे न्नव्य जीवो एवुं सामायक अवश्य आदरवुं.

ज्ञानादिक निजगुण आतमना, सत्ता जोतां दीसे शुद्ध।
परन्नाने परन्नोगे रींझी, रागादिक करी जोग अशुद्ध ॥

आत्माना ज्ञानादिक सर्वे गुणो सत्ता जोतां शुद्धज छे पण रागादिके परन्नामां परन्नोगमां रींझी मन वचन कायाना सर्वे जोग अशुद्ध थया.

तेहिज समन्नावे सुख प्रगटे, श्रीजिन वाणी सुधारस पाय।
एम त्रय योग समन्नावथी जाणो, ज्ञानादिक केवल प्रगटाय॥

अने जे विषम न्नावथी थएली ऊपाधि समन्नावथीज मटे अने सुख थाय. जिनेश्वरनी वाणीरुप अमृत पीवाथी मिथ्यात्वनो विकार दूर थइ मन वचन कायाना जोग समन्नावे थइ ज्ञानादिक आत्मगुण निर्मल थाय.

जिन शासननुं सार एह छे, ए विण जूठुं सर्व मफाण।
संजम शीलने ज्ञान ध्यान पण, ए विण कहिए सवि अप्रमाण॥

समन्नाव एज जिन शासननो सार छे, समन्नाव विना सर्वे क्रिया

धामधुम मात्र छे, संजम, शील, ज्ञान, ध्यान समजाव विना होयज नहीं अने अंतरंग समजाव विना वहारनी क्रिया करीने ज्ञान ध्यानादि खरां मानवां ए अप्रमाण छे.

सामायक पुद्गलमें नांही, पर द्रव्ये पर सत्ता मान ।
चपल विषमता रहित आतमनो, केवल भाव सामायक जाण॥

बहु परमाणु संयोगी पुद्गलमां वर्ण गंधादिके पूरावा गलवानी शक्ति होय पण समजाव रुप स्थिर आत्म धर्म होय नहीं. मान एटले पुद्गलनो एज प्रमेय धर्म छे पुद्गल परिणामनी चपलता अने रागद्वेष रुप विषमता रहित आत्मानो केवल स्थिर समजाव तेज सामायक

विषम वेग टाली समजावे, वरते ते संवेगी जाण ।
पीला रातामां नहीं समसुख, एतो पुद्गल हेय प्रमाण ॥

पुद्गलमां शुभाशुभ कल्पनानो संकल्प ते विषम वेगे वलगेलुं चित्त तेने पाछुं वाली समजावे स्थिर करे ते सवेगी छे पण पीला राता कपडामां संवेगीपणुं नथी. माटे पुद्गल भावतो हेय एटले छांडवानोज कह्यो छे.

मोहमणिधर विषम विषने, हरवा सुरमणि सम ए जाण ।
ज्ञानादिक गुण अखूट खजानो, राखण चित्रावेल प्रधान॥
सुरतरु सम शिवफलनो दायक, मिथ्या तम टाले सम भाण।
कामगवी पुण काम कुंभ सम, कामित पूरण सुख निदान॥

सामायक ए मोहरुपी मणिधरना आकरा विषने नाश करवाने सुरमणि समान छे ज्ञानादि गुणनो अखूट खजानो राखवाने चित्रावेल समान, मोक्षरुप फळ आपवाने कल्पवृक्ष समान छे, मिथ्यात्वरुप अंधकारने टालवा (नाश करवा) सूर्य समान अने सिद्धि रुप कामना पूर्ण करवाने कामधेनु समान छे अने अक्षय सुखनुं मूल छे.

आतम वीर्य हीणता टाली, करत लोहने कंचन वान ।
एह रसायन जाणे अनुभवी, जिम रोहणगिरि रयणनी खाण॥

अर्थ—आत्मा अनादि कालथी पररुचिरुप खोटो आहार सेवतां हीनवीर्य थयेलो तेने परम पुष्ट करवाने सामायक ए रसायण समान छे. अने लोहरुप आत्म स्वभाव मलिन थयेलो ते मलिनता टालवाने माटे सामायक रसायण समान छे. एवा रसायण रुप सामायकने अनुभवीज (समकीती) जाणे छे. वली जेम रोहणाचल पर्वत रत्ननी खाण छे तेम सामायक ज्ञान दर्शन चारित्र रुपी रत्ननी खाण छे.

ज्ञान विज्ञान भंडार एहतो, समपदमां नवि रहे अनाण ।
दर्शन चरणने निर्मल संवर, शुद्ध निर्जरा मोक्षनुं स्थान ॥

अर्थ—वली सामायक ए ज्ञान विज्ञाननो भंडार छे. अने एहमां अज्ञान रही शकतुं नथी. दर्शन, चारित्र, अने निर्मल संवर, तथा निर्जरा, तथा मोक्षनुं स्थानक, ते समभावज जाणवो.

जीव तणो गुण एहने जाणो, पुद्गल परणति ते किम होय ।
पुण्य पापने बंध नहि ए, विरला जाणे समपद सोय ॥

अर्थ—समभाव ते जीवनोज गुण छे. ते पुद्गल परिणति केम होय ? समभावमां पुण्य पापरुप बंध परिणति थाय नहीं. एवा समपदने जाणनार विरलाज होय.

काम मदन मर्दन मल्लि जिन, तीर्थ गेर तीरथ फलसार ।
इम समभाव करो सामायक, भविजन सफल करो अवतार॥

अर्थ—श्रीमल्लि जिनेश्वरे जेम काममदने मर्दन कर्यो, तेम समभाव काममदने नाश करनार छे. तीर्थनुं गेर अने तीर्थनुं फल ते समभावज छे. माटे समभाव रुप सामायक करीने भव्य जीवो अवतार सफल करो.

मनसुखे समजावे रमतां, आतम धर्म सकल प्रगटाय ।
अरिहंतादिक पद पण लहिए, कर्म रिपु जीती शिव पाय ॥

अर्थ-मनमां सुखे करी समजावे रमीए तो आत्म धर्म सर्व प्रगट थाय अने अरिहंतादिक नवपद पण समजावथीज थाय अने कर्म रुपी शत्रुनो नाश करी शिव कमला वरीए

रागद्वेष त्यागान्निखिल द्रव्येषु साम्यमवलम्ब्य ।
तत्त्वोपलब्धिमूलं बहुशः सामायिकं कार्यम् ॥

अर्थ-रागद्वेषने त्यागी समस्त इष्टानिष्ट पदार्थमां समजाव आदरी वारंवार आत्म तत्त्वनी प्राप्तिनुं मूल कारण जे सामायक ते आचरवु जोइए

सामायिकाश्रितानां समस्त सावद्ययोग परिहारात् ।
भवति महाव्रतमेषा मुदयेऽपि चरित्र मोहस्य ॥

अर्थ-समस्त सावद्ययोगना परिहारथी सामायिक आश्रित जीव श्रावक व्रतां पण साधु समान जाणवो.

सव्वाउंवि नईउं, कमेण जह सायरंमि निवडंति ।
तह भगवई अहिंसि, सव्वे धम्मा समिल्लंति ॥

अर्थ-जेम सर्वे नदीउं समुद्रमां आवी मले छे तेम सर्वे धर्म भगवत् प्रणित अहिसामां आवी समाय छे. अने सामायिक पण समस्त जीवोना द्रव्य भाव प्राणनी हिसा न करतां शुद्धात्म भावमां स्थिर थई समभाव युक्त रहेतां थाय छे माटे समजावमां सर्वे धर्म समाय छे

द्रव्यभाव प्राणनुं स्वरुप तथा तेनी रक्षाना उपाय जिन आगम अनुसारे कहुं छं

तिक्काले चउपाणा, इंदिय बलमाउ आणपाणाय ।
ववहारा सो जीवो, णिच्चयणयदोउ चेदणा जस्स (द्रव्य संग्रह)

संसारी जीवो सदाकाळ इंद्रिय, बल, आयु अने श्वासोश्वास ए चार द्रव्यप्राण सहित होय छे. ते चार प्राणना उत्तर भेद दश होय छे.

इंद्रिय—स्पर्श इंद्रिय, रसेंद्रिय, घ्राणइंद्रिय, चक्षुइंद्रिय, श्रोत्रइंद्रिय.

बल—कायबल, वचनबल, मनोबल.

एम इंद्रियना पांच, बलना त्रण, आयुनो एक, श्वासोश्वासनो एक एम दश भेद थाय.

कोइ पण जीवना ए दश प्राणमांथी एकने पण कषाय वश थई वध बंध छेदन तामन अतिभारे खानपानना निरोधादिके करी पोते न दुखाववो, बीजा पासे न दुखावाववो, दुखावताने नहीं अनुमोदवो.

भाव प्राण नीचे प्रमाणे जाणवा.

ज्ञान चेतना १, दर्शन चेतना २, सुख (चारित्र स्वभाव रमण, स्थिर समाधि निवृत्तिरुप,) चेतना ३, वीर्य चेतना ४, आदि ज्ञानादि गुणना स्वभाव पर्याय ते सर्व भाव प्राण जाणवा. वली कर्त्ता, भोक्ता, ग्राहकता, व्यापकता, रक्षणता आदि अनंत पर्याय ए सर्व भाव प्राण जाणवा. ते स्वपर जीवना भावप्राणनी यत्ना, संजम, रक्षणता, ते दया जाणवी. अने कोइ पण जीवना भाव प्राणनी अयत्ना हाणी करवी ते हिंसा जाणवी. [illegible] रक्षा तथा हिंसानां अनेक कारण छे ते समासथी अहिंआं [illegible] मात्र दर्शावीए छिये.

यत्खलुकषाययोग[illegible]नां द्रव्यभाव रूपाणाम् ।
व्यपरोपणस्य क[illegible]सुनिश्चिता भवति सा हिंसा ॥

निश्चय करीने [illegible]हित मन वचन कायाना योगे करी द्रव्य भाव प्राणनी हाणी करवी ते निश्चय हिंसा छे.

आत्म परिणाम हिंसन हेतुत्वात्सर्वमेव हिंसैतत् ।
अनृत वचनादि केवल मुदाहृतं शिष्य वोधाय ॥

आत्माना शुद्धोपयोग रुप परिणाम जे वमे घताय (हणाय) छे ते सर्वे हिसाज छे. अनृत वचनादिक जेद मात्र शिष्यने समजवा माटे कह्या छे

व्युत्थानावस्थायां रागादीनां वश प्रवृत्तायाम् ।
म्रियतां जीवो मा वा धावत्यग्रे ध्रुवं हिंसा ॥

रागादि प्रमाद वशे शुद्धोपयोग विना अयत्नाचारे प्रवृत्ति करतां जीव मरो अगर न मरो पण हिंसा तो आगलज दोमे छे

यस्मात्सकषायः सन् हन्त्यात्मा प्रथममात्मनात्मानम् ।
पश्चाज्जायेत न वा हिंसा प्राण्यन्तराणां तु ॥

केमके जे वखत जीवे रागादि कषाय आदयों ते वखत पोताना भाव प्राणनी हाणीतो थई चूकीज अने तेज स्वपर द्रव्य प्राणनी हाणीनुं कारण छे परंपराए द्रव्य भाव बन्ने प्रकारे हाणी छे माटे वर्त्तमाने द्रव्य प्राणनी हाणी थाउं अगर न थाउं पण एने तो हिंसानो अनुबंध थई चूकयो

यदिदं प्रमाद योगादसदभिधानं विधीयते किमपि ।
तदनृतमपि विज्ञेयं तद्भेदाः सन्ति चत्वारः ॥

प्रमाद कषायना वशथी स्वपर जीवने वर्त्तमाने अगर आगामी काले अनंतरे अगर परंपराए जे अहितनुं वचन होय ते अनृत एटले अलिक वचन जाणवुं ते अलिक वचनना चार भेद छे.

स्वक्षेत्र कालभावैः सदपि हि यस्मिन्निषिध्यते वस्तु ।
तत्प्रथममसत्यं स्यान्नास्ति यथा देवदत्तोऽत्र ॥

जे वस्तु द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव सहित छती छे तेने अछती कहेवी ते पेहेला प्रकारनुं अलिक छे जेम देवदत्त अहिंआं नथी.

असदपि हि वस्तुरूपं यत्र परक्षेत्र काल भावैस्तैः ।
उद्भाव्यते द्वितीयं तदनृतमस्मिन् यथास्ति घटः ॥

जे वस्तु द्रव्य क्षेत्र काल भावथी अछती छे तेने छती कहेवी ते बीजो भेद; जेम घट नथी छतां घट छे एम कहेवुं.

वस्तु सदपि स्वरूपात् पररूपेणान्निधीयते यस्मिन् ।
अनृतमिदं च तृतीयं विज्ञेयं गौरिति यथाश्वः ॥

पोताना स्वचतुष्टय विद्यमान वस्तुने पररुप कहेवी ते त्रीजा प्रकारनुं असत्य; जेम वलदने घोडो कहेवो.

गर्हितमवद्य संयुतमप्रियमपि भवति वचन रूपं यत् ।
सामान्येन त्रेधा मतमिदमनृतं तुरीयं तु ॥

सामान्य रीते चोथा असत्यना गर्हित (१) सावद्य (२) अप्रिय (३) एम त्रण भेद छे.

गर्हित--चाडी चुगली हास्य कठोर मिथ्या अज्ञान पूर्वक, प्रलाप तथा उत्सूत्ररुप गर्हित वचन छे.

सावद्य--छेदन, भेदन, मारण, शोषण, अथवा व्यापार चोर्यादिनां वचन ते सावद्य वचन छे.

अप्रिय--अरति, भय, खेद, वैर, शोक, कलह, आदि करवावालां वचन ते अप्रिय वचन छे.

सर्वस्मिन्नप्यस्मिन्प्रमत्तयोगैकहेतुकथनं यत् ।
अनृत वचनेऽपि तस्मान्नियतं हिंसा समवतरति ॥

अर्थ--असत्य वचन प्रमाद योगे उपजे छे माटे असत्य वचनमां निरंतर हिंसा जाणवी.

अवितीर्णस्य ग्रहणं, परिग्रहस्य प्रमत्त योगाद्यत् ।
तत्प्रत्येयं स्तेयं, सैव च हिंसा वधस्य हेतुत्वात् ॥

अर्थ-प्रमाद कषाय योगे मालीकना विना आपे पारकी वस्तु लेवी ते चोरी छे ते चोरी बंधना हेतुथी हिंसा जाणवी. कोइनुं मूकेलुं अथवा पडेलुं अथवा भूलेलुं कंइ पण लेवुं ते चोरी छे.

यद्वेदरागयोगान्मैथुनमभिधीयते तदब्रह्म ।
अवतरति तत्र हिंसा वधस्य सर्वत्र सद्भावात् ॥

अर्थ-वेदना रागरुप योगथी स्त्री पुरुषोनो सहवास ते अब्रह्म छे ते अब्रह्ममां प्राणीवध होवाथी हिंसा छे.

हिस्यन्ते तिलनाल्यां तप्तयासि विनिहिते तिलायद्वत् ।
बहवो जीवा योनौ हिंस्यन्ते मैथुने तद्वत् ॥

अर्थ-जेवीरीते तलथी भरेली नलीमां तपेलुं लोहनुं सलीज घालवाथी तल नष्ट थाय छे, तेम मैथुनवडे योनी स्थानमां बहु जीवो हणाय छे

यदपि क्रियते किञ्चिन्मदनोद्रेकादनङ्ग रमणादि ।
तत्रापि भवति हिंसा रागाद्युत्पत्ति तंत्रत्वात् ॥

अर्थ-मैथुनमां राग थवाथकी मैथुनना अंग शिवाय अन्य अंगमां जे रमण त्यां रागनी उत्पत्ति ते मुख्य भाव प्राणनी हिंसा थइ चूकी. वीर्यादिकमां संमूर्च्छिम जीवनी उत्पत्ति थाय ते हणाय तेथी द्रव्य प्राणनी हिंसा छे.

या मूर्छानामेय विज्ञातव्यः परिग्रहो ह्येषः ।
मोहोदयादुदीर्णो मूर्छा तु ममत्व परिणाम. ॥

अर्थ-पर द्रव्यमां मूर्छा तेज निश्चय परिग्रह छे. अने मोहना उदयथी परद्रव्यमां ममत्व परिणाम ते मूर्छा छे.

मूर्छा लक्षण करणात् सुघटा व्याप्तिः परिग्रहत्वस्य ।
सग्रन्थो मूर्छावान् विनापि किल शेष संगेभ्यः ॥

परिग्रहत्वनुं मूर्छा लक्षण छे. तेथी बाह्य संग परिग्रहथी रहित पण मूर्छावान होय तो तेने परिग्रहीज जाणवो.

यद्वत्पङ्काधारमपि, पङ्कजं नोपलिप्यते तेन ।
धर्मोपकरण धृतवपुरपि साधुरलेपकस्तद्वत् (प्रशमरतिः)

जेम कादवने आधारे रहेतां छतां कमल कादवथी लेपातुं नथी, तेम धर्मोपकरणने धारतां मुनि मूर्छा रहित होवाथी अपरिग्रही छे.

सवैया इकतीसा.

जैसे फीटकरी लोध हरमेकी पुट बीना श्वेत वस्त्र मारीये मजीठ रंग नीरमें. । नींज्यो रहै चीरकाल सर्वथा न होइ लाल भेदे नहीं अंतर सुफेती रहे चीरमें ॥ तैसे समकीतवंत रागद्वेष मोह बीनु रहे नीशी वासर परिग्रहकी नीरमें; ॥ पूरव कर्म हरे नूतन न बंध करै जाचे न जगत सुख राचै न शरीरमें: ॥ समयसारे ॥

अतिसंक्षेपाद्विविधः सग्रन्थेवाऽभ्यन्तरश्च बाह्यश्च ।
प्रथमश्चतुर्दशविधो भवति द्विविधो द्वितीयस्तु ॥ पुरु० सि० ६०

ते परिग्रहना संक्षेपथी बाह्य अने अभ्यंतर बे भेद छे, तथा अभ्यंतर परिग्रहना चौद, अने बाह्य परिग्रहना बे भेद छे.

मिथ्यात्ववेदरागास्तथैव हास्यादयश्च षण्नोषा ।
चत्वारश्च कषायाश्चतुर्दशाभ्यन्तरा ग्रन्थाः ॥ पुरुषार्थ ॥

मिथ्यात्व, क्रोध, मान, माया, लोभ, हास्य, रति, अरति, भय, शोक, दुगंछा, पुरुषवेदराग, स्त्रीवेदराग, नपुंसकवेदराग, ए चौद अभ्यंतर परिग्रह छे.

अथ निश्चित्त सचित्तौ वाह्यस्य परिग्रहस्य नेदौद्वौ ।
नैषः कदापि सङ्गः सर्वोऽप्यतिवर्त्तते हिंसा ॥ पुरुषार्थ ॥

वाह्य परिग्रहना अचित्त (धन, वस्तु, रुपुं, सोनुं, आदि) तथा सचित्त (द्विपद-दास, दासी, स्त्री, तथा चतुष्पद-एटले गाय, घोमा, जेंस प्रमुख) एम वे जेद छे.

ए समस्त वाह्य अभ्यंतर परिग्रह द्रव्य, जाव, हिंसानां कारण छे, माटे तेनो त्याग करवो.

ए पांचे अव्रत हिसानां कारण छे माटे सम्यक् प्रकारे वस्तु स्वरुप जाणी पंच अव्रतथी विरत्त थइ शुद्धात्म जावमां स्थिर थवुं-सम-जाव सहित वर्त्तवुं.

आत्माना सर्वे जेद स्वजाव रागद्वेपना विकारथी विविध विकारी थाय छे. ते विविध प्रकारे समजाव करवानां अनुष्ठानो आदरी सम-जाव करवो. ते विशेषे लखीए छिये. सर्वे द्रव्य पोताना द्रव्य, क्षेत्र, काल, जावथी अस्तिपणे छे, परना द्रव्य, क्षेत्र, काल, जावथी नास्तिपणे छे. जे आत्मा अरुपी ज्ञाननो पुंज द्रव्यथी पोते एकज, क्षेत्रथी असंख्यात प्रदेशी, कालथी स्वगुण वर्त्तनावंत, अने जावथी ज्ञानादिक गुणो सहित छे. एम पोताना द्रव्यादिक चारथी आत्मा अस्ति पणे छे, अने पुद्गल वर्ण, गंध, रस, स्पर्शादि गुण पर्यायनो पुंज परमाणुं पणे एकज द्रव्य छे. अथवा द्विप्रदेशी, त्रण प्रदेशी, आदि अनंत प्रदेशी सुधी स्कंध द्रव्य एकत्वपणे एक, अने क्षेत्रथी परमाणुपणे, अने द्विप्रदेशी यावत् अनंत प्रदेशी सुधी, कालथी वर्ण, गंध, संस्थानादि प्रवर्त्तनपणे, अने जावथी पूरण गलन पणे छे, एम पुद्गल पण पोताना द्रव्यादिके अस्ति पणे छे. एम सर्व द्रव्य, क्षेत्र, काल जाव पणे अस्तिपणे छे, कोइ काले कोइ द्रव्यनो द्रव्य, क्षेत्र, काल, जाव, बीजामां जाय नहि, अने बीजानो तेमां

आवे नहि माटे नास्तिपणो छे. एटले जीव द्रव्यमां पुद्गल द्रव्य नास्तिपणे छे. एटले जीव द्रव्य पुद्गल द्रव्यादिके अछता छे त्रिकाले पुद्गल द्रव्यादिक रुपे न थवानो स्वभाव जीव द्रव्यना द्रव्यादिमां अस्तित्वपणे रहेलो छे; एम इत्यादिक सप्त भंगे विचारतां मारुं स्वरुप शुद्ध सिद्ध परमात्मा समान छे. तो हुं पुद्गल वर्गणाथी उपजेला मन वचन कायाना जोगमां व्यापी अन्य पुद्गलोमां तथा शरीर धारी अन्य जीवोमां रागद्वेषनी प्रवृत्ति केम करुं?

अस्ति नास्ति स्वभाव समजवा माटे उदाहरण.

१ जेम आंबो द्रव्य पोते एकत्व पिंडपणे द्रव्यथी छतो छे ते स्वद्रव्ये अस्ति.

२ अने लिंबडाना द्रव्यरुपे त्रिकाले पण थाय नहीं ए परद्रव्ये नास्ति स्वभाव जाणवो.

हवे क्षेत्रथी आंबानी शाखा प्रतिशाखा पत्रपुष्प फलादि स्वक्षेत्रे विस्तारपणे अस्ति छे. अन्य वृक्षादि विस्तारपणे नथी.

आंबो स्वकाले फळ आपे पण अन्य वृक्षादि काले फळे नहि तेथी स्वकाले अस्ति परकाले नास्ति.

आंबो पोताना वर्ण गंध रस स्पर्श आदि स्वभावे अस्ति, लिंबादि परवर्ण गंध रस स्पर्श स्वभावे नास्ति.

३ ए अस्ति तथा नास्ति स्वभाव समकाले सर्वे द्रव्यमां छता होय माटे स्याद् अस्ति नास्ति त्रीजो भांगो.

४ वस्तुमां अनंता धर्म समकाले छता छे ते सर्वे धर्म एकज वचने उच्चारण थइ शके नहि ते स्यात् अवक्तव्य चोथो भांगो.

५ अस्ति स्वभाव पण अनंतो छे एक वचने अस्तिपणाना सर्वे धर्म एक समये उच्चारण थाय नहि माटे अस्ति अवक्तव्य पांचमो भांगो.

६ नास्ति स्वजाव पण अनंतो छे, ते एकज वचने एकवारे उच्चारणमां आवे नहि ते नास्ति अवक्तव्य नामा छठ्ठो जांगो.

७ अस्ति स्वजाव तथा नास्ति स्वजाव वस्तु मांहे समकाले युगपदे अनंता ठता छे, ते समकाले एकज वचने उच्चार करी शकाय नहि माटे स्याद्अस्तिनास्तियुगपद्अवक्तव्य सातमो जांगो. एम सप्तजंगीनुं स्वरुप ठए द्रव्यमांहे गुरुगमथी विचारतां आत्मा सिद्ध समान छे तो महारे परद्रव्यादिक मांहे मन, वचन, कायाना जोग राग रींझपणे प्रवर्त्तावी मित्रसमान जीवोना द्रव्य तथा जाव प्राणनी हाणी करवी तथा दुःखवुं घटे नहि प्रमाद छोडी यत्नाएज वर्त्तवुं स्वपर जीवना द्रव्य अने जाव प्राणने हुं केम हणुं ? तथा केम हणावुं ? अने हणताने जलो केम जाणुं ? माटे सर्वे जीव उपर समजावज राखवो

द्रव्यप्राण दश छे–पांच इंद्रियो, मनबल, वचनबल, कायबल, श्वासोश्वास, अने आयुष्य, ए दश प्राणने चांपवुं, कचरवुं, छेदवुं, बांधवुं, अथवा, सर्वथा प्राण रहित करवो मतलबके कोइरीते कोइना पण ए प्राणने दुःखववा, मन, वचन, कायाना योगथी हणवा, अथवा हथियारवडे हणवा ते द्रव्यहिंसा जाणवी. अने जाव प्राणते–ज्ञानादिक गुण तथा कर्त्तादि स्वजाव, दानादिक शक्ति, क्षांत्यादि मुख्य दश गुण ते आत्माना छे. एम आत्माना स्वजाविक धर्म ते जाव धर्म कहिए, ए जाव धर्म जे ज्ञानदर्शनादि गुण ते उन्मार्गे देशना दीधाथी हणाय छे ते मारा मित्रने केम हणु ?

जेम जिनेश्वरनां जाषित वचन विरुद्ध देशनाथी अगर मति कल्पनानां वचनोथी जीव अज्ञानमां पमे छे, तेम मिथ्यात्वमां पण पमे छे. तेमज परजाव आचरणानो परिणामी थाय छे. जेम चक्रवर्त्तीउ तथा देव देवांगनादिकोनां रुप सुख वखाणतां संजाल विना

अने जिन आज्ञाना उपदेश संभाळविना देशना देतां जीवो विषय कषायना परिणामी थाय छे, तेमज स्वजीवने तथा अन्यजीवने क्रोध ऊपजावतां क्षांति गुणनी हाणी थाय छे. अने स्वपरने माने चमकावतां मार्दव गुण हणाय छे, स्वपर जीवने कपट मांहे वर्त्तावथी आर्यव गुण हणाय छे, स्वपर जीवने लोभे वलगाडतां मुत्ति गुण हणाय छे, पांच इंद्रियोना विषय तथा धनादिकनी लालचमां पडतां, पाडतां श्लाकरतां तप गुण हणाय छे. अने पोताना शुद्ध स्वरुपने लक्षमां नहि राखतां प्राणातिपातादि अव्रतनो परिणाम करतां तथा पंचइंद्रियोना विषयोमां लक्ष रमावतां तथा क्रोधादिक चार कषायमां प्रवर्त्तावतां तथा आत्म उपयोग विना तथा जिनेश्वरनी आणा विना मन, वचन, कायाना जोगमां प्रवर्त्ततां शुद्धोपयोग रुप संजम धर्म हणाय छे. पुद्गल परिणतिने आत्म धर्म कहेवाथी तथा जाणवाथी सत्य गुण (सम्यक्त गुण) हणाय छे.

ते कषायादि मलिन अध्यवसाय करवाथी आत्मानो शौच गुण हणाय छे. तथा संजम सामायकादिकमां मन, वचन, कायादिकने अशुद्ध राखतां तथा अतिचार सहित वर्त्ततां शौच गुण हणाय छे. तथा जीव अदत्त, स्वामी अदत्त, गुरु अदत्त, तथा तीर्थंकर अदत्त ग्रहण करतां शौच गुण हणाय छे. समस्त अथवा कांइ पुद्गल द्रव्यनी ग्राहकता ते मूर्छा कहिए. ते मूर्छा आत्माना अकिंचन गुणने हणे छे. अने अतीत अनागत वर्त्तमान संबंधी औदारिक वैक्रियना कामभोगनी अभिलाषा करतां, करावतां, अनुमोदतां शुद्ध आत्मानंद पमाय नहि, माटे ब्रह्मचर्य गुणनी हाणी ते पण भावहिंसा जाणवी. ए प्रमाणे आत्माना दशेभावधर्मनी हाणी थाय छे ते भावहिंसा जाणवी, अने ए भावहिंसा नहि थवा देवाने माटे समभावमां वर्त्तवुं तेज सामायक छे. छकारकनी यथार्थ प्रवृत्ति विना कोइपण धारेलुं कार्य सिद्ध थतुं नथी. ते नहि जाणतां अंध परंपराए प्रवृत्ति करतां,

करावतां, मोक्षरुप कार्यनी सिद्धि मानवाथी आत्मानो स्वजावाचरण गुण हणाय छे, अने परजावनुं आचरण थाय छे, ते जावहिंसा अने मिथ्या प्रवृत्ति क्लेश करतां, करावतां द्रव्य प्राणनी पण हाणी थाय छे ते द्रव्यहिंसा कहिए माटे मोक्ष अर्थी जीवोए यथार्थ ठकारक प्रवृत्तिए मोक्षरुपी कार्य साधवुं ते कारकनुं स्वरुप नीचे प्रमाणे दृष्टांते करी घट कार्य ऊपर ठ कारक कहीए छीए

१ घट स्वरुपने जाणतो अने घट करवा तैयार थयो एवो कुंजार तेज घटने करी शके ते कर्त्ता नामा पहेलुं कारक

२ घटना स्वरुपने जाणतो एवो कुंजार घट करवानो अजिलाषी थाय तोज घट वने माटे करवानो अजिलाष ए कार्य नामा वीजुं कारक

३ करणनामा त्रीजु कारक तेना वे जेद छे.

१ घट थवा लायक शुरू माटी ते उपादान नामे कारण.

२ घट कार्य करवा माटे दंम चक्रादि साधनो ते निमित्त कारण

४ घट संपदा रुप पिंड स्थासादि निपजाववा, पूर्ण पटे घट तैयार करवो ते संप्रदान नामा चोथुं कारक.

५ पूर्व पिंमादि पर्यायनो व्यय करवो ते अपादान नामा पांचमुं कारक.

संप्रदान अपादाननो विशेष बोध—जेम कांकरी विगेरे दूर करी मृतिका शुरू करी पाणी नांखी पिंम निपजाववो. अहिंआं पूर्व मृत्तिका माहेला कांकरा दूर करी पाणी वमे एक पिंम करवो तेमां मृत्तिकानी अशुरूता तथा मृत्तिकाना वूटापणानो व्यय थयो ते अपादान, अने पिंड पर्यायनी उत्पत्ति ने संप्रदान, एम त्रवन व्यये कार्य निपजे.

त्रवन त्रवन व्यय विणु कार्य नवी होवेरे। जिम दृष्टें न घटत्व ॥ शुद्धाधार शुद्धाधार सुगुणनो द्रव्य छेरे। सत्ताधार सुतत्व ॥

जेम भवन कहेतां नवा पर्यायनी उत्पत्ति अने व्यय कहेतां पाछला पर्यायनो नाश ए थया विना कार्य निपजे नहीं; जेम माटीना पिंडमांथी पिंड पर्यायनो व्यय करी स्थास पर्यायनो भवन, स्थास पर्यायनो व्यय अने कोश पर्यायनो भवन तथा कोश पर्यायनो व्यय अने कपाल पर्यायनो भवन, अने कपाल पर्यायनो व्यय अने घट पर्यायनो भवन ए रीते कार्यनी उत्पत्ति थाय. तेमां जे नवा कार्यनुं उत्पन्न करवुं ते संप्रदान जाणवुं. तो जे घडो ते माटी उपादान शिवाय पथ्थर रेती सुतर विगेरेनो बने नहि.

६ अधिकरण, जे कार्य पर्यायने निपजाववुं होय ते भूमि, काल, आकाशना आधारे निपजे. भूमि, काल, आकाशना आधार विना कोइ पण कार्य बनी शकतुं नथी माटे छठुं अधिकरण नामा कारक जाणवुं.

एम छ कारक आत्मसिद्धिरुप कार्य करवाने माटे जाणवां जोइये.

१ जेम घटनो कर्त्ता घटना स्वरुपने जाणतो होय तेवो कुंभार ते तेनो कर्त्ता; तेम आत्मसिद्धिना स्वरुपने जाणतो होय एवो सम्यक् ज्ञानी आत्मसिद्धि करवा उद्यमवंत थयो ते कर्त्ता नामा पहेलुं कारक.

२ जेम घट कार्य करवानो अभिलाष ते कार्य नामा बीजुं कारक; तेम आत्मसिद्धि करवानो अभिलाष ते कार्य नामा वीजुं कारक.

३ जेम घट कार्यनुं करण कारक तेना बे भेद एक निमित्त बीजुं उपादान.

१ घट कार्यनुं उपादान सत्ता वाली माटी; तेम आत्म सिद्धि रुप कार्यनुं उपादान भव्य परिणति जाणवी.

२ जेम घट कार्य निपजाववानां निमित्त दंड चक्रादि छे; तेम आत्मसिद्धि निपजाववानुं निमित्त सुनये जिनेश्वरनी वाणी.

४ संप्रदान—जेम मृत्तिका शुद्ध करी पिंड निपजाववो; तेम मिथ्यात्व नाश करी सम्यक्त निपजाववुं; राग नाश करी वीतरागता

निपजावबी, विगेरे आत्मसंपदानुं प्रगट करता जवुं ते आत्मसंप्रदान कहीए. आत्म संपदा ते ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप, दान, लाज, जोग, उपजोग, वीर्यादि अनंत आत्म संपदा छे. आत्म परिणामे पोतेज पोतानी संपदानो दातार थई पोतानेज ए संपदा आपवी एटले आत्म मांहे सत्तागते केवल ज्ञान दर्शनादि संपदा अनंती छे पण देहदेहादिना ममत्वे मिथ्या ऽष्टीए पोतानी संपदा पोते देखी शकतो नथी कारणके परमांहे लक्ष रमावी निज लक्षण तरफ लक्ष देतो नथी तेथी संपदा निकट उतां पण अत्यंत दूर थइ रही छे ते नय युक्त जिनेश्वरनी वाणी रुपी हथीयारे करी मिथ्यात्वादि दूर करी पोतानी संपदा पोतानी ऽष्टी गोचर करवी निज संपदा निज ऽष्टी गोचर करनार पोतेज छे माटे दातार पण पोतेज, अने देवानु निज शक्तिरुप धर्म ते दान ते पोतानाज धर्म जाणवा. अने निज शक्ति ग्रहण करनार पोतेज पात्र, के जे निज सत्तानो लाज लेइ शके छे एम दाता पात्र देय त्रणे अभेदपणे जाणवा, माटे आत्म संपदानुं दान देवुं ते संप्रदान कहीए

५ अपादान–जेम घट कार्य माटे पूर्व पर्यायनो व्यय करवो कह्यो छे, तेम सिध्धिरुप कार्य माटे मिथ्यात्व अने रागादि पूर्व पर्यायनो नाश करवो ते अपादान नामा पांचमुं कारक जाणवुं. अहिंआं विस्तार घणो छे पण मुख्य मतलब लखी छे, विशेषे तत्वज्ञानीउंथी अथवा सूत्रोथी समजी लेवुं.

६ अधिकरण–सर्वे लौकीक कार्यमां भूमि, काल अने आकाश छे. तेम अहिंआं आत्म सिध्धिरुप अलौकीक कार्यमां मनुष्य गति वज्ररुषभनाराच संघयण तथा काल लब्धिनो परिपाक जाणवो. एम ६ कारक जाण्या विना जे उपदेश देवो ते पोताने तथा परने प्राय रागद्वेषनु कारण अने भव भ्रमणनुं कारण जाणवु, माटे शुद्ध कार-

कना जाण पासे मोक्षरुपी कार्यनी प्रवृत्ति समजी एवाज सद्गुरुनी निश्राए वर्त्तवुं तेथी समजावनी प्राप्ति थाय, पोते पण कारक ज्ञान विना कार्यनुं करवुं ते रागद्वेष रुपी विषमता पामवानुं कारण छे. यथार्थ कारक प्रवृत्ति जाणी मोक्षरुपी कार्य करवुं तेथी समजावनी प्राप्ति थाय. वर्णादि जरू धर्मवंत पुद्गल अने अन्य जीव उपर ममत्व अने रागादि करी मारा कर्त्ता, भोक्ता, ग्राहकता, व्यापकता, रमणता, दान, लाभादि सर्वे गुणने केम आवरुं ?

वली स्वगुण आवरणनी परंपरा रागादिक विकार केम उपजावुं ? मारुं ज्ञानादिक धन मारी सत्ता भूमिमां अखंरु छे. परथी लेवुं अगर परने देवुं ते माराथी बनी शके तेम नथी. परथी मारा सुख दुःखादिकनी हाणी वृद्धि निश्चयथी थइ शकती नथी तो समय मात्र पण पररमण करवुं मने घटे नहीं.

स्वभाविक धर्म—मारा कर्त्ता, भोक्ता, ग्राहकता, व्यापकता, रमणताने अनादिना अबोधथी उलटा प्रवर्त्तावबाथी थती रागादिक परिणति मटाडवा, स्वकर्त्तादिक धर्म शुरू नये प्रवर्त्तावतां कर्त्तादिक परिणामनी विषमता मटी समभावरुप सामायक थाय.

१ कर्त्ता—हुं शुरू चेतन मारा ज्ञानादिक स्वभाविक कार्यनो कर्त्ता स्वद्रव्यादिकमां एकज नित्य अबाधितपणे छुं. जरू पुद्गल स्वभावनो हुं केम कर्त्ता थउं ? पुद्गल चपल, जरू, अनंत जीवनी एंठ तथा सडण परुण विध्वंसणादि धर्म सहित छे. ते पोतेज अनंत परमाणु भेगा थइ औदारिकादि आठे वर्गणा तथा संस्थानादि तथा वर्णादि बहुरुपे थाय छे. तो तेनुं मिथ्या कर्त्तापणुं मानवुं मने न घटे.

२ भोक्ता—जेथी परिणाम विश्रांतीने पामे तेज भोग धर्म. तेतो मारा ज्ञान दर्शन चारित्रादि स्वतंत्र धर्ममां समाधिरुप अनंत भोग धर्म छे, पण पुद्गल जे चपल जड अनित्य एंठ तेमां स्थिरतारुप

समाधि होय नहीं, तो एक पुद्गल इष्टमानी रागी अने एक अनिष्ट मानी द्वेषी थइ पुद्गल मांहे जोग धर्म मानी पुद्गल जोगे रींझी मारा स्वजोग गुणनें आवर्यो. पुद्गल द्रव्य के जे जगत् जीवनी एंठ दरेक जीवे विविध वर्गणारुपे परिणमेला अनंती वार विषय कषाय जावे जोगव्या, लोकाकाशना सर्व प्रदेशे नवि नवि गति योनी प्राण प्रयाति करतां वारंवार स्पर्श्या, ताडना तर्जना छेदन भेदन आदि महा भयंकर वेदनाउं जोगवी जोक्तापणे विषय जोग अणमिलते प्रयासनी वेदना जोगवी परजावनो कामी थइ वारंवार जव भ्रमण करवुं ते जोग गुणनी विषमता मने केम घटे? ने जिन वचनामृत चाखी स्वजाविक जोग जोगववाने कोण मूर्ख प्रमाद करे? हुं तो ज्ञानादि स्वगुण समाधिनो जोगी थइ रहुं मारा द्रव्यादि चार मांहे जगत्ना द्रव्यादि चार नथी, मारो अनंतो जोग धर्म मारा द्रव्यादिक मांहेज छे पण जगत्ना द्रव्यादिक मांहे नथी अने शुद्ध निश्चय नये मारे तथा पुद्गलने संबध नथी तो मारे स्वजाविक जोगधर्म छोमी जरुमां जोगी थवु न घटे एम जाणी सम्यक्वान् जीव विरक्त थाय

३ ग्राहकता—मिथ्या जावे मारो ग्राहकता गुण विषम थयेलो छे ते मारे समपणे करवो जोइये. ज्ञान दर्शन चारित्रादि रिद्धि तेनेज हुं ग्रही शकुं पण पुद्गलना वर्णादिक मारामां आवी शके नहि तो मिथ्या अभिमान केम करुं? समय समय ज्ञान दर्शनादिना उपयोगनी नवि नवि प्रवृत्तिनुं थवुं तेज मारो स्वकाल छे, अने समय समय नवा वर्णादिकनुं उपजवु ते पुद्गलनो स्वकाल छे ज्ञानादि स्वगुणरुप ग्राह्यने आत्मा ग्राहकज ग्रही शके तेमज वर्णादि पुद्गल ग्राह्यने पुद्गलज ग्रहण करी राखे जेम सोनाना पित्तादिक गुणोने सोनुंज ग्रहण करी राखे अने त्रांबाना रक्तादिक गुणोने त्रांबुज ग्रहण करी राखे छे. तो मारे परद्रव्यादिना ग्राह्यनी शी जरुर छे? जावथी

मारा ज्ञानादि कर्त्तादि गुणो रुप लक्ष्मी मने सुख तथा जोग आपनारी अने दुःख दुरितथी बचावनारा ग्राह्यो मारामांज छे. कोइ द्रव्यनी सत्ता कोइ द्रव्यमां जती आवती नथी मारे धननी जरुर नथी जेथी विषयना विषम विकार उपजे छे अने विषयोनी अने मानादिनी इछाथीज धननी ग्राहकता थाय छे. पण हुं चेतनघन विषय विकारथी रहित छुं विषय विकारतो औदारिकादि शरीरमां छे. हुं ते औदारिकादि शरीरने जाणुं छुं, ए मने जाणता नथी, एवा निर्विकारी मारा रुपने छोडीने जड जे औदारिक शरीरमां मारुं मनन करी एना माटे क्रिया क्लेश तथा संकल्प विकल्प हुं केम करुं? स्त्रीनी ग्राहकता मने न घटे. काम रोग मारा आत्म अंगमांहे नथी. हुं शुद्ध ब्रह्म, मारा ब्रह्मचर्य आचरण छोडीने नवद्वारे दुर्गंधि वहेतुं रस रुधिर मांस मेद अस्थि मज्जा वीर्यरुप सात धातु, सात मल, विष्टा मूत्र जरवानी कोठी जेवुं रोमे रोमे दुर्गंधे श्रवतुं वायुपित्त कफ जलंदर जगंदर प्रमेहादिक अनेक दुःखोनी खाण, क्षणमां शोजतुं, क्षणमां विकराल, जयंकर, अनिष्ट दुर्गंछवा लायक देखातुं प्रेतरुप शरीरने माटे कोण मूर्ख स्त्री आदिकनी ग्राहकता करे?

हुं एकज छुं पुद्गलनी पेठे बहु परमाणुथी बनेलो उपचरित द्रव्य नथी पण फक्त ज्ञान रुपज छुं. तिहांतो अशुद्धता होयज शानी? जिहां अन्य बीजुं मले तिहांज अशुद्धता होय पण मारा एक पणामां अन्य प्रवेश करी शक्तुं नथी तो जरुर हुं एकज छुं तो शुद्धज छुं. तो जे एक होय ते नित्यज होय पण जे अन्य अन्य परमाणु संजोगे बनेलां द्रव्यो स्त्री पुत्रादि घर वस्त्र आभरणादि नित्य होय नहि, जेनो संजोग तेनो अवश्य विजोग होयज. हुं अन्य संबंध विना एकज छुं तो अविनाशी पण छुं. अने कामादि रोग ते तो अनंता परमाणुथी निपजेली वर्गणाउथी बनेलां वीर्यादि रस रुधिर मांस मारा मांहे नथी पण ज्ञानादि दानादि शक्ति तेज मारुं वीर्य छे. स्त्री

आदिकनी ग्राहकता मने केम घटे? मारुं धन चोर देखी शके तथा चोरी शके तेवुं नथी, शीत ताप वरसाद मारा अरुपी अंगने लागी शके तेम नथी, मारो माल मिलकत मारा असंख्यात प्रदेशरुप सत्ता भूमि मांहे अतूट अक्षय अखंड छे ते कोइ पण खंडित करी शके तेम नथी. सोनानी पीलाश सोनाथी न्यारी करी चोरी जाय तो मारी सत्ता धनने पण लेइ शके माटे मारे घरनो शो खप छे? मारे पुद्गलनो शो खप छे? एम अनेक ग्राहकता पुद्गलमां अहंपणुं जाण्या मान्याथीज थाय छे कया दुःखने मटाडवा तथा कया सुखने वधारवा पुद्गल वस्तुनी ग्राहकता करुं? पण में श्री गुरुना परम अमृत रुप वचन रसने पीधो हवे परद्रव्य माटे परनी ग्राहकता मने न घटे.

॥ दोहा ॥

प्रवचन ग्रथे भाखीउं, पूर्णानंद निजमांहि ।
विषय विष उतरी गयो, तव पुद्गल खप नांहि ॥
पर पद आतम द्रव्यको, कहन सुनन कछु नांहि ।
चिदानंद घन खेलही, निज पदतो निजमांहि ॥

एटले मारुं पद मारामां छे परग्रहणबुद्धिए ग्राहकता गुण मिथ्यात्व अवस्था मांहे विषम कर्यो पर मांहे रक्त थइ परग्रहणबुद्धि करी अथवा परमांहे द्वेषी कलुषित थइ निज गुण ग्राहकता चूक्यो; ते रागादि मने न घटे, मारे परथी कांइ काम नथी एम उदासिन्नवृत्ति करी पर ग्राहकतानी बुद्धि छोडुं. ते समजावनी आय (लाज) कहीए

व्यापकता—व्यापक द्रव्य अने व्याप्य एटले गुण जे सोनुं द्रव्य ते व्यापक छे, अने जाराश, चीकाश, पीळाश आदि जे गुणो ते व्याप्य छे. तेम हुं अरुपी आत्मा, ते व्यापक हुं. मारा ज्ञानादि गुणो-

ज मारामां व्याप्य छे. परमांहे मारुं कांइए नथी. व्याप्य व्यापक अभेदपणे हुं एकज छुं. तो भिन्न द्रव्ये मारे व्यापकता करवानुं शुं काम ? जेथी मारो व्यापक गुण पुद्गल मांहे व्यापी विषमताने करे छे. जेम कोइ बलता घरमां पेशी पोते बलवानी वेदना भोगवे छे, फरता चक्र उपर चढी पोते फरे छे, तेम अनंत पुद्गलथी बनेली चीजो,—सरुण पडण विध्वंसन रुपमां व्यापी रागद्वेष करी शांत गुणने चूकी व्यापक गुणनी विषमता करवी मने केम घटे ? हेय मान (छांडवा योग्य) पर वस्तुनी व्यापकता छोडी निज व्याप्य निजमां स्थिर करी स्वभावे वर्त्तवुं, ए समभावनो लाभ ते सामायक जाणवुं.

रमणता—रमणता गुणथी अनंत पुद्गल संयोगी विनाशी जगत् जीवनी एंठ एवा धन, स्त्री आदिने अज्ञानथी मनोहर जाणी ते मांहे चित्तनुं रमवुं. एकने अनिष्ट जाणी द्वेषनी वेदना वेदवी, एकने इष्ट जाणी राग रीझे रमवुं, ते मने न घटे, केमके जेम हजारो मणनो धूळनो ढगलो करी तेमांहेथी स्त्री, बाग, गजादि विविध घाट सुरुप तथा कुरुप बनावी एकने इष्ट एकने अनिष्ट कल्पी दुःखी, हर्षितथवुं. तेमज चौदराज लोक मांहे भरेला पुद्गल द्रव्य अनंत परमाणु रुप, अनंत वर्गणा, अनंत खंधरुप सर्वे जड भावे सामान्य; सरुण, पडण, विध्वंसन, मिलण, विखरण गुणे सामान्य एवा पुद्गलो मांहेथी बनेलां धन, पुत्रादिने रम्य जाणी चित्त रमाववुं, अथवा अरम्य जाणी जुगुप्सा करवी. ते मारा ज्ञानादि शुद्ध रम्य रमण परिणाम रोकी-चूकी मिथ्या रमण करवुं मने न घटे, हुं शुद्ध चेतन राजा छुं. एवा पुद्गल विषनी आशाथी दुःखीत थवुं (भटकवुं) मने न घटे. एम स्वपर विवेक ग्रही निज रम्य रमण परिणामी थवुं एज मारो स्वभाव छे. ए विना मारा ज्ञानादि गुणोने विषम करी अज्ञानथी दुःखो सह्यां. शुद्ध दर्शन विना मिथ्याडष्टी थइ परपदमां

आपो लखी जव ज्रमण करतां ज्रयंकर विकारो सह्या चारित्र गुणनी विषमताए पराचरण एटले विषयकषायादि आदरी विषयकामना शांति अर्थे विषय जोगववाना पदार्थो मेलववा वहु प्रयास करी क्रोधानले धगधगित पोते क्रोधानलमांहे दुःखित थयो कोपाग्निए अन्य जीवोने तपावी, मारी, ताडी, वैरादि बांधी वहु जव ज्रमण जन्म मरण वियोगादि सह्यां, माने चढी अपमान पामी अनेक वेदनाउं सहन करी, माया आदरी आर्त्त रौद्र ध्यानमां वर्त्ती स्त्री आदि पर्याय पामी परवशादि वहु दुःखो सह्यां, लोने लागी ताप तृषा भूख वेठी, आराम ठोकी दरिया डुंगर विकट देश प्रवेश करी परतन्त्रादि पामी प्राणघात पर्यंत दुःखो सह्यां, परहास्य करी मित्र समान पर-जीवने कषाय ऊपजावी पोते कषायी थइ निज समान सर्व स्वजाति जीव ऊपर वैर परिणाम करी वैरनी परपराए वहु दुःखो सह्यां, पुद्गल वर्णादिमांहे रक्त थइ रींझ मानी स्वसत्ता चूकी स्वगुण वियोगे पुद्गल संयोगे वहु दुःखो सह्यां, विनाशीक जे पुद्गल ऊपर धन कुटुंब परिवार आयुष्य कामजोगनी शक्ति क्षुधादि शरीरनी शक्तिउने राखवा परिणामी थइ ते शक्तिउनो नाश थतां ज्रयनीत थइ ज्रयंकर ज्रय वेदनाउं जोगवी ते उतां पण स्थिर न रहेवा लायक एवी पुद्गलीक शक्ति पुद्गलीक रिद्धि विनाश थतां वहु शोकातुरी जोगवी, मलमूत्रनुं पूतलुं चर्म पटले ढंकायलुं, स्नान विलेपनादिके, वली वस्त्र आभरणादिके शणगारी अंदरनी अशुचि चूली कोइ देखीती अशुचि देखी दुगंछा कीधी दुगंछानो परिणामी थयो, दुगंछानी वेदनाउं वारंवार जोगवी, वेद ऊदय जे मदन परिणाम ते पण औदारिकादि शरीर माहे थता विकारमां ममत्व करी, रमण करी ते विकारनी विषमताने निवारवा अनेक परतंत्रता जोगवी जेम विषधरनुं विष चढ्याथी मूर्छादि वेगो ऊपजे तेम कामविषयना वेगे आकरां दुःखो सह्यां एम अनेक परिणामे पराचरणी थइ निज सत्ताथी

गुणने सोनुं ढोरुतुं नथी. तेम जे सोनानो प्रदेश ते मांही त्रांवाना प्रदेशे प्रवेश कर्यो नथी माटे कोइ द्रव्य कोइ द्रव्यनो प्रदेश अन्य द्रव्यना प्रदेशमां प्रवेश करी शकतो नथी. वली कालथी त्रांवाने गलवामां जेटलो समय थाय ढे तेटला समयमां सोनुं गली शकतुं नथी. वली जेटलो समय सोनानी स्थिति रहे ढे तेटला समय त्रांबानी स्थिति रहेती नथी. वली सोनानी उत्पत्ति प्रलयनो जे समय तेज त्रांवानी उत्पत्ति प्रलयनो समय थाय नहि. एक द्रव्यनी काल परिणति बीजानी काल परिणतिमां प्रवेश करी शके नहि. सोनानो स्वन्नाव त्रांबामां आवतो नथी. कारण के वस्तु द्रव्यत्वपणे पोताना सर्व प्रदेशे स्वगुण वर्त्तनाए परिपूर्ण नरी ढे तिहां अन्य प्रवेशनो अवकाश नथी. जेम मीठानी कांकरी पोताना स्वन्नाव कारगुणे सर्वे अंगे नरी ढे तिहां मीठाश खाटाश आदिने रहेवानो अवकाश नथी तेमज सर्व प्रदेशे धोलाश अने कफहारकादि गुणोथी सर्व अंगे परिपूर्ण ढे तिहां अन्य गुणनो प्रवेश संन्नवेज नहि. शाक मांहे विविध तरेहना मशाला नेगुं आवेलुं मीतुं पोताना कारादि स्वन्नावने तथा कफ हारकादि गुणोने ढोडतुं नथी तेम मारा द्रव्य क्षेत्र काल न्नाव मांहे पुद्गलना द्रव्य क्षेत्र काल न्नावनो प्रवेश नथी पण मिथ्याडष्टिए हुं मन वचन कायाना जोगरुप पुद्गलो तथा तेना संबंधिक धन कुटुंबादिक एउंने हरकत करनारा अन्य पुद्गलोने अनिष्ट जाणी द्वेषी केम थाऊं ? जोगने वशे ग्रहेला पुद्गलो मारा होय नहि. हुं द्रव्य क्षेत्र काल न्नावथी अनादिथी अनंता काल सुधी निश्चयनये चैतन्य शक्तिमय शुद्ध बुं-बुद्ध बुं. सत्ता जोतां सिद्ध समान बुं. अलख अतुल अविचल चिद्विलास प्रकाशवान स्वसुख स्थानक हुं पोतेज बुं. त्यां द्विधा नथी. तिहां कोइ मने अनिष्ट केम २ शके ? मारी सत्तान्नूमिमांही मारी स्मृद्धि सहित वसुं बुं ते इंद्रिय गोचर नथी. मारुं जे आत्मिक धन ते

माराथी प्रदेशांतर थाय नहि, माटे, निर्जय निराकुल ठतां अनिष्ट संजोग विना जूवुं अनिष्ट संजोगनुं ध्यान केम करुं? हुंज मारा लक्षणने जूली माराथी विलक्षण जे पर पुद्गल द्रव्य चपल परिणामी राख्या रहे नहि एवामां आपो मानी मारा सम परिणामनी समाधिने चूकुं हुं तेथीज में अनंता जव ज्रमण कर्या हवे हुं एवा अनंत ऊपाधियुक्त शरीरमां आपो मानी हुं अनिष्ट संजोगथी विषमता करुं नहि. पण ते विषमता ठोडी निरुपाधि आत्म समाधिमा समपरिणामे स्थिरथोज रहुं.

पीमा चिंतवन आर्त्त ध्यान—आत्मा पोते अवाधित, अस्पर्शी, अनत कालथी अनंती पुद्गल वर्गणाउं साथे गति योनि करतां आत्मानो प्रदेश मात्र खर्यो अथवा घसायो नथी कारणके स्पर्शवान् पुद्गलो अस्पर्शी आत्माने स्पर्श करी शकता नथी. पीमा चिंतवन ए पण देह बुद्धिथी थाय छे, माटे जरू देहनी अंदर आपापणु मानी हु जरू जाव केम जोगवु ? सरण परण विध्वंसन स्वज्ञाव औदारिकादि शरीरमां होय छे, पण कोइ रोगादि वेदना मारा अंगमां नथी. तो हुं अठती वेदनाने केम जोगवुं ? एवी वेदनावाला शरीरमांथी आपापणानो लक्ष ऊठावी अव्यावाध सहजानंद स्वज्ञावमां लक्ष देइ स्वज्ञाविक समाधिमांहे स्थिर थवुं तेथी पीमाचिंतवन मटी निर्विकल्प समाधि मले

अग्र शोच आर्त्त ध्यान—एटले ज्रविष्य काले मारुं शु थशे ? मारो कोण आधार छे ? इत्यादिकनुं चितवन मिथ्या ऊष्टीएज थाय छे. पण मारो आत्म द्रव्य त्रणे काल चेतनमूर्त्ति छे, पर परिणतिना संयोगथी जरुना ममत्वनी चपलतामां हुं व्यापेलो तु, हवे श्री गुरु चरण पसाए जिनेश्वरना अमृत समान वचनोनो स्वाद लेइ मारुं मिथ्याविष कंइक उतर्युं छे, तो परनुं ममत्व करी हुं आगामी काल्नी चिंता न करुं.

छप्पय छंद.

हों निहचें तिहुँ काल, शुध्ध चेतनमय मूरति ।
परपरिनति संयोग, भई जमता विस्फूरति ॥
मोह करम परहेतु पाइ, चेतन पर रच्चै ।
ज्यौं धत्तूर रस पान, करत नर बहुविध नच्चै ॥
अवसमयसार बर्नन करत, परम शुध्धता होउ मुझ ।
अनयासबनारसिदास कहि, मिटौ सहज भ्रमकी अरुझ॥

निश्चय नयथी हुं त्रणे काले शुद्ध चेतनमयमूर्त्ति (पिंड) छुं, पर परिणति एटले पुद्गल परिणतिना संयोगथी जमता रुपविष चढ्युं तेथी चपलता थइ,मोहनि कर्मआदि परहेतु पामीने चेतना निज स्वरुपने भूल्यो छे, पोतानो लक्ष परस्वरुपमां रमतां स्वसत्ता दृष्टिगोचर करवानो अवकाश मल्यो नथी, तेथी परनो कर्त्ता भोक्ता थयो छे, जेम धतूरनो रस पी निशो चमवाथी मनुष्य बहुविधे नाचे हसे छे, तरेह तरेहवारना चाला करे छे, तेम परममत्वी जीव जेने मोहरुप मदिरा पीधी ते अनेक तरेहना हास्य विलापादिक करे छे. हवे समयसारनुं वर्णन करतां एटले जैन सिद्धांतथी आत्म परिणति आत्ममय वखाणतां मने परम शुद्धतानुं जे लखाण थयुं, अनयास एटले बीजा शास्त्रोनो प्रयास कर्याविना सहज सिद्ध समान आत्म स्वरुपने (शुद्ध ब्रह्मने) जाणवा नहि देनारो पुद्गलमां अहंपणानो भ्रम अनादिथी अनातम संगे थएलो तेनी अरुझाट मिथ्या मतमां मग्नता लागी रही हती ते मटी जाउ.

समयसारनो अर्थ—जे वचन आत्मानी परिणति आत्ममय बतावनार तेज वचन जिनेश्वरनां जाणवां, अने पर परिणतिने आत्ममय बतावे ते जिनेश्वरनुं वचन नथी माटे स-मय—कहेतां आत्ममय

ठोडावी सिद्धिपदने आपे. एम रुपातीत ध्यान करी परम स्थिरताए अखंड आत्म संपदानुं जोगववुं. हवे धर्म ध्याननी चार जावनाउं जाववी ते नीचे प्रमाणे.

(१) मैत्री (२) प्रमोद (३) मध्यस्थ (४) कारुण्य.

प्रथम मैत्री जावना कहीए ठीए—सर्वे जीव साथे मित्रजावनुं चिंतववुं, जेम पोतानुं इष्ट इछीए तेम मित्रनुं पण इष्ट विचारवुं, सर्वे जीवनुं कल्याण चाहावुं जेम के मारा जीव मित्रो मिथ्यात्वादिकने वश पडी विषय कषायादिकनी वेदना वेदी जवभ्रमणना तापने जोगवे ठे, मारी जे शक्ति ठे ते फोरवी शत्रुना तावाथी जीव बंधुउंने ठोडावुं अगर हजु पण मारी शक्ति विशेष होय तो एक जीवने पण मिथ्यात्वादिकने वश रहेवा देऊं नहि. वली कोइनुं वीलकुल बुरुं चिंतववुं नहि, सर्वे पोताना ज्ञानानंदना जोक्ता थाउं एम चिंतवन करवुं ते मित्र जावना जाणवी, इहां सर्वे जीवो उपर समपरिणाम करवो ते सामायिक जाणवुं.

बीजी प्रमोद जावना कहीए ठीए.

पोताना धर्माचार्य अने बीजा पण स्वपर समयना जाण एवा आचार्यादिक स्वरुप रमण करता, सहजानंदी, ज्ञानानंदी, दर्शनानंदी, श्रुत अज्यासी, सम्यक्त्वंत, जिनेश्वरना वचनना विस्तार करवा वाला शासनना प्रजावको आदिने देखी जाणी पोताना चित्तमां तेउं मलेतो हर्ष उमंगनुं आववुं, चित्तमां प्रमोदनुं प्रसरवुं ते प्रमोद जावना कहीए, इहां तत्त्ववेत्ता, तत्त्वजोगी, रागादिक रहित मध्यस्थ परिणामीउंनुं वहुमान ते पूर्ण समजावनुं कारण माटे समजाव कहीए. वली तेवा पुरुषोना मेलापथी चित्तमां महा आनंद प्रगट थाय. आज मारे ज्ञानी पुरुषोनो समागम थयो, आज मने एमनां दर्शन थयां, हवे हुं एमनी सेवा जक्ति करीश, आज मारां पाप दूर थयां, मोटो पुण्यनो उदय थयो, ए पुरुषो अनंत गुणोना धणी ठे, मोक्ष सुखना

दातार छे, तत्त्वज्ञोगी तत्त्वविलासी तत्त्वाश्रयी, स्वपरना जाण, परत्यागी स्वरुपरमणे रमण करवावाला, वली मारा धर्माचार्य आ काले साक्षात् जंगम परमात्मा रुप अहो एमनो उपकार ! अज्ञानी जीवोने विनाकारणे उपदेश करी धर्म पमाडे, शुरू मार्गमां लावी मोक्षे पहोंचाडे, दुर्गति पडताने वारे एवो जे गुरु महाराजनो महा मोटो उपकार ए उपकार बीजा थकी निपजे नहि, एवा उपकारीनो बदलो वाळवाने कोण समर्थ थाय ? जेने अनंत मरण टाळी अनंत जीवन आप्युं. विषयनी जीख छोडावी, शांति नगरनुं राज्य देखाड्युं, एवा परम पुरुष जेमां कोइ वाते खामी नथी तेमने हुं शुं आपी शकुं ? जगत्मां जे आपवाना पदार्थो ते तो जगत् जीवनी श्रेत छे ने ए परम पुरुष तो आत्मीक पूर्णानंदना जोगी छे, रोग रहित छे, जेनुं माथुं के पग कांइ दुःखतुं नथी के ते रोग टालवाने हुं सेवा भक्ति करुं. एमने तो रागादिक सर्वे रोगोनी जरु मूलथी उखेली नांखी छे, मारा सरखाना मिथ्यात्वादि रोगोनी निवृत्ति करवावाला, जिनेश्वरनां वचनरुप परम अमृत पाइ परम आल्हाद उपजाववावाला, मोहना फेरथी मूर्छित जीवोने जिनवचन सुधारस छांटी सचेत करवावाळाने हुं केवी रीते रींझवुं ? मात्र प्रमोद सहित तेमनी आणामां रहेवुं एज मने परम प्रमोदनुं कारण छे. गुणीना गुणानुवादमां प्रमोदित थवुं ते पण समजाव जाणवो.

॥ दोहा ॥ समकीत दायक गुरु तणो, पच्चुवयार न थाय।
भव कोमा कोमे करी, करतां सर्व उपाय ॥

त्रीजी मध्यस्थ भावना कहीए छीए,

आ ससारमां अनेक जीवो कर्मने वश पडेला, पोताना स्वरुपना अजाण, देव गुरु धर्मादि तत्त्वने नहि जाणतां अविनय, आशातना, विराधना, हिंसा, जूठ, व्यभिचार, व्यसन विगेरे अनाचारने सेवता देखी द्वेष करवो नहि, मारवुं, ताडवुं, कगको, जबराइ नहि करतां

दवाएलो ते प्रगट करवाने जिनोक्त जे व्यवहार ते कारण धर्म अथवा तारण धर्म कहीए व्यवहार क्रियारुप धर्म ते निमित्त कारण ए वहारनुं छे. श्रुत तथा चारित्र धर्म ते उपादान छे. तेनुं साधन उत्सर्गानुजायी शुरू व्यवहार छे. वस्तुनो सत्तागत शुरू परिणाम स्व-गुण प्रवृत्ति कर्त्तादिक अनतानद रुप सिद्धावस्थाए रह्यो ते एवंभूते उत्सर्ग उपादान शुरू धर्म छे ते धर्मनुं ज्ञासन रमण स्थिरतापणे चेतन तन्मय उपयोगे एकत्व पणे चितवन ते धर्म ध्यान कहीए

हवे तेनी चार ज्ञावना छे ते ध्यावबी—ज्ञानज्ञावना, दर्शन-ज्ञावना, चारित्रज्ञावना, वैराग्यज्ञावना हवे ए चार ज्ञावनानां लक्षण (१) ज्ञान ज्ञावनाथी निश्चळपणुं थाय एटले परवस्तुमां आपो ज्ञासे नहि, पोताना समज्ञावमां स्थिरता पणुं आवे (२) दर्शन ज्ञावनाथी मुंझाय नहि एटले मत्र तत्र देवदेवीना चमत्कार प्रमुख देखी साचुं माने नहि, ज्ञाणे के ए सर्वे परज्ञाव छे, कृत्रिम वस्तु छे, ए सर्वे मारे असत्य एटले निरुपयोगी छे अने अकृत्रिम वस्तु जे आत्म स्वरूप अनंत गुण पर्याय सहित तेज सत्यपणे माहरुं छे

३ चारित्र ज्ञावना—पूर्वकृत कर्म निर्जरे अने आत्मानी परि-णति आत्म ज्ञावमां रहे, नवां कर्म न उपार्जे ते

४ वैराग्य ज्ञावना—स्त्री आदिना संग तथा पौज्ञलिक कर्म सुखे तजाय, सशय मात्र न रहे. ए चारे ज्ञावनानुं स्वरुप ज्ञाणवुं पुद्गल ज्ञोगथी उदासिन्नवृत्ति थाय. जेने सम्यक्त्व निर्मल छे तेने ज्ञोगमां मग्नता होय नहि पण कोइ अणसमजु जीव एम ज्ञाणे के मने देवगुरु धर्मनी श्रद्धा छे, हुं समकीती हुं, तेथी मने कंइ कर्म धणी ध्यानथी सहज निर्जय थइ विषयो ज्ञोगवे अथवा संसारी सर्वे छे तेज धर्म शुक्ल ध्यान ज्ञण जे समये ज्ञोगमां मग्नता छे ते समये माटे ज्ञोगथी विरक्त थइ सज्ञायती होती नथी ए यावत स्याद्वाद

नयथी जाण्या विना पोते जोगादिकनी मग्नतामां वर्त्ते, अन्यने वर्त्तावे तो ते अनंत संसारी थशे तेणे जिनेश्वरनी आज्ञा यथार्थ जाणी नथी कह्युं छे के–

उक्तंच सवैया तेवीसा–सम्यक्वंत सदा उर अंतर, ज्ञान विराग उभै गुण धारै, जासु प्रभाव लखै निज लछन जीव अजीव दशा निरवारै, आतमको अनुभौ करी व्है थिर, आपु तरै अरु औरनि तारै, साधी सुद्रव्य लहै शिवशर्म सुकर्म उपाधि व्यथा वमिडारै ॥

मनहर छंद.

जबलगु जीव शुद्ध वस्तुकों विचारे ध्यावे ।
तब लगु भोगसों उदासि सर्वंग है ॥
भोगमें मगन तब ज्ञानकी जगन नाही ।
भोग अभिलाषकी दशा मिथ्यात अंगहे ॥
तातें वीषैभोगमें मगनसो मिथ्याती जीव ।
भोगसों उदासी सो समकिति अभंग है ॥
ऐसी जानी भोगसों उदासी व्है मुगती साधै ।
यहै मन चंग तो कठौतमांही गंगहै ॥

सम्यक्वान् जीव सदा पोताना उरमां ज्ञान अने वैराग्य बन्ने गुणने धारण करे छे. ज्ञानना पसायथी निज आत्म लक्षणने ओलखी आत्मभाव मांहे स्थिर थाय, अने अजीव दशाने मिथ्या भावे ग्रहण करेली छे तेने वैराग्य पसाये निवारे अने आत्मानुभवमां स्थिर थाय, पोते पण विभावरुप जलथी तरी उपर आवे, अने अन्य भव्य जीवोने पण परभोग रसरुपी जलथी भरेला संसार समुद्रथी तारे, पोतानी सत्ता दृष्टीगोचर करी स्वतंत्रपणे वर्त्ते, अने कर्म उपाधिनी

वेदना वर्मी नांखे. जीहां सुधी जीव पोताना ज्ञानानंदी शुद्ध स्वरुपने विचारे, ध्यावे, लक्षमां राखे, पोतानी शुद्धतामां रमण करे, त्यां सुधी सर्वांगे जोगथी उदासिन्नपणुं होय, पण जे समये जोगमां मग्न होय ते समये मिथ्यादशा ठे, अने ज्ञानमां जागृत दशा नथी केमके जोग अजिलाष मांहे वर्त्तवुं ते तो मिथ्यात्वनुं अंग ठे. तेथी विषय जोगमां मग्न रहे ते जीव मिथ्यात्वी कहेवाय, अने विषय जोगथी ऊदासी रहे ते अजंग पणे समकिती ठे. चित्तरुपी कथरोट जोग परिणाम विना चंग निर्मल ठे, तेमां आत्म परिणतिरुप गंगा वहीज रही ठे. एवुं जाणीने अहो भव्य जीवो! जोगथी उदास थइ मुक्ति साधवी समजावनुं सेववुं ए मुक्तिनुं साधन ठे, पूरण समजावतो वारमें गुणठाणे थाय, पण सम्यक्त प्रगट थया पठी पूरण समजाव रुपी साध्य ऊष्टीमां राखी जेम जेम समजाव प्रगट थाय, तेम विधि नीषेध चाल आदरी श्रावक तथा साधु सर्वे समजावना उद्यममांज प्रवर्त्ते एम वैराग्य जावनाथी परपदनो ममत्व तूटी समजाव आवे सिद्धि थाय.

सामाइय वयजुत्तो, जावमणे होइ नियम संजुत्तो ।
छिन्नइ असुहं कम्मं, सामाइय जत्तिआ वारा ॥

सामायक व्रत युक्त ज्यांसुधी मनने विषे सरखे नियमे संयुक्त होय त्यांसुधी अशुजकर्मने तोडे, जेटली वार सामायक जावमां होय तेटली वार सामायक करनार श्रावकने पण साधु जेवो जाणवो, ए माटे वहु सामायक करवां, माटे साधुने तथा श्रावकने समजाव जावनो, समजावना परिणामी थवुं तेमां जेद नथी एवी रीतनी जे जावना जावबी, अथवा एवी जावनामां जेनुं चित्त स्थिर थाय ते धणी ध्यानथी समजाव करी स्थिर जावने पामे, माटे तेवा प्राणी जे ठे तेज धर्म शुक्ल ध्यान करवाने योग्य ठे, बाकी बीजा अयोग्य ठे, माटे जोगथी विरक्त थइ समजावे वर्त्तवुं. मन अतिशय चंचल ठे

छोडावी सिद्धिपदने आपे. एम रुपातीत ध्यान करी परम स्थिरताए अखंड आत्म संपदानुं जोगववुं. हवे धर्म ध्याननी चार जावनाउं जाववी ते नीचे प्रमाणे.

(१) मैत्री (२) प्रमोद (३) मध्यस्थ (४) कारुण्य.

प्रथम मैत्री जावना कहीए छीए—सर्वे जीव साथे मित्रजावनुं चिंतववुं, जेम पोतानुं इष्ट इछीए तेम मित्रनुं पण इष्ट विचारवुं, सर्वे जीवनुं कल्याण चाहावुं जेम के मारा जीव मित्रो मिथ्यात्वादिकने वश पडी विषय कषायादिकनी वेदना वेदी जवभ्रमणना तापने जोगवे छे, मारी जे शक्ति छे ते फोरवी शत्रुना तावाथी जीव वंधुउंने छोडावुं अगर हजु पण मारी शक्ति विशेष होय तो एक जीवने पण मिथ्यात्वादिकने वश रहेवा देऊं नहि. वली कोइनुं बीलकुल बुरुं चिंतववुं नहि, सर्वे पोताना ज्ञानानंदना जोक्ता थाउं एम चिंतवन करवुं ते मित्र जावना जाणवी, इहां सर्वे जीवो उपर समपरिणाम करवो ते सामायिक जाणवुं.

बीजी प्रमोद जावना कहीए छीए.

पोताना धर्माचार्य अने बीजा पण स्वपर समयना जाण एवा आचार्यादिक स्वरुप रमण करता, सहजानंदी, ज्ञानानंदी, दर्शनानंदी, श्रुत अभ्यासी, सम्यक्त्वंत, जिनेश्वरना वचनना विस्तार करवा वाला शासनना प्रजावको आदिने देखी जाणी पोताना चित्तमां तेउं मलेतो हर्ष उमंगनुं आववुं, चित्तमां प्रमोदनुं प्रसरवुं ते प्रमोद जावना कहीए, इहां तत्त्ववेत्ता, तत्त्वजोगी, रागादिक रहित मध्यस्थ परिणामीउंनुं बहुमान ते पूर्ण समजावनुं कारण माटे समजाव कहीए. वली तेवा पुरुषोना मेलापथी चित्तमां महा आनंद प्रगट थाय. आज मारे ज्ञानी पुरुषोनो समागम थयो, आज मने एमनां दर्शन थयां, हवे हुं एमनी सेवा जक्ति करीश, आज मारां पाप दूर थयां, मोटो पुण्यनो उदय थयो, ए पुरुषो अनंत गुणोना धणी छे, मोक्ष सुखना

कर्म बंध करे अने जे जे समय मन वचन कायाना जोग स्थिर रहे ते काल पण रुडो जाणवो. एटले दिवस रात्री घडी पहोर पल स्थिर उपयोगमां वर्त्ते ते वेला धन्य करी मानवी एज सामायक छे. जेथी पोताना ध्याननो व्याघात थाय त्यां न जवुं. वली वाचना, पृछना, परिअट्टना अनुप्रेक्षा, ए मारे धर्मनां आलंवन छे माटे समजावने माटे अवश्य एज करणी छे ए करणीनुं आलंवन न होय तो ध्यान रुपी मेडी उपर चढी शके नही अने आलंवन वालो रुमी रीते चढी शके परमात्माए मन वचन कायाना जोगनी स्थिरताने ध्यान कह्युं छे एज समजाव जाणवो ते माटे धर्म ध्यान कहीए छीए ते धर्म ध्याननां चार पाया छे

(१) आज्ञा विचय (२) अपाय विचय (३) विपाक विचय (४) संस्थान विचय–

आज्ञा विचय–वीतराग देवनी आज्ञानेज आत्महितकारी माने सद्दहे–जगनंते ७ द्रव्यनुं स्वरुप बताव्युं छे, ते साते नये करी चार प्रमाणे करी चार निक्षेपे करी इत्यादिक जेम जाण्या छे ते मध्ये पांच द्रव्य अजीव जाणी तजवा कह्या छे एक आत्म द्रव्यना शुद्ध गुण पर्याय आदरवा कह्या छे ते आत्म स्वरुपनी उलखाण माटे स्याद्वाद स्वरुप नित्यानित्य पक्ष निश्चय व्यवहार प्रमुखे करी तेनुं स्वरुप विचारी नि संदेह पोताना स्वरुपनुं ध्यान करे ए परमात्मानी आज्ञा प्रमाणे यथार्थ उपयोग जासन थये थके हर्ष उपजे ते उपयोगमां निर्धार जासन थयुं. तेनुं रमण करवुं ते अनुभवीने तन्मय थवुं तेने आज्ञाविचय धर्मध्यान कहीए. उक्तंच.

अप्पाणंभावे विहरमाणे गोयमा खिणेगम् मक्कये पमायं ।

इत्यादिक सूत्रोथी जाणवुं–हे गौतम! शुद्ध निर्मल ज्ञान दर्शन संयममय आत्माने भावतां विचरतुं क्षण मात्र पण प्रमाद करवो

जिन वीतरागनां वचन नथी पाम्या ते पुरुष तिहण आकरा दुःखो पामे, वली जिन वचन पामी प्रमाद करे ते प्रमादी घोर दुःख रुप संसारमां भटके.

णाणं नरस्स सारं, सारं णाणस्स सुद्ध सम्मत्तं ।
सम्मत्त सार चरणं, सारं चरणस्स निव्वाणं ॥

नरभवनुं सार ज्ञान छे. ज्ञाननुं सार सम्यक्त छे. सम्यक्तनुं सार चारित्र छे. अने चारित्रनुं सार निर्वाण छे. ते ज्ञान जिनेश्वरनी आणामां वर्त्ततांज छे.

अपायविचय—अनेक संसारी जीव अनंत समाधिमय पोतानुं आत्म स्वरुप भूली कर्मने वश पड्या दुःखी थाय छे. शाथी के अज्ञान, राग, द्वेष, कषाय, आश्रवना वशे. पण हे चेतन ! तुं तो हवे जाण पुरुष थयो, पुद्गल वस्तुमां पोतापणुं मानी पर कर्त्ता पर भोक्तादि परिणामपणे केम थवुं ? हे चेतन ! ए वस्तु जरु तारी नहि, ए तुं नहि, तुं चैतन्य छे, ए जरु छे. तारुं तो अनंत ज्ञान, दर्शन, चारित्र, वीर्य छे. वली निश्चय नये तुं शुद्ध, बुद्ध, अविनाशी, अजर, अनादि, अनंत, अक्षय, अक्षर, अनक्षर, अचल, अकल, अमर, अकर्मी, अनामी, अबंध, अनुदय, उपयोगी, अभेदी, अवेदी अछेदी, अखेदी, अकषायी, असखायी, अलेसी, अशरिरी, अनाहारी, अव्याबाध, अनावगाही, अगुरुलघु परिणामी, अतींद्रिय, अप्राणी, अयोनी, असंसारी, अमल, अपरंपर, अनाश्रित, अकंप, अविरुद्ध, अनाश्रव, अलख, अशोकी, असंगी, अनाकार, अमूर्ति, लोकालोक ज्ञायक छुं. तारी ज्ञायकता रुप निर्मल स्फटिक मणिनी झलकमां जगत्ना सर्वे द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, त्रिकालवर्ती उत्पाद् व्यय ध्रौव्यनुं प्रतिभासन थइ रह्युं छे. वली तारी झगमग दर्शन ज्योतिमां षड्द्रव्य दर्शी रह्या छे. वली एवी ज्ञान दर्शननी स्थिर

परिणति सदाए अखंम धाराए परिणमी रही छे. वली नारी चैतन्य शक्ति अखंड, अतूट, अखूट, अपरंपार, निराधार, नि संग, निर्जय, अनाकुल थतमां थती छे. तुं स्वगुण जोगी, स्वसत्ताधानी, निजस्वरुप रम्यमां रमण करवावालो शुद्ध चिदानद तुं, थतां जरु पुद्गल के जेमांही दुःख श्रम विषय विपना विषम विकारो, कपाय अग्नि-रुप दावानल छे तथा वहु रोगनी खाण सरुण, पण, विध्वंसन, प्रेत-रुप छे तेमां शुत्र अशुत्र मानी केम विषय विकारनो जोगी थाऊं तुं ? एम पुद्गल जावने अपाय जाणी सहजानंद आत्म स्वजावमां स्थिर परिणामी थवुं ते समजाव जाणवो.

विपाक विचय—हवे विपाक विचय ध्यान करी समजाव करवो ते कहुं तु आपणो आत्मा परमात्मा सरखो सिद्धनो साधर्मी छे ते पोतानुं स्वरुप अणजाणतां आ संसारमां खुतो छे ते स्वरुप विचारता एम जासन थाय छे के जे परायो संग कीधो ते माहे राची माची रह्यो तेथी कर्मने वश पड्यो दुःखी थाउ तुं ते कर्म विचार कहे छे. जीवनो ज्ञान गुण ज्ञानावरणीए दाब्यो छे, एम दर्शनावरणादि यावत् वीर्य गुण अंतराय कर्मे दाब्यो छे एम आठ कर्मथी जीवना आठ गुण दवाणा छे, तेथी आ संसारने विषे जीवने जन्म मरण अनंतां करवां पमे छे. ने सुख दुःख पोते पोतानां करेलां कर्मथी जोगवे छे ते सुख वास्तिक नथी मिथ्याडष्टिए कल्पनाथी सुख मान्युं छे ते सुखमां राचवुं नहीं. जेम स्त्री चार शेर रुपानां सांकलां पगे पेहेरी सुख माने छे. वली कान तुटता सुधी काने पहेरवाना आजूपण पहेरी कल्पनाथी सुख माने छे पण तेज आजूपण पुरुपने पहेरावीए तो सुख माने नहीं. तेम पुण्य उदयथी धन अने विप-यना जोगोमां मिथ्याडष्टिए कल्पनाथीज सुख मनाएलुं छे. एवा कल्पित सुखमां हे चेतन ! तारे राचवुं न घटे. वली दुःख ते पोताना पूर्वना अशुत्र कृत्य कर्मना उदयनो विपाक छे. ते तारी आत्म स-

त्तामां नथी. तुं तो अखंड ज्ञानमुद्रा शुद्ध सत्तावंत ज्ञाननो पुंज एक नित्य अबाधित छुं. माटे एवा पुद्गलोने दूषित जोइ तारो लक्ष ते मांहे जवा देवो नहीं. एटले शुभमां रागी, अशुभमां द्वेषी थवुं नहीं. ए कर्मनुं स्वरुप विचारवुं. ते प्रकृतिबंध, स्थितिबंध, रसबंध, प्रदेशबंध ए चार बंधनां स्थान विचारवां तथा उदय, उदीरणा, सत्ता, तेना स्वरुपनुं चिंतवन करवुं. एवा कर्म परिणामथी उदासिन्नवृत्ति करी, एकाग्र चित्त करी आत्म स्वन्नावमां स्थिर थवुं ते समन्नाव कहीए.

संस्थान विचय—त्यां उत्पाद्, व्यय, ध्रौव्य, द्रव्य, क्षेत्र, काल, न्नावादि विचारे, पर्याय लक्षणे जूदा जूदा नेदे करीने, नाम स्थापना द्रव्य न्नाव नेदे करीने चौद रज्जु लोक केवो छे—ऊंचपणे चौद रज्जु छे. ते मध्ये सात रज्जु नीचो अधो लोक कहीए. अने विचाले अढारसें योजन मनुष्य लोक छे तेने तीर्छो लोक कहीए ने उपर कांइक ऊणो सातरज्जु उर्ध्व लोक छे, ते मध्ये देवता वैमानीक ते उपर सिद्ध क्षेत्र जे मांहे सिद्धना जीवो अनंत समाधिना जोगी रह्या छे. एवो चौदरज्जु लोक तेना सर्व प्रदेश एटले लोकाकाशना सर्वे प्रदेश मारा जीवे अनंतकाल संसारमां न्नमतां जन्म मरणे करी स्पर्श्या छे. वली ए लोकने विषे पंचास्तिकायनुं अवस्थान तथा परिणमन द्रव्य गुण पर्यायनुं अवस्थान त्यां पोताना कर्मनो कर्त्ता अने न्नोक्ता आत्माज छे अने ते आत्मा अरुपी अविनाशी उपयोग लक्षणे युक्त ते पण पोतेज छे तो एवा चौदरज्जु लोक मांहे रहेला माराथी न्निन्न ते अन्य पदार्थ मने स्थिरतानुं स्थानक नहीं. मने स्थिरतानुं स्थान असंख्यात प्रदेशरुप मारी सत्तान्नूमिज छे. एम परवस्तुनो राग छोडी आत्म स्वन्नावमांहेज स्थिर थवुं ते समन्नाव जाणवो.

हवे धर्म ध्याननुं स्वरुप संक्षेपथी लखीए छीए—कर्म जनित समुद्र वखाणिए छीए, एटले कर्मे करी प्राप्त थयो एवो जे न्नवसमुद्र

ते जन्म जरा मरण रोग जले करी संपूर्ण जरेलो छे, एमां मोह रुप मोटा जमरा पडी रह्या छे ने कामरुप वडवानल लागी रही छे, जेमां कषाय रुपी चार पाताल कलशा छे ते मध्ये आशा रुपी मोटो वायु प्रचंड वेगे समुऽना जलने कल्लोले प्रेरे छे, महा विकल्परुपी कल्लोल उठली रह्या छे एवो मोहरुप उऽत भव समुऽ छे मनमांहे विश्रांत कहेतां हर्ष शोकनुं थवुं ते रुपी वेल समुऽमां फेली रही छे, नेनी अरुऽाटमां पऽेला जीवने निकलवु महाऽुष्कर जाणवुं. वली त्यां याचना रुपी सेवालनो समुह घणो छे अने ऽुःखे पूर्ण थाय एवी जे जोग तृष्णा ते समुऽनो मध्य भाग छे. अज्ञान रुपी वाउलानी घटा घनघोर अंधकार करती व्यायी—व्यापी रही छे आपदा रुपी विजलीना विषम ऊवकारा थइ रह्या छे कदाग्रह रुपी मोजां अद्ऽुत उठली रह्यां छे वली त्यां विविध जातिना रोगरुप मत्स कछादिक जलजंतु घणां उठली रह्यां छे. वली चंचलता रुप शून्यपणा रुप गर्वरुप जे जे दोषो ते ते मोटा पर्वतो ज्यां छे एवो भवसमुऽ तेने विचारवो. हवे तेवा भव समुऽने तरी पार पामवानो उपाय कहीए छीए ज्यां सम्यक्त रुप ऽढवंधन वांधेलां अढार हजार शिलांग रुप पाटीआं ज्यां जमेलां छे त्यां ज्ञान रुपी निर्यामक झाझना चलावनार छे. संवर कीचे करीने पाटीआंनां आश्रव रुप छिऽोने पूऱ्यां छे. जे मनोगुप्तिरुप गुप्त सुकान तेने समुचाले आचाररुप संभपे करी दीपतु—दोजतुं उत्सर्ग ने अपवाद मार्ग वच्चे चालतुं एवुं जे झाऽ तेने विषे आत्म शुभटनुं सैन्य चढयुं के जेमां शुरू अध्यवसाय रुपी घणा वलवंत शुभटो छे. वली ते वहाणने भला स्थिर जोग रुपी कुवास्थभ छे ते स्थंभ उपर थापेलो अध्यात्म रुपी सढ ते वहाणने चलावे छे. हवे ते अध्यात्म रुप सढ थकी प्रगट थयो जे तप रुपी पवन अनुकुल वहेतो थको वहाणने चलाववाना वेगे करीने संवेग रुपे चालतुं वहाण वैराग्य (उदासिन्नता) मार्ग मांहे

चारित्र रुपी झाझ महा वेगे चाल्युं जाय छे तेनी अंदर महा मुनिराज बेठा छे, महा रिध्धिना धणी छे, तेमनी अनित्यादिक जे नली नावनाउं ते रुप पोतानी पेटी ते मांहे ज्ञानरुपी रत्न नरेलां छे. ते पेटी पोतानी पासे राखेली छे. एवी रीते जे मुनिश्वर प्रवर्त्ते छे ते निर्विघ्नपणे मोक्ष नगरनुं राज सुखे पामे. हवे एवी रीते मोक्ष नगरे जतां संसारनी मांहे एक मोटो मोह नामे पल्लीपति छे. ते सर्वे क्रोधादिक नीलो विगेरे कर्म परिणामनो राजा छे, ते महा जोरावर छे. इंद्र, चंद्र, नागेंद्र पण एने जीतवा समर्थ नथी एवो जोरावर मोहराजा तेने खबर पमी जे आ चारित्ररुपी झाझमां ज्ञानादिक धनथी नरेला मुनिराज मांहे बेठेला छे अने ते मोक्ष नगरे जाय छे, एवी खबर पमतांज मोहराजा जराक शोकातुर थइ विचारे छे के हवे आळसु थइ बेशी रहे कंइ सरे नहीं, जो बेशी रहीए तो सर्वे संसारनुं नाटक बंध पमी जाय, माटे पोताना मुख्य अधिकारीउं राग केशरी अने द्वेष गजेंद्रने हुकम आप्यो के, दुर्ध्याननामा टंकेलने जल्दीथी हुकम आपी सर्वे हथियार अने शुन्नटो युक्त आपणा दुर्बुध्धि जहाजने तैयार करावो. वली दुष्टाचार प्रमुख झाझो ते पण सज करो, एवो हुकम मलतांज राग केशरी आदिके पोतपोताना अधिकार प्रमाणे लमाश्नी सामग्री लेइ शुन्नटो सहित वहाणो तैयार कर्या. अने मुनिराजना चारित्र रुपी वहाणना सन्मुख थया, ते मुनिराजना चारित्र धर्म प्रधानना शुन्नटो स्थिरता रुपी मंडपमां बेठा हता तेने खबर पडतांज पोताना मालिकने सचेत कर्यो अने तुर्तज रणसंरुप नूमिए चारित्र धर्म राजानुं सैन्य सर्वे एकठुं कर्युं. तत्त्व चिंता प्रमुख वहाणो पण सर्वे साथे लाव्या अने लागलाज सम्यक्त प्रधान वहाणना मालिके मोह राजानो जे मिथ्यात्व रुपी मोटो शुन्नट तेने उमाव्यो—प्राण रहीत कर्यो. जे महा पराक्रमी महा विषम काम करनारो एवा प्रधानने सहेजमां एक लीलाए हण्यो अने उपशम

नामा शुभटे मोहराजाना रणथंभने तोड्यो क्षांति शुभटे ऊपशम रुपी खड्गनी धाराए क्रोधरुपी मोहना योद्धाने एकज घामां धराणीए ढाल्यो. मार्दवरुपी शुभटे पोताना वज्रे करी आठ सुवा सहित मान शुभटने हण्यो. आर्यव शुभटे सरलता रुपी औषधी पाइने कपट चोरटाने नाश कर्यो. निस्पृह नामा शुभटे समता रुपी बाणे करी लोभरुप लुंटेराने पाड्यो. अढारसें शीलंग रथनो धोरी एवो शीलरुपी शुभट तेणे कंदर्प शुभटनो अंत आण्यो. वैराग रुपी शुभटे हास्यादि षट् शुभट सहित राग केशरीने तथा द्वेष गजेंद्रने प्राण मुक्त कर्या. श्रुत ज्ञान जोगादिक शुभटोए निद्रादि शुभटोने हण्या, धर्म ध्यान शुभटे महातिक्ष्ण जेदक हथीयारोवडे मोहना विविध शुभटोने छिन्न जिन्न करी अगोअंगथी जूदा कर्या. शुक्ल ध्यानरुपी शुभटे क्षपक गुणरुप बाणोना प्रहारे करीने तुपेला अने जाहेर मोहादिक सर्वे कर्म परिणामना शुभटोनो अंत आण्यो तेवारे ते मुनिराज परम समजावने प्राप्त थइ निश्चित आत्मिक अमर राज्यने पाम्या एम आत्मानुं अने मोहराजानुं वंनेनु जोर विचारी शत्रुथी पोतानुं सवायुं बल फोरवी मोह परिणामने जीती समजाव करवो. परअनुरागे प्रवर्त्तवुं तेज वध छे अने स्वगुण अनुयायीपणे प्रवर्त्तवुं तेथी मुक्ति छे. केटलाक आचार्योनु एवुं कहेवुं छे के धर्म ध्यान छठा गुणठाणाथी ते आठमा गुणठाणा सुधी होय, वली केटलाक आचार्योनुं कहेवु एवुं छे के जो धर्मध्यान चोथे गुणठाणे न होय तो वस्तुना धर्म जाणया विना सम्यक्त रहे नहि माटे अर्हींआं लखवानु एटलुज छे के धर्म ध्याननो मनोरथ करवो ए पण धर्मध्यान मांहेज गणीए. वली बीजी रीते चार ध्यान कह्यां छे तेनां नाम–पिंडस्थ (१) पदस्थ (२) रुपस्थ (३) रुपातीत (४)

(१) पिंडस्थ–हवे पिंडस्थ ध्याने करीने सम परिणाम करवो ते कहिये छीए पिंडस्थ कहेतां शरीरनी अंदर असंख्यात प्रदेशी

आपणो निर्मल आत्मा ज्ञानादि अनंत गुणोए व्यापी रह्यो छे, ते सिद्ध परमात्मा सरखो हुं एकज निर्मल तत्त्व छुं. पुद्गलादि अन्य पिंडमां मारे कांइपण चेष्टा करवी अथवा ए विषे बोलवुं अथवा ए विषे इष्टानिष्टनुं चिंतववुं मने न घटे. एम पुद्गल पिंडथी निवर्त्ति शुद्ध परिणामे रहेवुं ते समभाव जाणवो. सिद्धना पिंडने विचारी अने पोताना पिंडने पण तेज रुपे विचारी निर्धार करी स्थिर समाधि पदने भोगववुं.

(४) पदस्थ—अरिहंतादि पांच पद अथवा नवपद आत्मानां आत्मा मांहेज छे. जेम त्रेवीशमा तीर्थंकर पार्श्वनाथ अरिहंते धरणेंद्रने पूर्वना नागना भवमां काष्टअग्निमांहे बलतो जोइ कह्युं. " ॐ असिआ उसायनमः " एटले के हे चेतना! जे जीवे रागादि परिणामनो अंत कर्यो तेज अरिहंत पदने पाम्या. तेम अरिहंतपद प्रगट करवानी शक्ति तारी चेतनामां छे तेज तुं सत्तागते पोतेज अरिहंत रुपी छुं. तेज अरिहंत पदने प्रणम एटले अरिहंत पदनो परिणामी था. वली " सि " एटले केवल ज्ञानादि स्वसंपदा प्रगट पणे भोगवता एवा जे सिद्ध परमात्मा छे तेवोज तुं आत्मा सत्ताए सिद्ध समान पोतेज छुं. पोतानी स्वसंपदा चूकी मिथ्यादृष्टिए आ नागना देह रुपी अस्थि, मांस, रुधिरादिकना पिंडने पोतापणे मानी तुं पोतानी स्वगुण संपदाने न चूक. अनेक जीवो पर परिणामिकता मूकी स्वगुण पर्यायना कर्त्ता, भोक्ता, स्वगुण पर्याय मांहेज निज उपयोगनी व्यापकता, ग्राहकता, रमणता करतां स्वतंत्र स्वभाव सिद्धिनी व्यक्तिना भोगी थया. तो सिद्ध पद प्रगट करवानी सत्ता ताराज आत्मामां छे तो तुं पण ते सत्तानो परिणामी था. वली " आ " एटले आचार्यपद ते ज्ञानाचार, दर्शनाचार, चारित्राचार, तपाचार, वीर्याचारनुं आचरण करनार ते आचार्य आत्माज छे. तुं

पण ज्ञानाचारादि पंचविधि आचारनो परिणामी थाय तो आचार्य पद तारामांज छे माटे आचार्य पदने प्रणम, आदर.

हवे " उ " एटले उपाध्याय पद ते द्वादशांगनु जाणवु, ज-णवु, जणावतुं ते शक्ति पण आत्मानी अंदरज छे. तो तुं पण उपा-ध्याय पदने प्रणम, आदर

वली " सा " एटले साधुपद–पोताना स्वरुपे शुद्धोपयोगे अ-प्रमत्तभावे एटले गफलत रहित सचेत थइ परद्रव्ये राग द्वेषवंत न थाय, तेज शिव मार्गने साधे अने तेनेज साधु कहीए तो अप्र-मत्तभावे रहेवानी सत्ता आत्मामांहेज छे, तो तुं पण अप्रमत्त भावनो परिणामी थइ साधुभावनुं सन्मान कर एम पंचपरमेष्टी पद आत्मामांहेज छे. माटे आत्मपदनुं ध्यान करतां पचपरमेष्टी पदनु ध्यान थाय छे, अने पंचपरमेष्टी पदनुं ध्यान करतां आत्मपदनुं ध्यान थाय छे एम समजवु. वली बीजां चार पद मेलवी नव पद-मय आत्मा जाणवो ते कहीए छीए

सम संवेगादिक गुणा, क्षय उपशम जे आवेरे ।
दर्शन तेहज आतमा, शुं होय नाम धरावेरे ॥
वीर जिणेसर उपदिशेछ ॥

सम, संवेगादि शब्दथी निर्वेद, अनुकंपा, आस्तिक्यता ए पांच गुण ते मिथ्यात्वना क्षय तथा उपशमथी आवे तेथी जे सम्यक् दर्शन प्रगटे तेने सम्यक् दर्शन कहीए एटले जे मिथ्यात्वे दबा-एलो दर्शन नामा आत्मानो गुण दर्शन रुप प्रगट थयो ते आत्मा-नोज छे पण अन्य द्रव्यनो नथी माटे दर्शन गुण ते आत्माथी अभिन्न माटे आत्माज छे पण हमे समकीती छीए एम जूतुं नाम धरावबाथी शु थाय ?

ज्ञानावरणी जे कर्म छे, क्षय उपशम तस थायरे ।
तो होय एहज आतमा, ज्ञाने अबोधता जायरे ॥ वीर० ॥

हवे ज्ञानपद कहीए छीए. ज्ञानावरणी जे कर्म छे तेनी पांच प्रकृति छे. ते उपशम अथवा क्षय थाय एटले आत्मानो ज्ञान गुण ज्ञानावरणी कर्मे दबाएलो आवरणना क्षय तथा उपशम थवाथी प्रगट थयो ते ज्ञान गुण आत्मानो आत्माथी अभिन्न माटे आत्माज छे.

जाणो चारित्र ते आतमा, निज स्वभावमां रमतारे ।
लेश्या शुद्ध अलंकर्यो, मोह वने नवि भमतारे ॥ वीर ॥

अर्थ—विभावथी विराम पामी विषयादिकनुं रमण छोडी निज स्वभावमां एटले पोताना ज्ञानादिक स्वभावमां शुद्ध लेश्याना अलंकार युक्त रमण कर्त्ता आत्माने चारित्र कहीए. पण पुद्गल सत्तानूमी जे परमाणु वर्गणारुप वर्ण गंध रस स्पर्श संघयण संस्थानादिकनुं स्थानक तेज मोहने रहेवानुं वन छे. तेमांहे चित्तनुं रमावबुं—भ्रमण करबुं तिहां चारित्र न होय पण पराचरण होय. ते पराचरण तजी आत्मा पोते पोताना आत्म स्वभावमां रमण करे तेने चारित्र कहीए माटे चारित्र ते आत्मा छे.

इच्छा रोधे संवरी, परिणति समता योगेरे ।
तप ते एहिज आतमा, वर्त्ते निज गुण भोगेरे ॥ वीर ॥

अर्थ—आत्मा पोताना ज्ञानादिक गुणनो भोगी थइ स्वगुण संतोषे तृप्त रहे. पण पुद्गलना स्पर्श, रस, गंध, रुप, शब्दादिना विषयनी इच्छा न करे, पोताना शुद्ध उपयोगने न चूकतां इंद्रियादिकने संवरी राखे के जेथी अशुद्ध उपयोग रुप परद्रव्य गुण पर्याय भोगववानी इच्छा थाय नहि. पोतानी परिणति पोताना द्रव्य क्षेत्र काल भावे

समता योगे करे, परयोगे थएली परिणतिने पर विरक्तताए समजाव करी पोतानी परिणति स्वजाव योगे करवी, तेने तप कहीए. माटे आत्मानी परिणति परयोगथी वारी आत्मयोगे करी आत्म स्वजावने जोगवतो तृप्त रहे तेनेज तप कहीए माटे ते पण आत्माज छे एम नव पदमांहे एकज आत्मपणुं छे, एकज आत्मजावमांहे नव पद छे. ए माहेला अरिहंतादि पंचपरमेष्टी पदने आत्मसत्तामांहे धारतो नाग पार्श्वनाथ अरिहंतना अतिशय युक्त वचनोए सम्यक्त्व पामी धरणेंद्र पदवी वर्यो वली अरिहंतादि पंच पदना अथवा नवे पदना द्रव्यगुण पर्याय अने पोताना गुण पर्याय अनेदपणे विचारतां, ध्यावतां, रमण करतां पोतेज आत्मा अरिहंतादिक पदनी व्यक्ति एटले प्रगटताने पामे एम चोवीशमा तीर्थंकर वर्द्धमान स्वामीए उपदेश्युं छे. आत्मा आत्मध्यानथी पोतानी रिद्धिने प्रगट करे एम पदस्थ ध्यान करी परद्रव्यथी विरक्त थइ सम परिणामे स्थिर थवुं तेज सामायक जाणवु.

रुपस्थ ध्यानथी समजाव करवो ते कहीए छीए रुपी शरीरमां रह्यो एवो हुं अरुपी चेतन मारुं रुप ज्ञान छे ए शिवाय अन्य रुप मारुं नथी अनंत गुण पर्याय सहित हुं ज्ञायकरुपे छुं, ज्ञायक शक्ति मारी मारामां छे, पुद्गल पर्यायमा अहपणे ममत्व करी हुं रागी द्वेषी केम थाउं ? एम सम परिणामे रहेवुं.

रुपातीत ध्यानथी समजाव करवो ते कहीए छीए—रुपातीत ध्यान शुक्ल ध्याननना घरनुं छे पण अहिंआं समुदाये नेगु आव्यु छे तेथी कह्युं छे. पण ए ध्यान शुक्ल ध्यान नेगुं समजवु. अहिंआं मार्गणा, गुणस्थान, नय, पक्ष, प्रमाण, मति आदि ज्ञान, क्षयउपशमजाव सर्वे छोडवा योग्य छे. ते अहिंआं खपमां आवे नहि. अहिंआं तो सिद्ध परमात्माना शुद्ध मूल गुण तेज रुपे पोताना आत्मतत्त्वने जाणी तन्मयताए थवुं एज ध्यान सकल विजावथी

छोडावी सिद्धिपदने आपे. एम रुपातीत ध्यान करी परम स्थिरताए अखंड आत्म संपदानुं भोगववुं. हवे धर्म ध्याननी चार भावनाउं भावबी ते नीचे प्रमाणे.

(१) मैत्री (२) प्रमोद (३) मध्यस्थ (४) कारुण्य.

प्रथम मैत्री भावना कहीए छीए—सर्वे जीव साथे मित्रभावनुं चिंतववुं, जेम पोतानुं इष्ट इछीए तेम मित्रनुं पण इष्ट विचारवुं, सर्वे जीवनुं कल्याण चाहावुं जेम के मारा जीव मित्रो मिथ्यात्वादिकने वश पडी विषय कषायादिकनी वेदना वेदी भवभ्रमणना तापने भोगवे छे, मारी जे शक्ति छे ते फोरवी शत्रुना तावाथी जीव वंधुउंने छोडावुं अगर हजु पण मारी शक्ति विशेष होय तो एक जीवने पण मिथ्यात्वादिकने वश रहेवा देऊं नहि. वली कोइनुं बीलकुल बुरुं चिंतववुं नहि, सर्वे पोताना ज्ञानानंदना भोक्ता थाउं एम चिंतवन करवुं ते मित्र भावना जाणवी, इहां सर्वे जीवो उपर समपरिणाम करवो ते सामायिक जाणवुं.

बीजी प्रमोद भावना कहीए छीए.

पोताना धर्माचार्य अने बीजा पण स्वपर समयना जाण एवा आचार्यादिक स्वरुप रमण करता, सहजानंदी, ज्ञानानंदी, दर्शनानंदी, श्रुत अभ्यासी, सम्यक्वंत, जिनेश्वरना वचनना विस्तार करवा वाला शासनना प्रभावको आदिने देखी जाणी पोताना चित्तमां तेउं मलेतो हर्ष उमंगनुं आववुं, चित्तमां प्रमोदनुं प्रसरवुं ते प्रमोद भावना कहीए, इहां तत्ववेत्ता, तत्वभोगी, रागादिक रहित मध्यस्थ परिणामीउंनुं बहुमान ते पूर्ण समभावनुं कारण माटे समभाव कहीए. वली तेवा पुरुषोना मेलापथी चित्तमां महा आनंद प्रगट थाय. आज मारे ज्ञानी पुरुषोनो समागम थयो, आज मने एमनां दर्शन थयां, हवे हुं एमनी सेवा भक्ति करीश, आज मारां पाप दूर थयां, मोटे पुण्यनो उदय थयो, ए पुरुषो अनंत गुणोना धणी छे, मोक्ष सुखना

(१) पिंडस्थ—ज्ञानादिक अनंत पर्यायनो एक पिंड हुं आत्मा वर्णादि अनंत पर्यायनो पिंड पुद्गल विगेरे पर पर्यायनो पिंड हुं नथी.

(२) पदस्थ—ज्ञान दर्शनादि अने दान लाभादिनुं स्वामित्व ते माहरुंपद छे, वर्णादि शब्दादि परपद ते माहरुं नथी.

(३) रुपस्थ—ज्ञायकरुप माहरुं छे, वर्णादिरुप माहरुं नथी.

(४) रुपातीत—अनंतगुण व्यक्तसिद्ध अरुपी समान हुं रुपा- हुं.

बीजा ग्रंथोमां ए चार ध्यान जूदी रीते लख्यां छे पण अहिआं मूल अध्यात्म रीते लख्युं छे.

रनां वचनरुप परम अमृत पाइ परम आल्हाद उपजाववावाळा, मोहना जेथी मूर्छित जीवोने जिनवचन सुधारस घांटी सचेत करवावाळाने हुं केवी रीते रींझवुं ? मात्र प्रमोद सहित तेमनी आ- णामां रहेवुं एज मने परम प्रमोदनुं कारण छे. गुणीना गुणानुवादमां प्रमोदित थवुं ते पण समजाव जाणवो.

॥ दोहा ॥ समकीत दायक गुरु तणो, पच्चुवयार न थाय।
भव कोमा कोमे करी, करतां सर्व उपाय ॥

त्रीजी मध्यस्थ भावना कहीए छीए.

आ संसारमां अनेक जीवो कर्मने वश पडेला, पोताना स्वरुपना अजाण, देव गुरु धर्मादि तत्त्वने नहि जाणता अविनय, आशातना, विराधना, हिंसा, जूठ, व्यभिचार, व्यसन विगेरे अनाचारने सेवता देखी द्वेष करवो नहि, मारवुं, ताडवुं, ठगवो, जबराइ नहि करतां

तेउं उपर दया लाववी के आ बापडा केवी रीते अने क्यारे धर्म पामे. पोताथी तेउंने बोधी शकाय एवुं होयतो बोध आपी मार्गमां लाववा. कदापि बोध न पामे तो बीजाने बोध देवानी सत्ता मारा आत्मामां नथी. पोतानी अवस्थिति पाके मार्ग सन्मुख थशे एम जाणी मध्यस्थ परिणामे रहेवुं ते समभाव जाणवो.

चोथी करुणा भावना कहीए ठीए.

सर्वे जीवो सत्ताए सिद्ध समान छे. कर्म वशे शरिरादिकना ममत्वे अशुभ उदये करीने जन्म, मरण, भय, शोक, रोग, वेदना वियोग, छेदन, भेदन, ताडन, तर्जन आदि अनेक वेदनाने सहे छे; पण एवा मुज समान जीवोने द्रव्य अने भावथी हुं केम दुःखी करुं ? चांपवुं, चगदवुं, छेदवुं, प्राणघात करवो, भय त्रासादिक पमाडवुं मारा तनमन वचनथी न थाय; माटे हुं सावचेत रहुं. मने उदय आवेला कृत्यो करवां पडे छे ते उपयोग ठोडी न करुं अने संजम निर्वाह अर्थे जो कांइ करवुं पडे तो परमेश्वरनी आणाए उपयोग राखी करुं. वली हुं कोइ जीवने पण त्रिकाले दुःखनो कारण न थाऊं. वली मिथ्यात्व कषायादि उन्मार्गमां न पाडुं, न चलावुं, पण जेम बने तेम आत्म समाधिना भोगी करुं. ते करुणा भावना जाणवी. एम मैत्रादिक चारे भावना भावतां समभाव पामिए.

शुक्लध्यानथी समभाव करवो ते लखीए ठीए.

मारा ज्ञानादि गुणो सरवे पुद्गल ममत्वे विषम भावने पामेला छे. एटले शरीरने पोतापणे जाणतां, मानतां, अनुभवतां कोइ पुद्गल इष्ट अने कोइ पुद्गल अनिष्ट, वली केटलाक जीवो ऊपर इष्टता अने केटलाक जीवो उपर अनिष्टतानो संकल्प थाय छे; तेज संकल्प विकल्पना विकारे विषमता पामेला मारा गुणो समभावे करी विषमता मटाडी आप आपणुं पराक्रम प्रगट करी पोतपोताने कामे लागे. जेमके ज्ञान, निर्मल ज्ञानरुप कार्य करे. दर्शन, केवल दर्शन-

रूप कार्य करे चारित्र ते शुरू रमणाएंद कार्य करे एम सर्वे गुणो आप आपणा स्वजावेज प्रगट थाय. ते शुक्ल कहेतां निर्मल ध्याने वने ते शुक्लध्यान पर आलंवन विना आत्म स्वरूप उलखी (जाणी) ने तन्मयपणे ध्यावे. एवुं ध्यान ते शुक्लध्यान कहीए. जे पुरुष शांत दांत होय ते पोताना आत्म स्वरूपने विषे रमे. बीजो पुरुष शुक्लध्यान योग्य नथी. केमके सिरूनो पण एज स्वजाव छे. साधके पण एज स्वजाव आदरवो बीजा आचरणथी ए वस्तु मले नहीं. ते शुक्लध्याननां चार पाया छे तेनां नाम. (१) पृथक् वितर्क-सप्रविचार (२) एकत्व वितर्क अप्रविचार (३) सूक्ष्मक्रिया अनि-वृत्ति (४) अने व्युछिन्नक्रिया अप्रतिपाति

तेमां प्रथमना वे पायानुं अप्रमत्तजावे ध्यान थाय अने पाठ-लना वे पाया केवलीने ध्यावनाना छे अने ए ध्याननां विश्रामने विषे अनित्यादि जावनानो त्याग न थाय. भ्रम रहित पणे जे जावना छे ते ध्याननां प्राण जाणवा.

हवे ए ध्यानने विषे लेश्या त्रण होय तेनां नाम

(१) तेजोलेश्या (२) पद्मलेश्या (३) शुक्ललेश्या.

ए ध्यानने विषे वर्त्ततो जीव जेदनो जजनार थाय तेनुं चिन्ह ए छे जे आगमनी श्रद्धा पूर्ण होय, ए ध्यान थकी उत्तम धर्म प्रगटे. ए थकी स्वर्गना सुखनी प्राप्ति थाय मोटुं पुण्यानुबंधी पुण्य उपार्जे पण ए थकी मुक्ति थाय नहीं हवे मुक्ति थवा रूप शुक्लध्यान ते कहीए ठीए—त्यां प्रथम समपरिणाम थाय कपट रहितपणे जीवने मुक्तपणुं धारण करतो शुक्लध्यान एटले निर्मल ध्याननने ध्यावे उद्-मस्थपणे आत्मजावमां मन धरीने रहे त्यारे राग द्वेषने जीते ते घणीनी मुक्ति थाय. हवे ते पायानो विचार कहीए ठीए

पृथक्त वितर्क सप्रविचार नामा पहेलो पायो—एटले जी-

वथी अजीव जूदो करवो. अने स्वभावथी विभाव जूदो करवो—पृथक्त कहेतां भिन्न भिन्न जूदा वहेंची नांखवा. स्वस्वरूपने विषे तथा द्रव्य पर्याय विषे पृथक् पृथक् पणे ध्यान करवुं. पर्याय गुणने विषे संक्रमण करवा. गुणने पर्याय विषे संक्रमण करवा. एम स्वधर्मने विषे धर्मांतर भेद ते पृथक् कहीए. एनो जे वितर्क कहेतां श्रुत ज्ञानादि उपयोग एटले त्यां नाना प्रकारना नय निक्षेपा प्रमुखनो विचार ते श्रुतध्यान ध्यावुं थयुं. त्यां अर्थ अक्षर जोगादिकनो जे विचार तेनुं मांहोमांहे संक्रमण करवुं अथवा भिन्न भिन्न करवुं अथवा ए द्रव्यना गुण पर्यायमां रमण थाय छे. एवी रीते न्यारो न्यारो स्वपर विचार एटले आत्म द्रव्य भिन्न विचार. पुद्गलादि पांच द्रव्यने पर जाणी अथवा स्वजीवद्रव्य सिवाय षट् द्रव्यने परजाणी तेनो विकल्प टाली पोतानो उपयोग प्रत्येक द्रव्य गुण पर्याय एक एकनो जूदो जूदो विचार थाय. ते पृथक् कहेतां जे निर्मल अने वितर्क कहेतां स्वपरनो विचार करवो. एवी रीते एकाग्रपणे जे ध्यान ते पृथक्त वितर्क स्वपर विचार नामा पहेलो पायो जाणवो. एवी रीते परत्यागी स्वसत्ता स्वरुपमां उपयोग थीर करे ए पक्ष सर्वे शुरू व्यवहारनो छे तेने ज्ञान थकी भेद ज्ञान कहीए. ध्यान थकी शुक्ल ध्याननो पहेलो पायो कहीए. ए पायावालो स्वर्ग गति पामे ए पायो आठमा गुणठाणाथी अग्यारमा गुणठाणा सुधी होय. ए पायावालाने त्रणे जोग उत्कृष्टतानुं साधन थाय.

हवे एकत्व वितर्क अप्रविचार नामा बीजो पायो—एटले पोताना आत्म द्रव्य सिवाय अन्य जीव द्रव्य तथा धर्मादिक पांच द्रव्यना द्रव्य गुण पर्यायनुं ध्यान छोडी एक पोतानाज गुण पर्याय पोतामां एकत्वपणे ध्यावे एटले द्रव्य गुण पर्यायमय एकज हुं आत्मतत्त्व छुं, निर्मल सिद्ध परमात्मामां अने पोतामां कांइ भेद जाणे नहि, पोताना ज्ञानादिक अनंत गुण पर्यायनुं एकत्वपणुं एक

समये परिणतिनुं पोतानाज स्वरुपथी तन्मयतानुं करवुं, माटे एकत्व वितर्क अप्रविचार कहिए पण इहां वितर्क कहेतां, शुद्ध ज्ञानावलंबीपणे, अने अप्रविचार कहेतां विकल्प रहित, दर्शन ज्ञाननो समयांतरे कारणता विना, रत्नत्रयीनुं एकसमयी कारण कार्यतापणे जे ध्यानने वीर्य उपयोगनी शक्ति छे, तेथी एकाग्रपणे होंवाथी एज स्थानक विषे त्रणे जोग शुद्ध होय, अने वितर्क कहेतां विचार ते पण थोडोज होय, एटले मननुं चंचलपणुं थोडुं होय, जेम समुद्र पवन रहित स्थिर थाय, तेम मन विकल्पना कल्लोलो वगरनुं स्थिर थाय, एटले अहिआं विचार छे पण सूक्ष्म छे, एटले ए ध्यान अवधिज्ञान, मनःपर्यवज्ञाननो उपयोग देतां वनी शके नहि शामाटे के अवधि, मनःपर्यवज्ञानतो परानुयायी छे एनो विषय रुपी द्रव्यने जाणवानो छे, अने आ ध्याननो विषय स्वअनुयायी अने अरुपी द्रव्यने जाणवानो छे माटे ए वेनो उपयोग अन्योअन्य प्रतिपक्षी छे ते माटे ए ध्यान श्रुतज्ञानोपयोगथी निपजे, ए ध्यान थकी निर्मल केवळज्ञान पामे, पण ए ध्यानथी मुक्ति पामे नहि, शामाटे के ए पण योगादि ग्राहि छे, ते कारण माटे. एवी रीते एकाग्रपणे ए ध्यानने विषे प्रवर्त्ते तेनें एकत्व वितर्क अप्रविचार नामे वीजो पायो जाणवो, आ उपला ध्याननो विषय आगला पंडितोना लखाण उपरथी लख्यो छे पण मारा अनुभवमां नथी. कारण के विषय कषायथी विराम पामेलो नहि, एवो हुं तेथी एवी बुद्धि मारामां क्यांथी होय? माटे आ विषय कोइ अनुभवी पुरुषोनी गुरुगमथी समजी लेवो, उपरना ध्यानमां पवन रहित जेम दीपक अडोल शिखाए रहे छे, तेम विकल्प रहित मननी स्थिरता थाय छे, ए ध्यान पर्यायरुप छे, बारमा गुणठाणाना अंत सुधी ए ध्यान छे—

हवे सूक्ष्मक्रिया अप्रतिपाती नामे त्रीजो पायो—वीजा पायाना अंते केवलज्ञान पामी तेरमा गुणठाणामां केवलज्ञान दर्शन उपयोगमां

वर्त्ते श्हां बीजुं ध्यान ठे नहि, तेवारे तेरमाने अंते चौदमे जतां त्रीजो पायो शुक्लध्याननो जाणवो. एक काय योग वाहिरथी रुंधेलो ठे. तथा मन जोग, वचन जोग, समस्त रुंधेला ठे. तथा केटलाक आचार्य कहे ठे के वाहिरज रुंधेला ठे, एवी रीते वादर जोग रोकीने तथा वचन कायाना, सूक्ष्म जोग रोकी अयोगी थयो, त्यां अप्रतिपाती आत्मानुं निर्मलवीर्य अचल परिणाम ते सूक्ष्मक्रिया अप्रतिपाती पायो जाणवो, सत्ताए पंचाशी प्रकृति हती ते मध्ये वोहोत्तेर खपावीने बाकीनी तेर रही, ए त्रीजो पायो जाणवो.

हवे चोथो पायो उछिन्नक्रिया निवृत्ति नामे कहिए छिये. जे जोग कायानो सूक्ष्म रह्यो हतो, ते पण रोक्यो, एटले सर्वे जोग रुंध्या, ते सर्वे क्रियानो श्हां उछेद थइ गयो, अने श्हां शैलेशिकरण करे, एटले शैल कहेतां, पर्वत जेम कोइ पवनथी कंपे नहि तेम अजोगी मुनिश्वर शैलेशिकरणे पहोंच्या थका निःकंप पणे रहे. तेर प्रकृति जे रही हती तेनो पण त्यां क्षय करीने अकर्मा थाय, सर्व क्रिया रहित थइने स्वस्वरुप प्रगट करे ए ध्याननुं नाम समुछिन्न क्रियाशुक्लध्यान पण ठे, हवे ध्याननो चोथो पायो ध्यातां थकां शरीर, अवगाहना, आवखुं ए सर्व थकी अलगो थइने मोक्षमां जाय ए शुक्लध्याननो चोथो पायो कह्यो.

हवे ए शुक्लध्याननना चार पायानां फल कहे ठे. प्रथमना जे बे पाया ठे तेमांना पहेला पायाने ध्यावावालो—ऊपशम भाव होवाथी पमेतो देवलोके जाय, अने क्षायक भाववालो बीजो पायो अंत सुधी पुरो करी केवलज्ञान पामे. अने ऊपरना बे पायामांना सूक्ष्मक्रिया अप्रतिपाती पायामां मरण ठे नहि. अने चोथे पाये पहोंचीने मोक्षे जाय ए पाछा पमे नहि. माटे ए त्रीजो अने चोथो बंने पाया मोक्ष गतिना दातार जाणवा. शुक्लध्यान वालो यथार्थ पदार्थ देखे, आ-

श्रवनो नाश देखे, ने ससार स्वरूप ए जवनी परंपरानुं कारण देखे अन्य पदार्थो सर्वे आत्मा थकी विपरीतपणे जाणे. ए शुक्लध्याननना विसामामां एवी रीते जाणे देखे तथा शुक्लध्याननना त्रणे पायामां उत्कृष्टि शुक्ललेश्या जाणवी चोथो पायो जे ठे ते तो लेश्या रहित ठे तो बीजा दोष तो होयज क्यांथी ? पण शुक्लध्याननना पहेला पायाथी शुक्लध्यानवालाना जोग पण सर्वे शुद्ध होय. ए शुक्लध्याननुं लक्षण कहिए ठिये अहिंसक होय, मोह रहित होय, स्वपर विवेकी होय, तत्त्वबुद्धि होय, वली अबंध थयो माटे उपसर्ग, परिसहथी कपे नहि, निर्भयपणे वर्त्ते, सूक्ष्म अर्थने विषे पण मुंझाय नहि, निःशंकपणे रहे, मोह मायाना लक्षण थकी तथा सर्व संजोग थकी जूदो रहे, ए सर्वे विवेकनां लक्षण जाणवां, देह तथा उपकरणनी त्याग बुद्धिए असंग अनुष्ठाने वर्त्ते, एवी रीते जे मुनि ए लक्षणे ध्यानादिकने विषे प्रवर्त्ते, ते ज्ञान पामे ए रीते ध्याननो क्रम जाणीने जे प्रवर्त्तवुं एज परमात्मानी आज्ञा ठे, एवी रीते ते आज्ञानो अभ्यास करशे ते संपूर्ण अध्यातमज्ञानी थशे हवे ए ध्याननो महिमा कहीए ठिये

के ज्यां एवुं परिपक्व उत्कृष्ट ध्यान पामे थके इंद्र, चक्र, नागेंद्रनी पदवीने तो ए मुनीश्वर तृण बरोबर गणे ठे शामाटे के आत्मानो प्रकाश सुखे करे, एवु ज्ञान प्रगटे, ने वली जवनो नाश करे माटे एज ध्यानने सेवो, अने जे कामातुरी होय ते पण कामदशाने ठोके, शामाटे के जम स्वजाव जाणीने विषय सुखनो त्याग करे, पण रागदशा ठांडवी तो घणी दुष्कर ठे, अने जे ध्यानवंत मुनीश्वर ठे, ते तो परमात्माइपज साक्षात् दरशे ठे, ते ध्यानमा तृप्ति पामीने फरीने ने रागादिक न वठे, अने बीजा जे जीवो रह्या तेने रात्रि सर्व निद्रामां जाय ठे, अने ध्यान दशावालाने रात्रि तो उंघ्यज, महोछव सरखा आनंदमां जाय ठे, जेम हवड कुवानुं पाणी कोळाएलुं

बगरेलुं होय, तेवुं ध्यान विनानुं मन जाणवुं. अने जेने सर्व थकी सिरू फलनी इछा होय ते ध्यानरुपी घटमां मनरुपी जल नरे तो निर्मल थाय, जेम हवरू कुवानुं पाणी घटमां नरवाथी निर्मल थाय छे, ते प्रमाणे जाणवुं. सर्व क्रियानुं फल ते ध्यानथीज छे. अने ध्यान ते परमार्थनुं कारण छे. वली अतिशय अनिष्ट विषयपणुं होय अने घणे प्रकारे ते उदयना कष्टमां पड्यो थको पण निश्चलपणुं न ढंरे तेने आत्मा विषे लीन कहीए. प्रगट दीठो जे मोह सुखरुप सूर्य तेने केम ढोरे? अपितु नज ढोरे. वली जेणे शास्त्रना विचारथी नास्तिकनाव तदन हण्यो छे, तेनुंज ज्ञान मोटुं छे. जेम सूर्यना तेजमां चंरमा ग्रह नक्षत्र तारा तथा दीपकनुं तेज समाइ जाय छे, तेम ध्याने करीने नेदाणो छे अज्ञानरुप अंधकार जेनो ते प्राणीने महा आनंद रुप आत्मानुं तेज ते अनुनव ज्ञानमां शोनी रह्युं छे. वली ते प्राणीने घणा कालनो समता स्त्री साथे वियोग हतो ते एक क्षणमां नाग्यो अने संयोग थयो. एवो ध्यानरुपी परममित्र मारे परम हेतु छे. ने मने परम वहालो छे एम ध्यानी पुरुषो कहे छे. संसारना कृत्रिम मित्र थकी शुं ?

हवे ध्याननुं घर वखाणीये छिये—के ज्यां कामरुपी ताप तो छे नहीं ने शीलरुप शीतल सुगंधे नरेली बेठको छे, त्यां वली मोटी समतारुपी तलाइ कहेतां गादी तकीए बेठो छे. एटले ध्यान मंदिरमां आत्मा बेठो थको, निवृत्ति राणी साथे परमानंदने नोगवे छे वली ज्यां शीलरुप सिंहासन छे. इंड्रियदमन रुप शांतजल नरेलुं छे. समतारुपी पोलीया खडा छे. आत्मा परमात्मामां अंतर रह्यो नथी अने पंरित लोकोना झघडा विवाद घणा हता ते ए स्थानके ध्यानरुपी संधिपाले सर्वे तोडी नांख्या. अने तत्क्षण आत्मा अने परमात्माने अनेदपणे करी दीधो.

द्वे अमृत रस बतावीए छीए—अजाण लोको घणे ठेकाणे अमृतरस माने छे पण ज्ञानी लोकतो ध्यान विषेज अमृत माने छे.

स्वागताछत्तम् ॥

कामृतं विषजृते फणिलोके । कदयिएयपि विधौ त्रिदिवे वा ॥
काप्सरो रतीमतां त्रिदशानां । ध्यान मेवतदिदं बुध सेव्यं ॥
गोस्तनेषु न सितासु सुधायां । नापि नापि वनिताधर बिंबे ॥
तं रसं कमपि वेत्ति मनस्वी । ध्यान संभवधृतौ प्रथते यः ॥

अर्थ—नाग लोकमां अमृत क्यां थकी होय ? ए विचारा विषयमां रंगाइ गएला छे. कोइ कहेशे के चंडमामां अमृत छे तोपण ते वात जासन थती नथी कारणके ते दिने दिने क्षीण थतो जाय छे. ज्यां क्षीणपणुं होय त्यां अमृत न होय कोइ कहेशे के देव लोकने विषे अमृत छे ते पण संभवतुं नथी, देवलोको पण अत्यंत विषयरसे व्याप्त, अप्सराना रंगमां रंगाएला छे इर्षादि वहु दोषोए करी अने मरणादिना भये करी व्याकुल छे माटे फक्त ध्यानमांज अमृत छे ते माटे हे पंक्तितो ! ध्याननुंज सेवन करो

बीजा छंदनो अर्थ—केटलाक लोको गायना दुधमां अमृत माने छे. कोइ साकरमां माने छे. केटलाक स्त्रीना ओष्ठमां अमृत माने छे पण जे जे ठेकाणे लोको अमृत बतावे छे ते अमृत नहीं थतां विषयादिक विकार झेरमय छे पण ते अमृतरस नथी अने अमृतरस ते तो अपूर्व छे, तेने तो अनुभवी पुरुषोज जाणे छे. अमृतरस चाख्या पछी बीजो रस चाखवानी तृष्णा होती नथी माटे शुक्लध्यानरूपी अमृतनो आस्वाद लेनारोज मुक्तिना सुखने पामे छे. ए चार ध्यानमांथी प्रथमनां आर्त्त रौद्रध्यान अवश्य छांडवा योग्य छे अने धर्मध्यान आदरवा योग्य छे. ए धर्मध्यानथी मुक्ति नथी पण मुक्तिनुं कारण थाय अने देवलोकना सुखने पामे. अने शुक्लध्याननां प्रथ-

मना वे पाया तेमां ऊपशमीने पहेलो पायो ते स्वर्गना सुखनो दातार छे अने क्षायकवालो वीजो पायो पामे ते केवलज्ञान अने मुक्तिनो दातार छे. एथी कोइक जीव स्वर्गने पामे पण घणा जीवो अहिं-आंथी उंचे चढी मुक्तिने पामे. जे पहेलो पायो आठमाथी ते दशमा गुणठाणा सुधी छे त्यां मरण नथी. अहिंआं जे स्वर्गनी गति कही ते नीचला उपला गुणठाणाने आश्रये कही छे. मरण थवानुं होय तो ठठे सातमे आवीने मरण करे अने चडेतो अगीआरमा गुणठाणे जइने मरण करे केमके अगीआरमा गुणठाणे शुक्लध्याननो पहेलो पायो संभवे छे. अने आठमा नवमा अने दशमा गुणठाणे मरणनो अभाव छे अगीआरमावालो मरण करेतो सर्वार्थसिद्ध विमाने जाय. ने आठमाथी चढतां अगीआरमुं न स्पर्शतां बारमा गुणठाणे जायतो ते अवश्य चौदमे गुणठाणे जइ सिद्धि पदने पामे. दशमा गुणठाणाना अंते मोहनिय कर्मनो क्षय करे तो बारमेज जाय पण अगीआरमे जाय नहीं. बारमा गुणठाणे गएलो जीव शुक्लध्याननो वीजो पायो ध्याय. त्यां त्रण कर्म जे ज्ञानावरणी, दर्शनावरणी, ने अंतराय तेनो नाश करे. अने मोहनिय कर्मनो तो दशमाना अंतेज नाश कर्यो छे. एम चारे घनघाती कर्मनो क्षय थयो. ए चारे कर्म आत्मगुणनी घात करवावालां हतां माटे घातीकर्म कहेवाय. बाकीनां चारकर्म ते आत्मगुणनी घात करतां नथी माटे ते चारने अघातीकर्म कहीए. ते तो शुभाशुभ फलने देखामनारां छे. पण जे घातीकर्म ते वीजा पायाना ध्यानथी नाश थाय. ते थणी केवलज्ञान पामे पण मुक्ति पामे नहीं; कारणके बारमा अने तेरमा गुणठाणे मरण नथी पण तादृश्य मुक्तिनुं कारण छे. त्रीजो पायो अयोगी-पणाने आपे पण मुक्ति न थाय. कर्म प्रकृति बहोतेर खपावे. आत्माने हलको करे अने चोथो पायो ध्यातां थकां सर्वे कर्मनो नाश करे ए पायाना अंते मुक्ति पामे.

हवे जे ध्यान कह्युं तेनो सार संक्षेपथी देखाडुं छुं–परजा-वनो त्याग करी, मननी चपलता टाली आत्मस्वजावमां स्थिर थवा-थीज मुक्ति थाय. एवा जीवने अहिंआं जीवतां पण मुक्तिज छे एम जाणवुं.

मामुज्झह मारज्झह, माडुस्सह इठणिठ अत्थेसु ।
थिरमिच्छह जइचित्तं, विचित्त झाणप्पसिद्धीए ॥

हे नव्य जीवो ! ध्याननां अनेक प्रकार छे ते ध्यान सिद्धि करवा माटे इष्ट अनिष्ट वस्तुमां मोह करशो नहीं, राग करशो नहीं, अने द्वेष पण करशो नहीं अने चित्तने आत्म स्वजाव मांहे स्थिर थापो.

मा चिठह मा जंपह, मा चिंतह किंचिजेण होइ थिरो ।
अप्पा अप्पम्मिरउं, इण मेव परं हवेज्झाणं ॥

हे नव्य जीवो ! तमे कांइ शरीरनी चेष्टा न करो वचनना जल्प न करो. मनमां शुज अशुज संकल्प चितवन न करो आत्माना परम स्वजावमां लक्ष स्थिरथोज करी रींज पामी रहो एम परम ध्यान होय मिथ्यात्वजावथी जीव विषमताने पाम्यो छे ते सम्यक्ज्ञावे समजाव करवो. जीव अनादिनो ज्ञान गुणे युक्त ठतां पुद्गलनो संगी पोनाना अगुरुलघु स्वजावमांहे जासता अनेक ज्ञेय पदा-र्थोमां ममत्वथी हुं अने मारुं मानी पर पुद्गल रुपने ए हु वु एम जाणी पुद्गलमा रहेला जे वर्णादि स्वजाव अने मिलण विखरण रुपादि जे पर्याय तेमा रागी द्वेषी थइ ज्ञान अज्ञानरुप, दर्शन अद-र्शनरुप, चारित्र पराचरणरुप, वीर्य बाधकरुप (करणवीर्य रुप), तप अतृप्तिरुप (असतोषरुप), स्वामित्व परस्वामित्वरुप, कर्त्ता परक-र्त्तारुप, जोक्ता परजोक्तारुप, ग्राहकता परग्राहकतारुप, व्यापकता पर-व्यापकतारुप, रमण पररमणरुप, दान पुद्गल विषयादि परिणामी,

लाज पुद्गल धनादिनो, जोग पुद्गल पर्यायनो जोगी, ऊपजोग पुद्गल गुणनो, अने वीर्य इंद्रिय कार्यमां, ए प्रमाणे अनंत गुणो विषमताने पाम्या. ते मात्र परपुद्गलने पोतापणे जाणवाथीज थयुं. तो पोतानुं स्वरूप ज्ञानादि सत्तावंत जेम छे तेम यथार्थ जाणवाथी सर्वे विषमता मटी समजावनी प्राप्ति थाय.

हीराचंद नामना एक गृहस्थने में पूछयुं के तमे कोण छो ? ते बोल्यो के हुं हीराचंद छुं. में तेने पूछयुं के आ शरीरनी अंदर मांस, रुधिर, हाडकुं, चामडुं आदि अनेक पदार्थो छे. तेमां हीराचंद छुं एवुं जाणनार कोण ? तो ते बोल्योके सर्वे मलीने हीराचंद. में तेने पूछयुं के तमे हीराचंद छुं एवुं जाणनार एक छो के अनेक छो ? हाडकुं, चामडुं, मांस आदि अनेक पदार्थनुं जाणनार कोण छे ? हाड, चर्मादि अनेक तत्वोथी बनेलां छे, ते तत्वो अनेक परमाणुओथी बनेलां छे. अने ते समये समये जुनां विखरे अने नवां आवतां जाय छे. तेमांथी पूर्व अपर समयना अनुभववालो कोण छे ? अनुभवतो एकज स्थानकमां स्थिर रहेतो देखाय छे. तो ते अनुभववंत कोण छे ? त्यारे ते कहे छे के हुं ए वात कांइ जाणतो नथी. पण एटलुं जाणुं छुं के आ शरीर तेज हुं छुं. शरीर ए हुं छुं एवुं जाणनार तमे एक छो के बहु छो ? ते कहो. त्यारे हीराचंद कहेके बहु मलीनेज एक थाय छे. पण कोइ चीज एकली होती नथी. में तेने कह्युं के बहु चीज मलीने शाक थाय छे. ते एक शाक कहेवाय छे पण खाराश बहु चीजोए मलीने करीके एकला लूणनीज थइ ? बहु चीजो मलीने खाराश थइ नथी. जेटली शाकमां चीजो पडी छे तेणे आप आपणा गुण, स्वाद, विगेरे छोड्यां नथी. ने एकला लूणे खटाश, खाराश, विगेरे बहु स्वाद पण कर्या नथी. मात्र लूण पोताना खाराश गुणनेज करे छे. तेम ज्ञायकता शक्तिना कर्त्ता तमे एक चेतनाज छो. जेम शाकमां नेगुं थएलुं लूण पोताना खाराश स्वभावने, पाचन

शक्तिने, दस्त साफ करवा विगेरे पोतानी शक्तिने छोडतुं नथी अने हिंग, आमली विगेरे परशक्तिने ग्रहण करतुं नथी तेम शरीरमां रहेलो आत्मा पोतानी ज्ञानशक्तिने छोमतो नथी अने रुधिर मांसादिनी शक्तिने ग्रहण करी शकतो नथी माटे आत्मा एकज चैतन्य शक्तिवंत, नित्य, अबाधित शाश्वतो छे शरीर वहु परमाणुनो पिण ए तमने जाणतो नथी पण शरीरने जाणवावाला तमेज एक शुद्ध चेतना पोतानी शक्ति सहित छो तेथी स्वपर स्वरुपने जाणी परस्वरुपनुं ममत्व त्यागी पोतानी चेतनाशक्तिमां स्थिर थवुं

हवे वार भावनानां नाम कहीए छीए. (१) अनित्य (२) अशरण (३) संसार (४) एकत्व (५) अन्यत्व (६) अशुचि (७) आश्रव (८) संवर (ए) निर्जरा (१०) लोकस्वभाव (११) बोधि दुर्लभ (१२) धर्म भावना.

पढम मणिच्च मसरणं, संसारो एगया य अण्णत्त ॥
असुइत्तं आसव सं, वरो अ तह णिज्जरा नवमी ॥ १ ॥
लोगसहावो बोही, दुल्लहा धम्मस्स साहगा अरिहा ॥
एआउ भावणाउ, भावेअव्वा पयत्तेणं ॥ २ ॥

(१) अनित्य भावना—आ संसार अनित्य छे. धन, कुटुंब, राज्य, लक्ष्मी, शरीर, चपल पुद्गल परमाणुओथी बनेलां छे ते स्थिर रहे नहि सध्या रंग समान, वली पाणीना परपोटा जेवा डाभनी अणी ऊपर रहेला जलबिंदु जेवां, वादलानी छाया जेवां चपल, विनाशिक छे आपणी इछाए चालतां नथी तेम आ शरीर अने इंद्रियादिकनी शक्ति, वली कामभोगादिकनी शक्ति ते पण राखी रहेती नथी तेम आपणी इछाए पण चालती नथी एवा अनित्य पदार्थ ऊपर पोतानुं सिद्ध समान आत्मस्वरुप चूकी कोण मूर्ख राग करे ?

(२) अशरणभावना—मरण समये चक्रवर्ती, इंद्र, तीर्थंकर आदि गमे तेवा मोटा पुरुषोने पण धन, कुटुंबादिक कोइपण बचावी शकतुं नथी. तेम रोगादिकनी वेदनाने पण कोइ मटाडी शकतुं नथी. एटले कोइ कोइनुं शरण थतुं नथी. संसार मांहे जन्म मरण अने नरकादि दुर्गतिनी वेदना मटाडवाने स्त्री, धणी, पुत्र, माता, पिता, सज्जन, हेतु, नोकरो विगेरे कोइपण शरण थतुं नथी. पण दुर्गति आदिथी बचाववाने एक आत्मधर्म एज शरण थाय छे. अने आत्मधर्मना दातार पोताना धर्माचार्य ते पण व्यवहारथी शरण जाणवा. एम अशरण भावना भाववी.

(३) संसार भावना—आ संसारने विषे सर्वे जीव, लोकाकाशमां रहेला सर्वे पुद्गलोने विषयभावे तथा कषायभावे, तथा सर्वे वर्गणा पणे भोगवी चूक्या छे. जे पोतानी माता हती ते स्त्री तथा जे स्त्री हती ते माता, जे पिता हतो ते पुत्र तथा पुत्र हतो ते पिता, शेठ हतो ते नोकर तथा नोकर हतो ते शेठ, भीख आपनारो हतो ते लेनारो थयो तथा लेनार हतो ते आपनार थयो, तथा शत्रु ते मित्र, मित्र ते शत्रु, जे सुंदर छवीवाला महा बलवंत हता ते कोढादिक महारोगोए पीडित, दीन, दुःखीया, दरिद्र थया, जे निगोदावस्थामांहे बहु दुःखना भोगी हता ते देवादिक रिद्धिने पाम्या, अने जे देवादिक रिद्धिवंत हता तेज एकेंद्रिय, विकलेंद्रिय, नरकादि परतंत्रपणे वेदनाना भोगदारी थया, वली जे महंत पूजाने पामता हता तेज महा निंदवा योग्य थया, केशर चंदन पुष्पादिकना भोगी हता तेज केशर चंदनादि एकेंद्रियनी गति पामी पोताना अंगे छेदन भेदननी वेदना सही अन्य जीवोने भोगना कारण थया, एवी एवी रीतना अनेक संबंधो संसारने विषे सर्वे जीवो करी चूक्या छे. एवो विकराल भयंकर विचित्र

गतिवालो आ संसारकप समुद्र अथाग जाणी हे चेतना! तारे पोतानुं आत्मतत्त्व चूकी, आ संसार समुद्रना किनारे निर्जय रहेवुं ए तने घटतुं नथी एवा संसारमां भ्रमण करतां हे जीव! तें अनंत पुद्गल परावर्तन कर्या, हवे तारी निर्मल ज्ञायकता शक्ति संभाली तारी सत्तारूमिमाहे प्रवेश कर संसार भ्रमण करतां रागादिक विपमता परिणामे करी तारा ज्ञानादिक गुणथी खाली रह्यो हवे संसार भ्रमणने वधारवावाला एवा रागादि परिणतिना विपमभावने तुं न कर. ए विपमताने मटाडी समभावनो लाज लेवो ते सामायक जाणवुं.

(४) एकत्व भावना—आ जीव संसारमां पोते एकलोज आवे अने पोते एकलोज जाय, सुख दुःखादि विपाक पोते एकलोज भोगवे. पण तेमाहेथी कोइ भोगववा लागे नहीं तेम पोताना ज्ञानादि गुणो ते पण पोते एकलोज पामे, भोगवे, एम एकत्वभावना भावबी.

(५) अन्यत्व भावना—पोतानो आत्मा ज्ञानरूप छे अने शरीर जड अचेतन छे परस्पर भिन्न छे. आत्मा ते शरीर नथी अने शरीर ते आत्मा नथी शरीरना वर्ण गंध संस्थानादि ते आत्माना नहीं अने आत्माना ज्ञान दर्शन चारित्रादि ते शरीरना नहीं जे शरीरनुं ते सर्वे आत्माथी अन्य छे. धन, सज्जन, राज्य, वागादि सर्वे आत्माथी अन्य जाणी ते उपरथी ममत्व अने रागादि छोडी उदासिन्नपणे पोताना स्वरुपमां स्थिरथोज थवुं.

(६) अशुचि भावना—शरीर ते रस, रुधिर, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा, वीर्य, परु, आंतरडां, नसो, जाल, विष्टा, मूत्र, पित्त, श्लेष्म आदिनु पिंड त्वचाथकी टंकायलुं, ठेकाणे ठेकाणे केशोना गुंछ अने रुवांथी व्याप्त छे पुरुषना नव अने स्त्रीना बार द्वारे नगरना खाबनी पेठे दुर्गंधी वहेती रहे छे एवु शरीर कोइ काले पण पवित्र होतुं

नथी, हजारो समुद्रना पाणी अने पृथ्वी जेटली माटीथी मोंढुं धोइ पठी एक कोगलो मोंढामां नरी पीवाना पाणी नेगो नाखी कोइने पीवा आपे तो ते शुद्ध कहेवातो नथी. वली कोढ, जलोदर, नगंदर, वली क्रमीजीवोए करीने आकुल अने कंठमाल, रुढमाल, कठोदर, सफोदर, नूख, तृषा, काम आदि अनेक रोगोनुं उपादान जे मांहे अनेक रोगोथी व्याप्त क्षीणमां निकुं, क्षीणमां फीकुं, प्रेत सरखुं एवुं आ शरीर ते उपर, निर्मल आत्म अंग, अनंग, अविचलसुखनी खाणने चूकी कोण मूर्ख राग रसे रींझे ? एम जाणी शरीरादिकनो राग ठोरी निर्मळ आत्म अंग मांही स्थिर थवुं, ते समनाव जाणवो.

(७) आश्रव नावना—वली मिथ्यात्व एटले उलटी सद्दहणा अने कांइनुं कांइ जाणवुं, अविरति, प्रमाद, कषाय, अने मन, वचन, कायाना योग ए पांचे रस्ते कर्म परिणाम आवे छे. आत्मा कर्मपुद्गलवर्गणा साथे वंधाय छे. ते ज्ञानानंदी पोतानुं स्वरुप पोताना उपयोगमां राखवाथी अने मिथ्यात्वादिकथी परनावनो रस न आवे, एवी संनालथी रोकवुं. वली दानादिके करी शुनकर्म वंधाय छे, अने विषय कषाय परिणामे अशुन कर्म वंधाय छे, एवी वंध प्रकृति आत्मसत्ताने चूकावनार संसार नमण करावनावाली हेय जाणी आश्रवना परिणाम तजी चैतन्य परिणामी थइ सत्ता समाधि मांहे स्थिरथोन थवुं, ते समनाव जाणवो.

(८) संवर नावना—वली जे क्रिया वाह्य प्रवृत्ति अने अंतर परिणामथी आश्रवनुं रोकावुं थाय, ते संवर नावना. जेम क्षमादिक परिणामे क्रोधादिक आश्रवनुं रोकावुं थाय, मिथ्या परिणामे आवता आश्रवनुं रोकावुं सम्यक्त नावे थाय, अविरति एटले पंचइंद्रिय अने धनादिकना नोगमां राग रक्ततानुं विरक्त परिणामे रोकावुं थाय, मन, वचन, कायाना योगनी अशुद्ध नावमां प्रवृत्ति ते पलटावीने

ज्ञानादिक आत्म गुणमांहि प्रवर्त्तावदा अने आत्म धर्मना दातार एवा देवगुरु शास्त्रना आदर सन्मान मांहि प्रवर्त्तावदा, वली प्रमाद जावे आवता कर्म रस परिणामने शुरू उपयोगे शुरू सत्तारसी परिणामे रोकवा ते आठमी संवर जावना जाणवी.

(९) निर्जरा जावना—जेम कोइ वस्तुमां दावी राखवाथी आंबानुं फल पाके छे, तेम तपे करीने कर्मनु पचावबुं, पूर्व संचित कर्मनुं खरबुं ते निर्जरा. ते निर्जरा अकाम, सकाम बे जेदे छे अकाम निर्जरा शुजाशुज कर्म उदय आवेलां जोगवबाथी थाय छे, ते कंइ वंछित फलने आपे नहि सकाम निर्जरा कर्मनुं अनिष्टपणु जाणी ज्ञान शक्तिए कर्म रस जारवाने अर्थे षट्विधि बाह्य, षट्विधि अन्यंतर तपे करी कर्म रसने निरस करवो ते आत्म परिणाममा जरेलो कर्म रस, शुरूात्म जावना कामी थइ जोगवो तेने सकाम निर्जरा कहीए ते सकाम निर्जरा ज्यां सुधी देहने पोतापणे जाण्यो छे त्यां सुधी बनी शके नहि. अने अकाम निर्जरा तो मिथ्यादृष्टीए अनंतीवार करी ते कंइ लेखे आवी नहि, जे माटे जिनेश्वरनी आज्ञाए तपश्चर्या आदरबी, माटे जीवाजीव परिणामने जाणी, पर परिणाम मांहे राग, रीझ, खीज तजी पोताना शुरूात्म जावमां स्थिरजावे रहेबुं, पोताना ज्ञानादिक स्वजावना जोगी, अनुजवी थइ अखम धाराए आत्मानंद आस्वाद लेवो. पुद्गल वर्णादिक उपरनो रस ज्यां सुधी आत्म परिणाम मांहेथी निकलतो नथी त्यां सुधी निर्जरा थती नथी. माटे बाह्य अने अन्यंतर तप आत्म परिणाममांथी पर परिणतिनो रस काढवाना निवर्त्तवाना कामी थइ द्रव्य जावथी आदरवो, अतर परिणाममांहेथी पुद्गल गुण पर्यायनो रस काढवानो जाण्याविना बाहिरना तपादिक करनार बाल तपस्वीनी पेठे मात्र कायक्लेश करे छे. माटे पुद्गल रसे रींझेला आत्म परिणामने जिनबाणी रसे धोइ, आत्मरसे रक्त थइ, परमा-

नंद जोगी थवुं, पुद्गल रसे रींझेलो चेतना अनंत कालथी कर्म विपाकना कटुक रस जोगवी वारंवार जन्म मरणादिक करतो मोहनी निंद मांहे अचेतन सरखो थइ, जमताथी जमवत् वनी रह्यो छे, तेज कर्म रस अजावे सरस सुरसे रसी थइ परमपूज्य पदने पामे; माटे कर्म रसनी रींझ, राग, तजी समजावे वर्त्तवुं ऊपर जे बाह्य अभ्यंतर तप लख्यो ते नीचे प्रमाणे.

अणसणमूणोअरिया, वित्तीसंखेवणं रसच्चाउं ।
कायकिलेसो संलीणया य बज्झो तवो होई ॥

अणसण—अन्ननी इछानो निरोध ते अपवास, छठ, अठमादि अने एकासणादिक ते इत्वर अणसण जाणवुं; अने आयुष्य निकट जाणी मास, पक्ष, अगर केटलाकदिवस पहेलां जावजीव सुधी अन्नादिकने न इछवुं—जोगवुं, ते यावत्कथिक अणसण जाणवुं.

उणोदरी—पेट पुरुं जरवानी इछा नहि, एटले जात पाणीनी न्यूनता करवी, तथा उपकरणो तेमज रागादिक कषायनी न्यूनता करवी.

वित्तीसंखेवण—शरीरना जोग ऊपजोगनी वस्तु संजम अर्थे जे वापरवामां आवे छे तेमांथी घटाडवुं, एटले सय्या, आसन, आहारादिकमांथी घटाडवुं.

रसच्चाउं—एटले—दहीं, दुध, घी, तेल, मीठाश, पकवान सुखडी प्रमुख, ए छ विगय तथा मद, मदिरा, मांस, मांखण अने पंचेंद्रिउना विषयोने इछवुं नहि, अने विषयोना कारण धन, स्त्री आदिने इछवुं नहि, जोगववुं नहि.

कायकिलेस—काया उपर लोचादिक कष्ट पडे अगर बावीस परिसह आव्या छतां पण असंयमनी इछा नहि.

संलीणया—अेना चार जेद छे, ईंद्रियसंलीनता, कषाय संलीनता, योग संलीनता, विविक्त चर्या संलीनता. कषायने इच्छवा नहि आदर करवा नहि, मन वचन कायाना जोग असंजममां प्रवर्त्तावाने इच्छे नहि इंद्रियोने विषयमां प्रेर्यानी इछा नहि, संजम यत्ना न रहे एवी वस्तुने इछवी नहि.

एम ७ प्रकारे बाह्य तप जाणवो, ते सर्वथी अने देशथी एवा बे जेद जाणवो, अतर ऊष्टीविना उपर लख्या प्रमाणे बाह्य तप मिथ्याऊष्टी जीव पण करी शके, अने बाह्य शरीरने तपावे माटे बाह्य तप जाणवो.

पायछित्तं विणउं, वेयावच्चं तहेव सज्झाउं ॥
ज्झाण उस्सग्गो विअ, अभिंतरउं तवो होई ॥

अर्थ—पहेलुं (पायछित्तं के०) प्रायश्चित्त तप एटले कीधेला अपराधनी शुद्धि करवी कपट रहितपणे लागेला दोषने गुरु आगल प्रकाश करी तेनी गुरु मुखथी आलोयणा लेवी तेना दश जेद छे मात्र गुरुनी आगल पोताना करेला अपराधनु कथन करवु तथा गोचरी प्रमुखनुं जे आलोववुं ते पहेलु आलोचन प्रायश्चित्त. पूंज्याविना पातरुं प्रमुख परठववाथी मिछामि दुक्कड देवुं ते बीजु प्रतिक्रमण प्रायश्चित्त. शब्दादिक विषय उपर रागादिक कर्याथी तेनुं आलोचन करवुं अने बीजुं मिछामि दुक्कड पण देवुं एटले बन्ने बानां करवां ते त्रीजुं मिश्र प्रायश्चित्त अशुद्ध जात पाणी प्रमुखनो जे त्याग करवो ते चोथुं विवेक प्रायश्चित्त. कुस्वप्नादिक दीठाथी कायोत्सर्ग करवो ते पांचमुं कायोत्सर्ग प्रायश्चित्त पृथ्वीकाय प्रमुखनो संघट्ट थवाथी नीवी प्रमुख जे ७मासीपर्यंत तप करवुं ते छठुं तप प्रायश्चित्त पृथ्वी आदिकनो संघट्ट थवाथी कांइक दिक्षा पर्यायनी न्यूनता थइ होय ते अपराधनुं निवारण करवाने जे दुर्दम तप करवो

ते सातमुं छेद प्रायश्चित्त. मूल गुण नंग थवाने लीधे सर्वथा व्रत पर्यायनुं छेदन थवाथी फरी जे महाव्रत लेवां ते आठमुं मूल प्रायश्चित्त. अति संक्लिष्ट परिणामे करी कोइनो घातपात थइ गयो होय, तो सूत्रोक्त विधिए करी तप करवुं, अने त्यार पठी फरी महाव्रतने धारण करवां ते नवमुं अनवस्थाप्य प्रायश्चित्त. साधवी अथवा राजानी राणी प्रमुख स्त्रीने विषे संनोग थइ गयाथी बार वर्ष पर्यंत क्रियासहित अने लिंगादिक नेदे रहित तीर्थप्रनावना करी, फरी दीक्षा लेइने जे गछमां आववुं ते दशमो पारांचित प्रायश्चित्त. ए दश प्रकारे प्रायश्चित्त तप कह्युं.

विणओ—विनय तप, एटले गुणवंतादिकनी नक्ति करवी, तथा आशातना टाळवी इत्यादिक एना सात नेद छे. तेमां प्रथम ज्ञाननो विनय पांच नेदे छे. त्यां मत्यादि पांच प्रकारना ज्ञाननी बाह्यथी सेवा करवी ते पहेलो नक्ति विनय, पांच ज्ञाननुं अंतरंग प्रीतिसहित बहुमान करवुं ते बीजो बहुमान विनय, पांचे ज्ञाने करी दीठेला जाणेला पदार्थोनी सम्यक् प्रकारे जे अनुनवथी नावना करवी ते त्रीजो नावना विनय, पांचे ज्ञाननुं विधिए करी ग्रहण करवुं ते चोथो विधि ग्रहण विनय, अने पांचे ज्ञाननो जे अन्यास करवो ते पांचमो अन्यास विनय.

बीजो दर्शननो विनय बे नेदे छे,

(१) शुश्रूषा एटले गुरु आदि संगे उचित क्रियानुं साचववुं. (२) अनाशातना विनय एटले अनुचित क्रियाथी निवर्त्तवुं अथवा आशातना करवी नहि. एवी रीते दर्शननो विनय बे प्रकारे छे. ए बे प्रकारनो विनय ज्ञान दर्शन चरणादि आत्मगुणे अधिक धर्माचार्यादिनो करवो ते शुश्रूषानुं स्वरूप अनेक प्रकारे छे. (१) सत्कार एटले स्तवन तथा वंदनादिक करवां. (२) अन्युत्थान एटले आसनथी

उठवुं. (३) सन्मान एटले वस्त्र तथा पात्रादिके करी पूजा करवी. (४) आसनपरिग्रहण एटले अति आदरे करी आसन लावी आपीने स्वामी ! आ आसन उपर वेसो एम मुखथी कहेवुं तेमज (५) आसननुं प्रदान एटले मात्र मुख थकी कहेवुं एटलुंज नहीं पण ते प्रमाणे आसन देवुं (६) कृतिकर्म एटले वंदना करवी ए साधु प्रमुखनी अपेक्षाये जाणवुं (७) अजलिग्रहण एटले हाथ जोडवा (८) आवताने सामे जवुं (ए) वेठेलाने (पर्युपासना) सेवा करवी (१०) जनारीने वोलाववा जवुं ए दश प्रकारे शुश्रूषारुप पहेलो विनय थाय छे

वीजा अनाशातना विनयना पिस्तालीश जेद छे ते कहे छे (१) रुषजादिक चोवीश तीर्थंकर (२) जिन प्ररुपित धर्म (३) धर्माचार्य अथवा प्रव्रजाचार्य (४) व्याख्यान करनार वाचना दातार (वाचक) (५) वय, पर्याय तथा श्रुत ए त्रण प्रकारना थिविर (६) कुल, ते चंद्रादिक एक आचार्यनी सतति (७) गण ते पोतपोतामां सापेक्ष कुलनो समुदाय कोटिकादिक (८) संघ ते ज्ञानादिक गुण सहित साधु समुदाय अथवा गण समुदाय रुप विषे (ए) सांजोगिक, ते एक मंडलिमां जे साथे व्यवहार होय ते (१०) क्रियामा जे पोताना सरखी क्रियावाला होय ते एमनी साथे मतिज्ञानादिक पांच ज्ञान मेलवतां पदर थया तेने विषे (१) आशातनानो त्याग करवो, तेमज (२) जक्ति सहित वहुमान करवुं, तथा (३) उता गुण वर्णवीने यशः कीर्त्ति दीपावबी एवी रीते पूर्वोक्त पंदरने ए त्रणे गुणतां अनाशातना विनयना पिस्तालीश जेद थाय छे. ए अनाशातना रुप वीजो विनय कह्यो.

त्रीजो चारित्रनो विनय पांच जेदे छे. ते कहे छे.—सामायिक प्रमुख पांच चारित्रोनी सद्दहणा करवी, तेमज कायाये करी फरसवुं, आदरवु, पालवु तेमज जव्य प्राणीनी आगल प्ररुपणा करवी

त्रण प्रकारना योगनो विनय कहे छेः—आचार्यादिकोनो सर्वकालने विषे मन, वचन, तथा कायाये करी विनय करवो. एटले मने करी मातुं चिंतववुं नहीं. वचने करी मातुं बोलवुं नहीं. तथा कायाये करी माठी प्रवृत्ति करवी नहीं. तेवी रीतेज ते आचार्यादिकने विषे मन, वचन अने कायाने शुभ प्रवृत्तिमां उदीरवां, प्रवर्त्तावयां ए रीते त्रण प्रकारे योगनो विनय ते पूर्वोक्त त्रण विनयनी साथे मेलवतां ७ भेद विनयना थया.

सातमो लोकोपचार विनय सात भेदे छे. ते कहे छेः—(१) गुरुप्रमुख जे श्रेष्ट पुरुष होय तेउनी समीपे वसवुं, (२) आराधवा योग्य पुरुषनी इछाये प्रवर्त्तवुं, (३) पोतानी ऊपर उपकार करे तेनी ऊपर पाछो प्रत्युपकार करवो, एटले गुरुने जो हुं विनये करी प्रसन्न करीश, तो ते मने शास्त्र दान देशे, एवा अभिप्राये करी गुरुने भात पाणी प्रमुख लावी देवुं, (४) तेमज ज्ञानादिक साधन माटे जे भात पाणी प्रमुख आपवां, (५) तथा दुःखे करी पीडाएला जे ग्लान तेनी औषधादिके करी गवेषणा करवी (६) तेमज देश तथा कालनुं जाणवुं, जे अवसरे जे उचित होय, ते अवसरे ते करवुं, (७) वरीलो (ज्ञानादि गुणे वर्द्धमान) संबंधी सर्व कार्योंने विषे अनुकुलपणुं एटले तेमनां कार्य करवामां उजमाल रहेवुं. इति भावः एवी रीते लोकोपचार विनय सात प्रकारे छे. एम विनयना सात भेदे करी बीजुं विनय तप जाणवुं. यद्यपि विनय तो एकज छे तथापि ज्ञान, दर्शन, चारित्र, मन, वचन, काया, अने लोकोपचार, ए सात विषये करी विनय करीए तेथी बीजो विनय तप पण सात प्रकारनो कह्यो.

वेयावच्चं—वैयावृत्य तप एटले भात, पाणी प्रमुख संपादवा रुप उपष्टंभ दइए, ते दश भेदे छे. यथाः

आयरिय उवज्झाए, थेर तवस्सी गिलाण सेहाण ।
साहम्मी कुल गण सं, घ वेयावच्चं हवइ दसहा ॥

आचार्य ते जेनी पासेथी धर्म प्राप्त थाय छे ते. उपाध्याय ते जे विद्या अभ्यास करावे छे ते स्थविर, ते ज्ञान, पर्याय, तथा वय, ए त्रण प्रकारे तपस्वी ते छठ अठम प्रमुख तप करनार होय ते (गिलाण के०) जे रोगी होय ते. सेहाण ते शिष्य नवी दीक्षा लीधेलो होय ते. साहम्मी ते समान धर्मवान् होय ते. (कुल के०) चंद्रादिक कुलवान् होय ते. गण ते कोटिक प्रमुख. संघ ते समुदाय रुप होय ते. एवी रीते ए दशनी अशन, पान, वस्त्र, पात्र, तथा औषध प्रमुखे करी यथायोग्य सेवा करवी, तेने त्रीजो वैय्यावृत्त्य तप कहे छे.

(तहेव के०)–तथैव एटले तेमज चोथुं (सज्झाउं के०) स्वाध्याय ए नामनुं तप, ते पांच जेदे छे, यथा "

वायणा पुछणा चेव, तहा य परिअट्टणा ।
अणुप्पेहा धम्मकहा, सज्झाउं होइ पंचहा ॥"

(वायणा के०) वाचना, ते पोते जणवुं, शिष्यादिकने जणावबुं, तथा वांचवुं पृछना, ते जे सूत्रार्थमां संदेह पड्याथी गुर्वादिकने पूछवुं ते (तहाय के०) तेवी रीतेज (परिअट्टणा के०) परिवर्त्तना, ते पूर्वे शीखेलो जे अर्थ तेने फरी संजारवो ते अनुप्रेक्षा, ते पूर्वे धारेला अर्थनुं चिंतवन करवुं ते. तथा वार अने चार जावनानुं जावबुं. (धम्मकहा के०) धर्म संबंधी कथा कहेवी अथवा धर्मोपदेश करवो ते ए प्रकारे स्वाध्यायतप पांच जेदे थाय छे ते कह्युं.

स्वाध्याय एटले समयरुप जिनेश्वरनां वचन. जे वचन वके आत्मा आत्म अनुजववने पामे एवां वचननुं वांचवुं, जणवुं, जणाववुं, चिंतववुं, ते स्वाध्याय तप जाणवुं.

५ (झाणं के०) ध्यान ते आत्मवीर्य मन वचन कायाना जोगद्वारा न प्रवर्त्तावतां त्रणे जोगने स्थिर राखी शुद्धात्मभावमां उपयोग स्थिर राखवो ते ध्यान तप जाणवो. ध्यान विषे आ ग्रंथना ध्यानाधिकारमां तथा अनुभव प्रवेशिका नामना ग्रंथमां विशेषे कह्युं छे तेथी अहिंआं लख्युं नथी.

६ (उस्सग्गोविअ के०) कायोत्सर्ग तप पण द्रव्यथी तथा भावथी बे भेदे छे, तेमां द्रव्योत्सर्गना चार भेद छे, अने भावोत्सर्गना त्रण भेद छे, तिहां प्रथम द्रव्योत्सर्ग कहे छे.

(१) गछनो त्याग करी जिनकल्पादिक जे आदरवो, ते पहेलो गणोत्सर्ग; (२) अणसणादिक व्रत लइने शरीरनो जे त्याग करवो, ते बीजो देहोत्सर्ग; (३) कल्पविशेषे उपधिनो जे त्याग करवो, ते त्रीजो उपध्युत्सर्ग, (४) अधिक तथा अशुद्ध अशनादिक चारनो त्याग करवो, ते चोथो अशुद्धभत्तपाण उत्सर्ग. ए चार प्रकारे द्रव्यथी उत्सर्ग जाणवो. उत्सर्ग एटले त्याग करवो, ए अर्थ समजवो.

हवे भावोत्सर्गना त्रण भेद कहे छे १ क्रोधादिक चार कषायनो जे त्याग करवो ते पहेलो कषायोत्सर्ग. २ नरकादिकना भवनुं आवखुं बांधवानां कारण, जे मिथ्यात्वादिक छे, तेनो जे त्याग, ते बीजो भवोत्सर्ग अर्थात् संसारोत्सर्ग. ३ बंधनां हेतु जे ज्ञानावरणादिक कर्म ज्ञानप्रत्यनीकपणादिक छे तेनो जे त्याग, तेने त्रीजो कर्म उत्सर्ग कहिये. ए भावथी उत्सर्ग त्रण भेदे कह्यो, एथी कर्मनी निर्जरा थाय छे. ए रीते ए ७ प्रकारे (अभिंतरउतवो के०) अभ्यंतर तप (होई के०) छे. ए ७ भेदने सम्यक्दृष्टि जीव तप करी माने. एम ए बार प्रकारनां तपे करी निर्जरा तत्त्व कह्युं.

(१०) लोकस्वरुप भावना—केड उपर बे हाथ देइ वच्चे पग पसारी ऊभेला पुरुष जेवो समआकार षद् द्रव्यात्मक पूर्व पर्याये विनशे नवा

पर्याये उत्पन्न थाय ध्रुवथी निश्चळ रहे एवो चौद रज्जु प्रमाण लोक छे. तेनुं नीचेनुं तलीऊ उधा वालेला सरावला सरखुं अने मध्यभाग झालर सरखो उपरनो भाग मृदंग सरखो एवो जे लोक ते मांहे हुं सर्वे ठेकाणे उत्सर्पिणी अवसर्पिणीना सर्वे समयोमां ने लोकाकाशना सर्व प्रदेशे पुद्गलनी सर्वे जातीनी वर्गणामां जन्म मरणे करी रोग, भय, शोक, वियोग, अज्ञान कषायादि महा वेदनाउ भोगवी चूक्यो. ते जन्म शरीरमाहे आत्मबुद्धिए करी रागादिकना विकारोथी सुख दुःखादिना संकल्पों करी स्वरूप रमण अवकाशने न पाम्यो तेनुं फल हतुं हवे चिंतामणीरत्न समान दुर्लभ मनुष्य भव, वली तेथी दुर्लभ वीतराग देव, तथा आत्म समाधि बतावनारा गुरु, अने मिथ्यात्व रागादिना भयथी छोडावनारो वीतराग प्ररुपित धर्म, तेने छोडी चौद रज्जुलोक मांहे रहेला मारायी भिन्न पदार्थो उपर रागादि विषम परिणाम करी एवा चौद रज्जुप्रमाण लोकमां हुं भ्रमण केम करूं ? एम समपरिणामे वर्त्तवुं ते सामायक जाणवुं ए लोकस्वभाव नामा दशमी भावना जाणवी

(११) बोधि दुर्लभ भावना—चक्रवर्ती आदिक रिद्धि, रूप, बल, पराक्रम, स्त्री पुत्रादिक मन गमता भोगोनी प्राप्ति संसारमां भमता अनंती वार पाम्यो. वली अकामनिर्जराना योगे पुण्यना संजोगथी मनुष्य भव, आर्यदेश, निरोगीपणुं, धर्म श्रवणादिक, तथा बालचारित्र, बाह्यथी आचार्य पद, पूज्यपणुं अनंतीवार प्राप्त थयु तो पण सम्यक्त प्राप्त थयु ते अति दुर्लभ छे मोटे राज्यरिद्धि, बल, स्त्री आदि तथा बाह्यथी धर्मप्रवृत्ति अने साध्यशून्य क्रिया आचार्यादि पूज्यपदनो राग छोडी सम्यक्त भावनी दृढताने वधारी समजावे स्थिर थवुं ते अगीआरमी बोधिदुर्लभ भावना जाणवी.

(१२) धर्म भावना—दुस्तर संसार समुद्रथी तारवाने प्रवहण समान श्री जिनेश्वरनी वाणीए प्ररुपेलो दशविध क्षांत्यादिक धर्म

तथा रत्नत्रयात्मकधर्म ते पामवो दुर्लभ छे तथा धर्मना साधन अरिहंतादिकनो जोग तेपण पामवो दुर्लभ छे माटे पामीने प्रमादी थइ पर वस्तुना रागमां रक्त न थवुं. एम बारमी धर्म भावना भावी सम परिणामी थवुं. एम बार प्रकारे भावना भावी समपरिणामी थवुं. तेज ज्ञानादिक आत्मगुणना लाभरूप व्यापारे आत्मानो भाव प्रगट करवो. एज सामायक जाणवुं.

खुहा पिवासा सी उण्हं, दंसा चेला रइत्थिउं ।
चरिआ निसिहिया सिज्जा, अक्कोस वह जायणा ॥
अलाभ रोग तण फासा, मल सक्कार परीसहा ।
पन्ना अन्नाण सम्मत्तं, इअ बावीस परीसहा ॥

आ क्षुधादिक परिसह आव्या छतां पोताना निज आत्म स्वरुपने अणाहारी, अक्षय, अखंड विचारी क्रोधादिक न करतां आत्मवीर्ये करी आपणी ज्ञायकतामां समभावे स्थिरथोज रहेवुं ते समभाव जाणवो.

एकता ज्ञान निश्चय दया, सद्गुरु तेहने भाखे ।
निर्विकल्प उपयोगमां, निज प्राणने राखे—आत्म०

हुं ज्ञान हुं मारा स्वरुपमां भासता ज्ञेयरुप षट् द्रव्य परपदार्थोथी मने कांइ प्रयोजन नथी, ए उपयोगे परसंबंधे रागादि परिणामे बंधाएली आत्मपरिणति परसंबंधथी छोडी पोताना स्वरुपथी तन्मय करी, सर्वे संकल्प छोडीने, निर्विकल्प भावे स्थिरथोज, स्वरुप अभेदे तन्मयताए राखे. संकल्प विकल्प परिणामे हणाता आत्मवीर्य ज्ञानादि प्राणने निर्विकल्प परिणामे एटले निर्विकल्प उपयोगे बचावे ते निश्चयदया कहीए. माटे अहिंआं समभावनेज दया कही. जिनशासनमां समभाव एज मुख्य साध्य छे.

देशी कमखानी ॥ शुद्ध समजाव छे, साध्य रूदये जिहां ।
वचन सापेक्ष क्रिया छे, साधन तिहां ॥

हवे समयसार सिद्धांतनो सार बतावे छे.

सवैया इकतीसा.

आचारिज कहे जिन वचनको, विस्तार अगम अपार है कहेंगे हमकितनो !, बहुत बोलवेसो न मकसूद चुप भली, बोलीए सुवचन प्रयोजन है जितनो, नानारुप जलपसो नाना विकल्प उठे, ताते जेतो कारिज कथन भलो तितनो, शुद्ध परमातमको अनुभौ अभ्यास कीजे, यहे मोख पंथ परमारथ है इतनो.

॥ दोहा ॥ यह निचोर या ग्रंथको, यह परमरस पोष ।
तजे शुद्ध नय बंध हे, गहे शुद्ध नय मोष ॥

कुंदकुंद आचार्य कहे छे के जिनमहाराजना वचननो विस्तार अगम अपार छे. हुं केटलो कही शकुं ? घणुं बोलवानी मतलब नथी चुप रहेवुं ते ठीक छे, अने जेटलुं प्रयोजन छे तेटलुंज सुवचन बोलवु पण नानाप्रकारनुं बोलवुं.—जल्प करवाथी नाना प्रकारना विकल्प उठे तेथी जे एक कार्य छे तेटलुंज बोलवुं बस छे शुद्ध नये परमात्मानी निर्मल सत्ता दृष्टीगोचर करी अनुभव आस्वाद लेवो एटले निर्मल आत्मद्रव्यना अनुभव योगनो अभ्यास करवो. एज मोक्ष मार्ग छे. एटले आखा समयसारना कथनमां एज परमार्थ छे अहिंआं विकल्पने समजावनो नाश करनार जणावी टुंकामां मोक्ष मार्ग कह्यो. एज विकल्प तजवाथी समजाव आवे. अने समजाव आववाथी शुद्धात्म अनुभव थाय शुद्धात्म अनुभव एज आत्मानी सिद्धि छे.

दोहरानो अर्थ—आ समयसारनुं रहस्य एज छे, अने एज उत्कृष्ट रसनो पोषक छे. के जे शुद्ध नयनी चाल छोडवाथी बंध छे, अने शुद्ध नयनी चाल ग्रहण करवाथी मोक्ष छे.

समभाव विना ज्ञान कहेवाय नहि, कारण के सर्वे जीव सामान्य छे, अने पुद्गले पुद्गल सामान्य छे तेने इष्टानिष्ट अगर शुभाशुभ जाणवुं ते ज्ञान केम कहेवाय ? अने एक सरखी वस्तुने जूदी जूदी कल्पवी ते मिथ्याभावने समभाव शीरीते कहीए ? अपीतु नज कहेवाय. पण ए तो विषम भावज छे.

दोहा. ज्ञान नहि समभाव बीन, नहि ज्ञानविना समभाव ।
ज्ञान भानु परकाश जीहां, तम रागादि अभाव ॥

अर्थ—रागनो कर्त्ता मिथ्यात्वी जीव पोतेज छे. सम्यक्त भावमां राग नथी. अने रागमां सम्यक्त भाव नथी. जेम उदेपुरनो रहेवावालो एक वेपारी धन कमावाना अर्थे दूर देशावर जइ अत्यंत मुशीबते रुपैया सात लाखने आशरे धन उपार्जी किंमती अने वजनमां हलकां पोतानी पासे गुप्त रीते रही शके एवां मणी माणेक लइ फाटेलां जुनां कपडां पेहेरी पोताना देशमां आववा नीकल्यो, गामना नजीक आवतां बे कोसने आशरे घांटी ऊपर सांजनी वखते एक सुंदर बंगलो जोयो ते बंगलाना चोक ऊपर मनोहर आसन उपर रतिसमान रुपवंती मों आंख, अने हाथना चालाथी कामी पुरुषोने आमंत्रण करती होय एवी युवा स्त्री बेठेली जोइ पेलो पुरुष मोहीत थयो. जाणेके मने चाहाय छे, एम राग रसे रींझी चित्तमां प्रमोद मानतो पोतानी साथवाला न जाणे माटे तेउने कांइ बानुं बतावी साथ छोडी बंगलाथी आगल आवतां थोडेक दूर आजुबाजु घांटी मांहे चोर, व्याघ्र आदिना भयने न गणकारतो तपासवा लाग्योके एने संभालनार अहींआं कोइ छेके नहीं. पछी संभालनार नहीं जणावाथी तेनी नजीक आवी विविध

तरेहना वचनो उच्चार करवा लाग्यो पेली स्त्रीए कांइ जवाव दीधो नहीं पण हसतुं मुख अने आंखो देखी नजीक नजीक आवी आखरे ते स्त्रीनो हाथ पकड्यो एटले जणायुं के आ तो आरस पाषाणनी युक्तिथी वनावेली कृत्रिम स्त्री छे एम जाणवाथी सर्वे उमेद निष्फळ थया एटले रातनुं अंधकार जोइ गजरावा लाग्यो. मारा साथवाला क्यां गया व्याघ्रादिनो भय छे हवे हुं विषम अटवीमां शुं करीश ? वली मार्गनो पण हुं अजाण हुं. आ भयंकर अटवीथी मने वचावनार कोण छे ? हे देव! आ शुं थयुं एम विलाप करतो प्राण अने धननी आशा छोडी आखी रात दुःखमां गमाव्री, वचमां धन तो चोरोए लूंटयुं अने ते चोरोनो मार पण सह्यो छेवट जीवितने चाहातो पोकार करतो हतो तेवामां प्रज्ञात उगवानी समये नगरनी नजिक रहेनार सत्पुरुषे दुःखीत पुरुषनो स्वर सांभली, जरायुं छे दयारुपी अमृतरसे हृदय जेनुं एवो परोपकारी पुरुष पेला माणसने पोकारी कहेवा लाग्यो के तुं केम दुःखी थाय छे मारी पासे आव, ताहं गाम अने घर हुं तारी दृष्टिए बतावुं. एम ते सत्पुरुषनां वचन पोतेज कबूल करी पोतानी घर संपदानो जोगी थयो तो ए पंथी पुरुषने कोणे रोक्यो हतो ? मात्र पाषाणनी पुतलीने पोतानी जुलथी खरो आनंद आपनारी साची स्त्री मानी राग रसे रींझी अटवीमां रोकायो. तेम मिथ्यात्वी जीव जड पुद्गल द्रव्यमां पोतापणुं अने पोताने लायक जोग आनंद मानी पोतेज रोकाइ रह्यो वली ते सत्पुरुषनां वचन पोतेज मानी दयालु पुरुषना कहेवा प्रमाणे चाली पोताना घरने पाम्यो. तेम रागादिथी उपजेलु विषमपणुं एटले शुभाशुभपणुं पोतेज तजी सद्गुरुना अमृत समान वचन अंगीकार करी तेओनी आज्ञाए चाली आनंदपुरीमां पोतानीज लक्ष्मी-पोतेज वरे आहिंआं अज्ञान तजी विषमपणुं मटाडनुं तेज सामायिक जाणवु.

॥ पंचप्रमाद ॥

मज्जं विसय कसाया, निद्दा विकहा य पंचमी ज्ञणिया ।
ए ए पंच पमाया, जीवं पाडंति संसारे ॥

मद्य, विषय, कषाय, निद्रा, विकथा, ए पांच प्रमाद जीवने संसारमां ज्रमण करावे डे माटे तजवा.

॥ निद्राथी थती हानी ॥

जइ चउदस पुव्वधरो, वसई निगोएसुऽणंतयं कालं ।
निद्दा पमाय वसओ, ताहोहिसि कह तुमं जीव ॥

ज्यारे निद्रारुप प्रमादना वशथकी चौद पूर्वधर निगोदने विषे अनंताकालसुधी रहे डे. तो हे जीव! ताहरुं शुं थशे ? अर्थात् तुं जो निद्रा प्रमादने वश पड्यो तो कदि पण उंचो आवी शकीश नहीं. जुउ ज्ञुवनज्ञानुं केवलीना चरित्रमां ज्ञुवनज्ञानुं केवलीनो जीव पूर्वलाज्ञवमां चौद पूर्व ज्ञण्या त्यारे कर्मपरिणाम राजानो महान् अधिपति मोहराजा विलखो थयो के मारा तावामांथी आ जीव चारित्र धर्म राजाना सहायथी मुक्ति नगरे सिधावाने तैयार थयो डे. हवे जो कदापि हुं ज्यम नहीं करु तो सर्वे संसार खाली थइ जशे. एम विचारी शोकातुर थइ बेठो ते देखी तेनी दासी निद्रा विचार करवा लागीके आपणो मालीक चिंतातुर डे, जो मारा सरखुं काम होय तो हुं बजावी लावुं. जेथी मारा स्वामिनी प्रसन्नता मारा उपर बनी रहे. एम जाणी बोली के प्रज्ञु आज चिंतातुर केम दीसो डो ? आपणे रागकेशरी अने द्वेषगजेंद्र आदि मोटा मोटा जोद्धाउं महान् पराक्रमी डतां, शत्रु आदिकनी हरकत टालवामां पाछा हठवुं नहीं. हुं आपना दासनी दासी हुं तो पण जो आपनो अभिप्राय मने जणावो अने आज्ञीष आपो तो आपनी कृपाथी हुं पण काम बजावी लावीश. एम निद्रा दासीनां वचन सांज्ञली मोहराजाए

पोतानो अभिप्राय जणावी आशीप सहित हूकम आपतांज ते निद्रा दासी चौद पूर्वधारी मुनि महाराजना अंगमां प्रवेश करी उपयोग चूकावी ते मुनिना आत्माने मान आदि मोहराजाना मोटा सुभटोने तावे कर्यो. ते कषायोए मुनिने नरकमां लइ केटला काल सुधी महान् विटंवना ऊपजावी वहु ससार भमाव्यो. माटे मोहराजानी नानामां नानी दासीना पण विश्वासे रहेवुं नहीं चौद पूर्वधारीनी पण एवी दशा थइ तो मारा सरखानी शी गति ? माटे निद्रा प्रमादने वश थइ उपयोग चूकवो नहीं अने जो आपणेज उपयोगने नहीं चूकीए तो मोहराजाना वापनुं पण जोर चालवानुं नथी.

॥ कषायोनुं फल ॥

जं अज्जिअं चरित्तं, देसूणाए अ पुव्वकोमीए ।
त पुण कसायमित्तो, हारेइ नरो मुहुत्तेणं ॥

आठ वर्ष उंठां क्रोड पूर्व वर्ष पालेलुं चारित्र शुभपरिणामरूप, ते एक मुहूर्त्त मात्रना कषायथी नाश थाय छे माटे उपयोग राखी समजावने चूकवो नहीं

॥ चारे कषायोना दोषोनुं जुदुं जुदुं वर्णन करे छे ॥

अनुष्टुप्वृत्तम् ॥ कोहो पीई पणासेई, माणो विणय नासणो ।
माया मित्ताणि नासेई, लोहो सव्व विणासणो॥

क्रोध प्रीतिनो नाश करे छे मान विनयनो नाश करे छे माया मित्राइनो नाश करे छे. लोभ सर्व गुणोनो विनाश करे छे.

चारित्रनी प्रधानता. आर्यावृत्तम्

सुवहुंपि सुअमहीअं, किं काही चरण विप्पहीणस्स ।
अंधस्स जह पलित्ता, दीव सयसहस्स कोमीउं ॥

अर्थ–अत्यंत ज्ञानाभ्यास कर्यो होय, तोपण चारित्र रहितने

ज्ञान शुं करे छे? अर्थात् कांइ पण अवबोध करी शकतुं नथी. जेम लाखो क्रोडो प्रज्वलित करेला दीपको आंधळाने कंइ बोध करी शकता नथी. ज्ञानतो तेनेज कहीए के ज्यां परभावने पोतापणे न मनाय अने परभावनुं आचरण थाय नहि, पण आत्मभावमां आत्मपणुं मनाइ आत्मभावनुं आचरण थाय ते उत्सर्ग चारित्र छे. ते प्रगट करवानां कारणो हेय उपादेय रुप क्रिया परिणतिने पण चारित्र कहीए. कारणमां कार्यनो आरोप करी नैगम नयथी कार्य कहेवाय छे. उक्तंचः—कारण कार्याध्यारोप इति वचनात् हेय उपादेय रुप क्रिया परमेश्वरनी आज्ञा प्रमाणे न आदरे तो उत्सर्ग चारित्र पण शाना बलथी आवे? माटे उत्सर्ग चारित्रने जन्म आपनारी हेय उपादेयरुप क्रिया आदरवी. स्वभाव आचरण रहित मात्र कंठे करेलुं ज्ञान ते परमार्थे ज्ञान नथी एटले द्रव्य भाव प्रवृत्ति विनानुं ज्ञान ते कांइ लेखानुं नथी.

दोहा—ज्ञान कहीजे तेहने, राग रहे नहि रंच।
रवि सन्मुख कहो किम रहे, अंधकार प्रपंच॥

अर्थ—जेम सूर्यना किरणमां अंधारु रहि शकतुं नथी तेम साचा ज्ञानमां पुद्गल विषयो भला जणाइ तेनो राग रंच मात्र रही शकतो नथी. ज्ञान अने चारित्र ए अभिन्नपणे आत्माना गुण आत्माथी तन्मय होय ए शिवाय ज्ञान ते उपचार मात्र छे.

अप्पंपि सुअमहीअं, पयासगंहोइ चरण जुत्तस्स,
इक्कोवि जह पईवो, सचक्खु अस्सा पयासेई॥

अर्थ—चारित्र युक्त पुरुषनो अल्पगुण श्रुताभ्यास प्रकाश करनार थाय छे. जेम चक्षुवालाने एक दीपक पण प्रकाश करेछे तेम जाणवुं.

बहिरब्भंतर किरिया, रोहो भवकारणप्पणासठं

णाणीस्स जं जिणुत्तं, तं परमं सम्मचारित्तम् ॥

अर्थ–बाहिर अंतर क्रिया (मन वचन अने कायानी क्रिया) छोडीने ज्ञानी मुनि पोताना आत्मस्वभावमां समभावे रहे ते निश्चय चारित्र छे. तेज खरो समभाव जाणवो.

द्रव्य चारित्रनुं लक्षण.

असुहादो विणिवित्ती, सुहे पवित्ती य जाण चारित्तं ।
वद समिदि गुत्तिरूवं, ववहारणया दु जिण भणिय ॥

अर्थ–हिंसा विषयादि अशुभ कर्म तजीने पंच सुमति त्रण गुप्ति सहित विनय वैयावच्च अथवा ज्ञान ध्यानादिक आत्मगुणने प्रगट करवा रुप शुभ कर्म ते द्रव्य चारित्र जिनेश्वरे कह्युं छे.

जयणा य धम्मजणणी, जयणा धम्मस्स पालणी चेव ।
तववुड्ढिकरी जयणा, एगंत सुहावहा जयणा ॥

जयणा ए धर्मने जन्म आपनारी माता छे, जयणा धर्मनुं पालण करनार छे जयणा तपनी वृद्धि करनारी छे, जयणा एकांते सुखनेज आपनारी छे माटे जयणा एज सामायक छे,

खंती सुहाण मूलं, मूलं धम्मस्स उत्तमा खंती ।
हरइ महाविज्जा इव, खंती दुरियाइ सव्वाइं ॥

क्षमा सुखनुं मूल छे, धर्मनुं मूल उत्तम क्षमा छे, महा विद्या जेवी क्षमा सर्वे दुरितने हरे छे

अनुष्टुप्–हयं नाणं क्रियाहीणं, हया अन्नाणओ क्रिया ।
पासतो पंगुलो दड्ढो, धावमाणो अ अंधओ ॥

क्रिया रहित जे ज्ञान ते हणाएलुं छे, अने ज्ञान रहित क्रिया पण हणाएली छे एटले क्रिया ऊलटा फलने आपनारी थाय छे, अर्थात् ज्ञानवडे हेय, उपादेय, जणाय छे. क्रियावडे हेय उपादेय

कराय छे. एकथी बने नहि. जेम पांगलो अग्नि देखतां छतां दाज्यो अने आंधळो दोडतां छतां दाज्यो, तो ज्ञानवडे राग अने रागनां कारण विषयादिने हेय जाणी तजवां अने ज्ञानादिक निजगुण तथा देवगुरुनी आज्ञा अने सन्मान उपादेय जाणी आदरवुं. देशनो मार्ग जाणतां छतां पग उठाववानी क्रिया करे नहि तो ते मार्गनुं जाणवुं निष्फळ थयुं अने मार्ग जाण्यावगर चालचाल करे तो विषम अटवीमां जइ पडे, माटे आंधळो अने पांगळो बन्ने मळी वंछित नगरे पहोंचे अर्थात् आंख अने पग बंने सहित वंछित गामे पहोंचे. जेम गाडी बन्ने पैडांना संजोगथी चाले छे तेम ज्ञान अने क्रियाना संजोगथी मुक्ति नगरे पोहोंचाय छे.

संजोग सिद्धि अ फलं वयंति, न हु एग चक्केण रहो पयाई॥
अंधो य पंगो य वणए समिच्चा, ते संपणठा नगरं पविट्ठा॥

पंडित पुरुषो ज्ञान अने क्रियाना संजोगनी सिद्धिवडेज मुक्ति रुप फलनी प्राप्ति कहे छे, कारण के एक पैडे रथ चालतो नथी पण बे पैडांवडेज रथ चाले छे. तेनुं दृष्टांत कहे छे. आंधळो अने पांगलो वनने विषे एकठा मळीने त्यांथी नाठा अने ते नगरमां पेशी गया तेम ज्ञानवडे जाणी क्रियावडे परभाव तजाय छे अने स्वभावमां स्थिर थवाय छे.

जहा खरो चंदण भारवाही, भारस्स भागी न हु चंदणस्स।
एवं खु नाणी चरणेण हीणो, भारस्स भागी न हु सुग्गईए॥

जेम चंदननो भार वहेनार गधेडो भारनो भोगी छे, पण चंदननी सुगंधनो भोगी नथी, तेम ज्योतिष, वैदकादिक शास्त्रनो जाणनार व्यवहारथी ज्ञानी कहेवाय छे, पण ते स्वभाव आचरण रुप चारित्रना आचरण विना मात्र हुं ज्ञानी छुं एवा अभिमानना भारनेज उपाडे छे. पण आत्मस्वभाव आचरणना लाभने लेइ शकतो नथी

एटले चारित्र विना ज्ञान ते चंदननना भार जपारुवारुप छे पण मुक्ति रुपी सुगतिनुं दातार थाय नहि.

को चक्कवट्टि रिद्धिं, चइउं दासत्तणं समभिलसई।
को व रयणाइ मुत्तुं, परिगिन्हइ उवल खंमाई ॥

अर्थ–चक्रवर्तीनी रिद्धिने तजीने दासपणानो अभिलाष कोण करे? वली रत्नने मूकी दइने पत्थरनो करुको कोण मूर्ख ग्रहण करे? अर्थात् जे ज्ञानाज्ञानना व्यापारथी अजाण होय ते मूर्ख तेम करे मोक्ष फळने आपनारु जे चारित्र ते छोडीने संसार भ्रमण करावे एवा विषयादिकने मूर्खज ग्रहण करे माटे सुज्ञ पुरुषोए चारित्रमां शिथिल परिणाम न करवा, आवेलां दुःख नाश थइ जाय छे माटे पोते ग्रहण करेलां व्रत छोरुवां नहि अने समपरिणाममां रहेवुं.

अहि गिलइ गलइ उअरं, अहवा पज्जुग्गलंति नयणाइं।
हा विसमा कज्जगई, अहिणा छच्छुंदरि गहिआ ॥

चारित्र ग्रह्या पछी जेना ढीला परिणाम थाय छे, तेने सापे छच्छुंदर ग्रहण कर्या जेवो न्याय थाय छे जो ते छच्छुंदरानें साप गळी जाय तो तेनुं पेट गळे अने जो छोमीदे तो आंखो जाय हा! इती खेदे! कार्यनीगति विषम थइ छे एवा जेना संजम लीधा पछी संजम पालवाने शिथिल परिणाम थया होय तेने सर्वोत्कृष्टपणुं बतावबाने कहे छे

नेरइयाणवि दुरुखं, जिज्झइ कालेण किं पुण नराणं।
ता न चिरं तुह होइ, दुःखमिणं मा समुच्चियसु ॥

नारकीनां दुःख पण काले करीने नाश पामे छे तो मनुष्य माटे शुं कहेवुं? ते माटे तने आ दुःख घणा काल सुधि नहीं रहे माटे तुं खेद न कर आ शरीर उपर जे दुःख अने सुख थतुं पोताने मानवु ते मिथ्यादृष्टी छे, बहिरात्मभाव छे, माटे तजवा लायक छे.

अंतर आत्मऽष्टे तुं नित्य चेतनावंत निर्दोष छुं माटे ग्रहण करेलां व्रत समजावे पालवां, चारित्र ग्रहण करेलुं छोडी देवुं ते वहुज अनिष्ट छे.

वरं अग्गिमि पवेसो, वरं विसुद्धेणकम्मणा मरणं ।
मा गहियव्वय भंगो, मा जीअं खलीअसीलस्स ॥

मोटी अग्निमां प्रवेश करवो ते श्रेष्ट छे वली अणशण करीने मरण पामवुं ते श्रेष्ट छे पण ग्रहण करेला व्रतनो भंग करवो ते ठीक नथी. तेमज शीलमां स्खलना सहित जीववुं श्रेष्ट नथी. समजावने जन्म आपनार समकित अने समकितनुं फल बतावे छे.

व्यवहार अने निश्चय नयथी मोक्षमार्ग.

सम्मद्दंसण णाणं, चरणं मोक्खस्स कारणं जाणे ।
ववहारा णिच्चयदो, तत्तिय मइओ णिओ अप्पा ॥

व्यवहार नयथी सम्यक्ज्ञान, सम्यक्दर्शन अने सम्यक्-चारित्र, ए त्रणे मलीने मोक्षनुं कारण थाय अने निश्चय नयथी सम्यक्ज्ञान दर्शन चारित्रमय एवो जे आत्मा ते पोतेज मोक्षनुं कारण छे.

जो अपसथ्थो रागो, वड्ढइ संसार भमण परिवाही ।
विसयाइसु सयणाइसु, इट्ठत्तं पुग्गलाईसु ॥

जे अप्रशस्त राग, विषयादिक उपर अथवा सज्जनादिक उपर ते संसार भ्रमण परंपराने वधारनार जाणवो. पुद्गलादिक वस्तुने इष्ट इछतां; वली तत्त्वार्थसूत्रमां कह्युं छे केः—

नाम स्थापना द्रव्य भाव तस्तन्न्यास.

अर्थ—नाम, स्थापना, द्रव्य, भाव, ए चार निक्षेपा? वस्तुना न्यास एटले वस्तुमां रहेनार स्वपर्याय छे. वस्तुथी अभिन्न छे. तो चार

निक्षेपेथी, देव, गुरु, धर्म, आत्मा अने अनात्मा सर्वेने जाणीए तोज निर्मल समकित थाय, अने समकित थाय तोज राग द्वेषथी मुक्त थइ शकाय माटे शुरू निक्षेपानु जाणपणुं जरुर करवुं जोइये सूत्रोमां ऊपचारथी चार निक्षेपा पण कह्या छे तेनुं फळ पण ऊपचारथीज कह्युं छे माटे निरुपचरित जे मोक्ष ते शुरू निक्षेपा जाण्याथीज साधि शकाय वली द्रव्य, क्षेत्र, काल अने भाव ते पण वस्तुना वस्तुमांज होय, पण परद्रव्ये द्रव्यादिकनुं कल्पवुं ते उपचारथीज छे. माटे द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावथी वस्तु स्वरुप जाणवुं जोइये अने द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, तेज निक्षेपा छे ए विषे सूत्रोमां वधारे अधिकार छे अहींआं तो मात्र एक एक गाथानी साक्षी लखीए छिये.

दव्वं गुणसमुदाउं, खित्तं उंगाह वट्टणा कालो।
गुण पज्जाय पवत्ती, भावो निअ वत्थुधम्मो सो॥

गुणनो समुदाय ते द्रव्य, अवगाहना ते क्षेत्र, गुण पर्यायनी प्रवृत्ति ते काल, निज वस्तु धर्म ते भाव, एम जाणवुं ज्यांसुधी परद्रव्यनी कामना छे त्यांसुधी राग जतो नथी, अने आत्मगुणो प्रगट थता नथी. आत्माने पोताना माटे सुखनु कारण पोतानोज स्वभाव छे चौद रज्जु लोकना पदार्थनी अंदरथी आत्माने कांइ पण लेवानुं नथी तो परद्रव्यनी कामना करी पोताना स्वरुपने भूलवु ए मिथ्याभाव छे अने एथी रागादिक उपजी भवभ्रमण थाय छे

अहमिक्को खलु सुद्धो, निम्ममउं नाणदंसण समग्गो।
तम्मिठिउं तच्चित्तो, सव्वे ए ए खयनेमि॥
एगो मे सासउं अप्पा, नाण दंसण संजुउं।
सेसामे वाहिरा भावा, सव्वे संजोग लक्खणा॥

अहं आत्मा ज्ञानादि अनंत गुण पर्याय रुप, अनंत स्वधर्ममय,

द्रव्यथी अखंड समुदायपणे एक हुं वली निश्चय नयथी शुद्ध हुं. यद्यपि अनादि परभावमां लुब्ध थइ भ्रष्ट थको अशुद्ध थयो, तो पण स्वजातिथी मूलधर्मे अनंत ज्ञानादि गुणमय, शुद्ध निष्कलंक, निरामय, निःसंग निर्दोषी हुं. सर्व ममकार परभावथी रहित हुं. ज्ञानसकल भासन परिच्छेदन रुप, दर्शन सामान्योपयोग, तेहीज मय हुं. एवा शुद्ध भासन, रमण परिणमन रुपे आत्मा रह्यो थको सर्व पर उपाधिने क्षय करी स्व शुद्धस्वरुपने ग्रही सर्व परभाव भेदी करी निर्मल आनंद निपजावे.

नाण पयासगसो, हगाउ तवो संयमो उगुत्ति करो,

शुद्धता एटले पोताना आत्माने सिद्ध समान शुद्ध जाणी, पोते अनंत गुण युक्त स्वद्रव्यादिकपणे एकज हुं. एज उपयोग तिहणताए एटले अत्यंत स्थिर परिणामे राखी, परद्रव्यमांहे मारे कंइ पण काम नथी. एम उदासिन्नवृत्तिए मोहरुपी शत्रुनो नाश करी आत्मस्वभाव स्थिर करी पोताना ज्ञान, दर्शन, चारित्रादि गुणो शक्तिमां रहेला व्यक्तिपणे स्वतंत्रताए करीने जयनो पडह वजाव्यो छे, माटे ज्ञान, दर्शन, चारित्र, रमण परिणाममां आत्मपरिणतिनुं एकत्व करवुं. परद्रव्यनी कामना तजी स्थिरथोज सत्ता भोगी थवुं एज सामायक छे.

॥ श्लोक ॥ राग द्वेषादि कल्लोलै, रलोलं यन्मनो जलम् ॥
स पश्यत्यात्मनस्तत्त्वं, सतत्त्वं नेतरो जनः ॥

राग द्वेषादि कल्लोलथी जेनुं मन रुपी जल होलाइ गयुं नथी ते आत्मतत्त्वने जुए छे ते जोनारो पोतेज परमात्मा रुप छे बीजो कोइ परमात्मा नथी.

॥ श्लोक ॥ अविक्षिप्तं मनस्तत्त्वं, विक्षिप्तं भ्रांति रात्मनः ।
धारयेत्तदविक्षिप्तं, विक्षिप्तं नाश्रयेत्ततः ॥

रागादिक परिणामे रहित एवुं आत्मानुं वास्त्विक स्वरुप छे अने तेनाथी जे जुदुं जेमां आत्मानी भ्रांति ते आत्माथी जुदु पर स्वरुप छे ते माटे रागादि रहित मनने धारण करवुं एटले मन रागद्वेष परिणाम वालुं थवा देवुं नहि. रागादि परिणाम युक्त मन अनंत ससार जमावे छे तेज मन रागादिक रहित थये परमपदनी प्राप्ति थाय छे माटे मनने मोहनी कर्मनी प्रकृतिना संसर्गवालु थवा देवुं नहीं पण शुद्ध स्वभाव संसर्गवालुं करवुं एज सत्य सामायक समजवुं

अविद्याभ्यास संस्कारै रवशंक्रिप्यते मन· ।
तदेव ज्ञान संस्कारैः, स्वतस्तत्त्वेऽवतिष्टते ॥

शरीरने विषेज पवित्र अने स्थिर एवु आत्मा तथा आत्मिय विगेरे जे ज्ञान ते अविद्या, ते अविद्याना अभ्यासथी उत्पन्न थएली वासनाए अवश (विषयने अने इंद्रियोने आधिन पण आत्माने आधिन नहि) एवुं मन थाय छे तेज मन ज्ञान संस्कारे करीने आत्म स्वरुपने विषे रहे छे.

श्लोक–यत्र काये मुने· प्रेम, तत·प्राच्यव्य देहिनम् ।
बुध्या तडत्तमे काये, योजयेत् प्रेम नश्यति ॥

मुनिने जे पोताना अथवा परना शरीरने विषे स्नेह थाय छे ते शरीरथी बुद्धि वडे आत्माने पाछो फेरवीने तेथी पण उत्तम एवा चिदानंदमय आत्म स्वरुपने विषे जोडे छे के जेथी काया उपर स्नेह थतो नथी.

श्लोक–आत्म विभ्रमजं दुःखमात्मज्ञानात्प्रशाम्यति ।
नायतास्तत्र निर्वांति, कृत्वापि परमं तपः ॥

शरीरादिकमां पोतापणानो भ्रम थवाथी उपजेलुं दुःख आत्म ज्ञानथी एटले आत्मामां शुद्धात्मपणु जाणवाथी नाश पामे छे वली

आत्म स्वरुपमां असावधान एवा पुरुषो उत्कृष्ट तप करीने पण मोक्ष पामता नथी.

श्लोक—शुभं शरीरं दिव्यांश्च, विषयानभिवांछति ।
उत्पन्नात्ममतिर्देहे, तत्त्वज्ञानी ततश्च्युतिम् ॥

शरीरने विषे आत्म बुध्धि वालो पुरुष शुभ एवा शरीरने अने दिव्य एवा विषयोने इछे छे अने तत्त्वज्ञानी पुरुष शरीरनी निवृत्तिने इछे छे.

परत्राहं मतिः स्वस्माच्च्युतो बध्नात्यसंशयम् ।
स्वस्मिन्नहं मतिश्च्युत्वा, परस्मान्मुच्यते बुधः ॥

शरीरने विषे आत्म बुध्धिवालो वहिरात्मा आत्म स्वरुपथी भ्रष्ट थइने रागी द्वेषी थइ खरेखर बंधनने पामे छे. अने आत्मने आत्म बुध्धिवालो अंतर आत्मा शरीरादिकना रागथी मूकाय छे.

जागर्ति ज्ञानदृष्टिश्चेत्, तृष्णा कृष्णाऽहि जांगुली ।
पूर्णानंदस्य तत्किंस्याद्दैन्य वृश्चिक वेदना ॥

तृष्णा रुपी काला सर्पना विष प्रत्ये गारुडी विद्या समान जे पुरुषनी ज्ञानदृष्टि जागृत छे ते पूर्णानंदी पुरुषने शुं दीनता रुपी वींछीनी वेदना थाय ? अर्थात् न थाय.

यस्य ज्ञानसुधासिंधौ, परब्रह्मणि मग्नता ।
विषयांतर संचारस्तस्य हालाहलोपमः ॥

ज्ञानामृतना समुद्ररुप परब्रह्मने विषे हमेशां जेनो उपयोग छे, एवा पुरुषने विषयांतरमां प्रवृत्ति ते विष समान भासे छे.

स्वभाव सुखमग्नस्य, जगत्तत्वावलोकिनः ।
कर्तृत्वं नान्यभावानां, साक्षित्वमवशिष्यते ॥

स्वज्ञाव सुखमां मग्न अने जगतना तत्त्वोनु अवलोकन करनार पुरुषनुं परज्ञावने विषे कर्तृत्व नथी. मात्र साक्षित्व छे.

परब्रह्मणि मग्नस्य श्लथा पौद्गलिकी कथा ।
क्वामी चास्मीकरोन्मादाः स्फारा दारादराः क्वच ॥

जे पुरुषनी पौद्गलिक कथा विरक्ताने पामी छे, एवा परब्रह्मने विषे मग्न पुरुष क्यां ? अने सुवर्णादिथी उत्पन्नथता उन्माद तथा स्त्रीउंए करेला उदार शृंगारादि हाव ज्ञाव क्यां ?

शमशैत्यपुपो यस्य विप्रुषोऽपि महाकथा ।
किं स्तुमो ज्ञानपीयूषे तत्र सर्वांग मग्नता ॥

समज्ञावनी शितलतानुं पोषण करनार ज्ञाननुं विंदु मात्र पण जे आत्माने विषे छे तेनी महावार्त्ता थाय छे तो ज्ञान अमृत सिंधुमां जे पुरुषनी सर्वांग मग्नता छे तेनु वर्णन तो शुं करवुं ? माटे हे जव्य जीवो ! टुंकामां मुक्ति मार्गने चाहाता हो तो समज्ञाव रूप सामायक अवश्य प्रमाद छोडी आदरो

यस्य दृष्टिः कृपावृष्टिर्गिरः शमसुधाकिरः ।
तस्मै नमः शुद्धज्ञानध्यानमग्नाय योगिने ॥

जेनी दृष्टी सर्व प्राणीउंपर कृपा वरसावे छे, अने जेनी वाणी शमरूपी अमृतने छांटे छे एवा शुद्ध ज्ञान ध्यानमां मग्न योगिने नमस्कार छे.

वत्सकिं चंचलस्वांतो भ्रात्वा भ्रांत्वा विषीदसि ।
निधिं स्वसन्निधावेव स्थिरता दर्शयिष्यति ॥

हे वत्स ! सुखने माटे चंचल मनवालो थइ शामाटे भ्रमण करे छे ? अने क्लेश शामाटे पामे छे ? स्थिरता सुखरूपी खजानो तारो तारीज पासे तने बतावशे माटे स्थिर परिणामी था.

ज्ञानऊधं विनश्येत लोऽनविक्षोऽनकूर्चकैः ।
अस्थऽव्यादिवास्थैर्यादिति मत्वा स्थिरो ऽव ॥

खाटा पदार्थथी जेम ऊधविनाश पामे छे, तेम अस्थिरताथी–लोऽनथी थता विक्षोऽनरुपी कुचाए करीने ज्ञानरुपी ऊधनो नाश थाय छे. एम समजी पोताना स्वऽनावमां स्थिर था. परऽनावने चित्तमां न पेशवा दे.

अचेतनमिदं दृश्य, मदृश्यं चेतनं ततः ।
क रुष्यामि क तुष्यामि, मध्यस्थोऽहं ऽवाम्यतः ॥

आ देखातुं एवुं शरीर आदि जऽ पदार्थ छे, अने नहि देखातुं आत्म स्वरुप चैतन्य रुप छे माटे हुं कोना उपर रोष अने कोना उपर संतोष करुं ? तेथी हवे हुं मध्यस्थ रुप थाऊं छुं. ए परिणामे समऽनाव थाय.

ऊविहंपि मोक्खहेउं झाणे पाउणदि जं मुणी णियमा ।
तह्मा पयत्तचित्ता जूयं ज्झाणं समब्ऽसह ॥ (ऊव्यसंग्रह)

ध्यान करवाथी मुनीऊने बंने प्रकारे मोक्षमार्गनी प्राप्ति थाय छे, ए माटे रुडे प्रकारे प्रयत्नशील थइने ध्यानाऽभ्यासमां उद्यम करवो एज समऽनावनुं कारण छे.

जंकिंचि विचिंतंतो णिरीहवित्ती हवे जदा साहू ।
लध्दूणय एयत्तं तदा हु तं तस्स णिच्चयं ज्झाणं ॥(ऊ.सं.)

जे वारे साधु स्वरूप सन्मुख लक्ष एकत्व करीने मन, वचन, कायानी कांइ पण क्रिया करतो नथी अने बाह्य तथा अभ्यंतर परिग्रहने पण इछतो नथी पण कांइक स्वगुण पर्यायरूप चिंतवन करे छे तेवो मुनि शुद्ध ध्यान योग्य थाय छे.

श्लोक ॥ ध्यानार्थाहि क्रिया सेयं, प्रत्याहृत्य निजं मनः ।

प्रारब्धा जन्म संकल्पा, दात्मज्ञानाय कल्पते ॥

कल्याणकारी ध्याननी दशा तेज क्रिया जाणवी माटे स्वपरज्ञा वथी पोतानुं मन पाछुं वाली जन्म मात्रना संकल्प विकल्प छोडीने पोताना आत्माने ज्ञानने विषेज राखीए, स्थिर करीए.

मन्यते यो जगत्तत्वं स मुनिः परिकीर्त्तितः ।
सम्यक्त्व मेवतन्मौनं, मौनं सम्यक्त्वमेव च ॥

जगत्ना तत्त्वने माने छे एटले जाणे छे ते मुनि कहेवाय छे सम्यक्त्व एज मौन छे अने मौन तेज सम्यक्त्व छे जो कदापि न बोलवुं एने मुनिपणुं कहीए तो पंच स्थावर बोलता नथी ते शिवाय घणा लोको बोलवानुं नेम करी वेशे छे ते पण मौन कहेवाय नहि तेथी आत्मकार्यनी सिद्धि थती नथी पण अंदरना विकल्पो तजवा तेज मुनिपणुं छे बाहिर मौनपणुं लइ बेठा छतां चित्त अंदर चिंतवन करे छे के अमुक कार्य में ठीक कर्युं अथवा अमुक कार्य ठीक न थयुं अमुक युक्ति करवाथी फलाणु काम ठीक बनशे.

वली आचारांगमां कह्युं छे केः—

जं समंति पासहा तं मुणंति पासहा जं मुणंति पासहा तं समंति पासहा—एटले जे मुनि पणुं ते सम्यक्त भाव छे अने जे सम्यक्त भाव छे तेज मुनिपणुं छे

माटे सकल विकल्प रहित समज्ञाननेज मुनि पणुं कह्युं माटे समजाव एज साध्य छे,

गाथा—जो जाणइ अरिहंते दव्व गुण पज्जवंतेहिं, ।
सो जाणइ अप्पाणं, मोहो खलु जाहि तस्सलयं ॥

जे अरिहंतने द्रव्य गुण पर्याय सहित जाणे तेज पोताना आत्माना द्रव्य गुण पर्यायने जाणे अने तेनोज मोह लय थाय माटे आत्म स्वरुपनुं जाणवुं तेज समजाव छे

गाथा ॥ आत्मात्मन्येवयद्धुं जानात्यात्मानमात्मना ।
सेयंरत्नत्रये ज्ञप्ति, रुच्याचारैकता मुनेः ॥

आत्मा आत्माए करीने आत्माने विषे शुद्ध जाणे छे माटे मुनिने आ ज्ञानावस्था रत्नत्रयीमां ज्ञान दर्शन चारित्रनी एकता करे छे एटले पर संबंधमां आत्माने कांइ पण काम नथी पोतानी सिद्धि पोता वडेज थाय छे माटे परवस्तुमां इष्टानिष्ट छोडी आत्म स्वभाव स्थिर करवो.

गाथा—ज्ञानयोग स्तपः शुद्ध मात्मरत्येक लक्षणं ।
इंद्रियार्थोन्मनीभावात्समोक्ष सुख साधकः ॥

आत्मानी परिणति परपुद्गल योगे रागद्वेष परिणामी थइ छे, तेज आत्मानी परिणति स्वस्वभाव योगे करी आत्म परिणाम मांहे रक्त करी स्थिर थवुं एज शुद्ध तप छे. जिहां इंद्रिय सुखनी इच्छा नथी एज मोक्षनुं साधक पणुं छे भावार्थ—आत्म परिणति परयोगे रमावतां परसंगे संसार भ्रमण कर्युं तेज परिणति आत्माना ज्ञानादिक गुणोमां रमावतां मोक्ष जाणवुं. आत्मानी परिणति आत्मामां रमाववी तेज राग द्वेष विध्वंसनुं कारण छे माटे ज्ञानयोग तेज सामायक जाणवुं.

श्लोक—यस्त्वात्मरतिरेव स्यादात्म तृप्तश्चमानवः ।
आत्मन्येव च संतुष्ट, स्तस्य कार्यं न विद्यते ॥

आत्म सुखमां जे संतुष्ट छे एटले आत्मीक सुखे करीने जेने तृप्ति थइ छे तेने कांइ परभावनी रमणता छेज नहि. एतो पोताना स्वभाविक गुणोमां संतुष्ट थइने बेठो छे तो ते पुरुषने बाह्य वस्तुमां रमण शानुं होय ? माटे आत्म स्वभावमां रहेवुं तेज समभाव अने सामायक छे.

अवकाशो निषिध्येस्मिन्न रत्यानंदयोरपि ।
ध्यानावष्टंभतः क्वास्तु तत्क्रियाणां विकल्पनं ॥

आत्मज्ञानीना चित्तमां हर्ष अने शोक पेशवानो अवकाश नथी. तो संकल्प विकल्परुप विषमता शानी होय ? अने ज्यारे संकल्प विकल्पने जीत्यो त्यारे आत्मसत्तागते रह्या जे आत्मिक धर्म ते व्यक्तिपणे एटले प्रगटपणे आवे स्वगुण संपदा सिद्ध समाधिनो जोगी थाय एटले सम परिणाममां रहे त्यां क्रिया कलापनो संकल्प विकल्प रहेतो नथी.

सूत्रमां सात प्रकारनां वचन छे ते जूदा जूदा कारणोथी जूदी जूदी रीते प्ररुप्यां छे एथी पण आत्मानी सत्ता जूदी कही छे माटे आत्म सत्ता उंलखी आत्म सत्ता मांहे पोतानी परिणति स्थिर करवाथी सर्वे संकल्प नाश थाय छे सात प्रकारनां सूत्रनां वचननां नाम (१) विधिसूत्र (२) उद्यमसूत्र (३) उद्यसूत्र (४) वर्णवसूत्र (५) उत्सर्गसूत्र (६) अपवाद (७) उत्सर्ग अपवाद सूत्र. ए रीते सात प्रकारनां वचन छे ते सर्वे समजी लेवां अने आत्म स्वभावमां स्थिर थवु ते समभाव छे.

स्थिरभूतमपिस्वांतं, रजसा चलतां व्रजेत् ।
प्रत्याहृत्य निगृह्णति, ज्ञानी यदिदमुच्यते ॥

स्थिरीभूत जे अंतःकरण तेनी परभावने विषे जे रमणता तेने रजोगुण कहीए. ते रजोगुणना योगे करी मननी चपलता घणी होय अने जिहां सुधी चपलता तिहां सुधी आत्मानुं कार्य थाय नहि ते तमोगुणनुं तथा रजोगुणनुं स्वरुप अन्य शास्त्रथकी जाणजो. हवे ते रजोगुणे करी चपलतापणुं पामेलुं एवुं जे मन तेनो ज्ञानी पुरुषो प्रत्याहार करीने–पाछुं वालीने मनने निग्रह करे छे.

श्लोक–शनैः शनैरुपरमेद्बुध्या धृतिगृहीतया ।

आत्मसंस्थं मनः कृत्वा, न किंचिदपि चिंतयेत् ॥

बुध्धि वडे धीरे धीरे मनने पाछुं वाली स्थिर करे एटले मनने किहां जवा दे नहीं मनने आत्म नावमां स्थिर करी राखे पण बीजुं कशुंए मनने विषे चिंतववुं नहीं, मात्र एक आत्म स्वरुपने विषे रमण करवुं एज प्रयोजन छे.

श्लोक—यतो यतो निःसरति, मनश्चंचलमस्थिरं ।
ततस्ततो नियम्यैतदात्मन्येव वशं नयेत् ॥

ज्यां ज्यां थकी मननुं ऊठीने बहार नीकलीने परनावमां जवुं थाय, शा माटे जे मननो स्वनाव घणो चंचल छे—अस्थिर छे. माटे तिहां तिहां थकी पाछुं वालीने आत्माने वश करवुं एज प्रयोजन छे अने ज्ञानात्मानुं एज लक्षण छे.

नामं ठवणा तित्थं, दव्वं तित्थंच नावतित्थंच ।
इक्किक्कमि य इत्तो, ऽणेग विहं होइनायव्वं ॥

नाम, स्थापना, द्रव्य, नाव, ए चार प्रकारे तीर्थ, तेमां दरेकना अनेक प्रकार छे ते जाणी लेवा. तारे ते तीर्थ कहेवाय.

दाहोवसमं तन्हा—इ छेयणं मलपिवाहणं चेव ।
तिहिं अत्थेहिं निउत्तं, तम्हा तं दव्वउतित्थं ॥

दाहनो उपशमावनार, तृषानो मटाडनार, मेलनो दुरकरनार कारण ते तीर्थ एटले क्रोध अग्निनो उपशमावनार, विषयो अने धननी तृषानो नाश करनार अने कर्म रुपी मेलने धोनार ए त्रणे कार्यनुं कारण सद्गुरु अने तीर्थंकर ते द्रव्यतीर्थ जाणवा. हवे नाव तीर्थनुं स्वरुप.

कोहंमिउ निग्गहिए, दाहस्स उवसमणं हवइ तित्थं ।
लोहंमिउ निग्गहिए, तन्हाए छेयणं होई ॥

अठविहं कम्मरयं, बहुएहिं भवेहिं संचियं जम्हा ।
तव संजमेण धोवइ, तम्हा तं भावओतित्थं ॥ संबोध०

क्रोधनो निग्रह थवाथी दाहना उपशमरुप तीर्थ थाय अने लोजनो निग्रह थवाथी तृष्णाना छेदनरुप तीर्थ थाय, आठ प्रकारना कर्मरुपी रज बहुभवे करीने संचय करेली ते तप अने संजमे करीने धोवाइ जाय दूर थाय तेथी तेने भावतीर्थ कहीए एटले क्षमा मुक्ति अने तप संजमरुप शुद्ध उपयोग तेज भावतीर्थ छे.

दंसण नाण चरित्ते, सुनिउत्तं जिणवरेहिं सव्वेहिं ।
एएण होइ तित्थं, एसो अन्नोवि पज्जाओ ॥

ज्ञान दर्शन अने चारित्रथी युक्त होय तेने सर्व जिनेश्वरोए तीर्थ-रुप कह्या छे तेथीज रत्नत्रयी संयुक्त होवाथी तीर्थ कहेवाय छे

ए प्रमाणे सर्वे अनुष्टान जाणी लेवां एटले रत्नत्रयीथी सर्वे अनुष्टान सफल थाय छे रत्नत्रय एटले ज्ञान दर्शन चारित्र ते आत्मानाज गुणो छे. ते रागादिक परभावथी मिथ्या प्रवृत्तिए प्रवर्त्तेला ते रागादिक परभावने तजी समभावमां रहीए एटले रत्नत्रय प्रगट थाय माटे समभावनुं अने रत्नत्रयीनुं थवुं ते एकज छे माटे समभाव एज श्रेय छे एज उपादेय छे

सव्वो पुव्वकयाणं, कम्माणं पावए फलविवायं ।
अवराहेसु गुणेसु अ, निमित्तमित्तं परो होइ ॥

सर्वे जीवो पूर्वभवे करेलां कर्मोना फल-विपाकने पामे छे. अपराधने विषे अने गुणने विषे बीजातो निमित्त मात्रज छे तो पोताना कर्म फलने भोगवतां बीजा उपर रागी द्वेषी थवु ए पोतानीज भूल छे अने एज नवां कर्म बधननुं कारण छे माटे कोइ उपर रागी द्वेषी न थतां पोताना समभावमां रहेवु.

गाथा–तित्थयरत्तं सम्म–त्तखाइयं सत्तमी तईयाए ।
वंदणएणं विहिणा, बद्धं च दसारसीहेणं ॥

तीर्थंकरपणुं, क्षायक सम्यक्त्व अने सातमी नरकथी त्रीजी नरकनो बंध ए त्रण वानां विधिपूर्वक मुनीने वंदन करवाथी श्रीकृष्णे उपार्जन कर्यां.

गाथा ॥ छठ्ठम दसम दुवा–लसेहिं मास्द्धमासखमणेहिं ।
इतोउ अणेग गुणा, सोहा जिमियस्स नाणिस्स ॥ संबोधसत्तरि

छठ, अठम, दशम, दुवालस, अर्द्धमासखमण अने महिनाना उपवास करवाथी जे शोभा छे ते करतां पण रोज जमता एवा ज्ञानी साधुनी शोभा अनेक गुणी छे कारण के ज्ञानी एज जिनशासनने दीपावनार छे. शुद्ध तपश्चर्याथी पोतेज तरे पण ज्ञानी अनंता जीवोनी विषमता एटले जन्म जरा मरणनी कल्पना मटावी परमानंदनी प्राप्ति करावे छे.

दंसण वय सामाइय, पोसह पडिमा अबंभ सच्चित्ते,
आरंभ पेस उद्दि–ट्ठ वज्जए समणभूए अ ॥

अर्थ–श्रावकनी अग्यार पडिमा ते समभावनेज मददकारी छे जुओके (१) दर्शन पडिमामां परने परजाणी परनुं ममत्व तजाय छे. समकीत शुद्ध कराय छे ने समकीत गुण निर्मल थयेथी खोटा विकल्पो नाश थइ समभाव आवे छे. (२) व्रत पडिमामां हिंसादि अव्रतोथी मन वचन कायाना जोग निवृत्ति पामे छे. (३) सामायक पडिमा एतो खुद समभावज छे. (४) पोसह पडिमाथी आत्मा ज्ञान ध्याने पोषाय छे एटले पुष्ट कराय छे. (५) कायोत्सर्ग पडिमाथी समतानो अभ्यास वधे छे ते पण समभावज छे. (६) ब्रह्मचर्य पडिमामां कंदर्पनो राग ओछाय छे. (७) सचित्त परिहार पडिमामां जीवो उपर क्षमा थाय छे ते पण समभावज छे. (८) पाप परिग्रहनुं ओछवुं

ए पण समजावने जजे छे. (९) आरंजवर्जक पमिमामां जीवनी यत्ना थाय ते पण समजावज छे. (१०) पापनो उपदेश नहि करवो ए पण समजावज छे (११) श्रमण समान थइ रहेवुं ते सर्वे जूत उपर समजाव जाणवो ए अग्यारे पमिमा समजावनां चिन्हो छे. ने चित्तमां समजाव विना अग्यारे पमिमा जीव वगरना चित्रामण जेवी छे माटे शुरू समजाव परिणामी थइ अग्यारे पडिमाने आदरवी (मनोरथ जावबो).

सपत्तदंसणाई, पइदियह जइजणाओ निसुणेई ।
सामायारिं परमं, जो खलु तं सावगं विंति ॥

अर्थः—प्राप्त कर्युं छे समकीत जेणे एटले संपूर्ण थइ छे दर्शनादि प्रतिमा जेने एवा श्रावक प्रतिदिवस मुनि जननी पासे परम उत्कृष्टी समाचारी सांजले एटले समाचारीथीज समजावनुं आचरण थाय माटे निश्चय ते पुरुषने तीर्थंकर जगवंत श्रावक कहे छे. जगवंतनुं नाम देइने मतमतांतरिओ जिन वचनने वाजु मूकी पोताना बांधेला ग्रंथोने तीर्थंकरना वचनो कही जोला लोकोने गुंचवणमां पाने छे

॥ जिन पूजाना प्रकार ॥ गाथा ॥

वरगंध पुप्फ अख्खय, पईव फल धूव नीर पत्तेहिं, ।
नेविज्ज विहाणेण य, जिणपूआ अठ्ठहा जणिया. ॥
उवसमइ दुरियवग्गं, हरइ डहं कुणइ सयल सुखाइं ।
चिंताईयंपि फलं, साहइ पूआ जिणंदाणं ॥

श्रेष्ट गंध, पुष्प, अक्षत, दीपक, फल, धुप, जलपात्र, अने नैवेद्यना विधाने करीने जिन पूजा आठ प्रकारे कही छे

जिनेंद्रनी पूजा दुरित वर्गने उपशमावे छे, दुःखने दूर करे छे, समस्त सुखने उत्पन्न करे छे अने चितातीत—चिंतववाने पण अशक्य एवा मोक्ष फलने साधे छे अहिआं पण द्रव्य पूजा जिनेश्वरना

ज्ञानादिक गुणना बहुमानार्थे होय. ज्ञानादिक गुण ते समनावमांहेज रह्या छे, समनावनुं सन्मान थयुं पण जो कदापि धन पुत्रादिक विषयिक सुखने परिणामे होय तो आश्रवमांहेज गणाय छे. माटे समनाव तेज साध्य छे. तेज आदरवा लायक छे.

मिछाउक्कडनुं प्रवर्तन.

जं दुक्कमंति मिछा, तंनुज्जो कारणं अपूरंतो ।
तिविहेण पमिक्कंतो, तस्स खलु उक्कमं मिछा ॥

जे दुष्कृतने मिथ्या करे ते दुष्कृत संबंधी कारणो फरीने सेवे नहि अने विधिए करीने पमिक्कमे तेनुं खरुं मिथ्यादुष्कृत जाणवुं.

मिछामि दुक्कडनो अर्थ—गाथा.

मित्तिमिउ मद्दवत्ते, छत्तीदोसाण गायणे होई ।
मित्तिअ मेराइठिओ, दुत्ति दुगंगामि अप्पाणं ॥
कत्ति करुं मे पावं, मत्तिय देवेमि तं उवसमेणं ।
एसो मिछादुक्कड, पयरुक्खरत्थो समासेणं ॥

"मि" मृदु मार्दवपणाने विषे छे "छा" दोषोनो आछादन करवाने अर्थे छे. "मि" मर्यादामां स्थित थवा माटे छे "दु" आत्मानी दुगंछा करुं छुं एम जणाववा माटे छे, "क" मारा करेलां पाप एम सूचवे छे. अने "ड" ते पापने उपशमवमे बाली नाखुं छुं. एम कहे छे. आ प्रमाणे "मिछामि दुक्कड" शब्दना दरेक अक्षरनो अर्थ संक्षेप मात्र जाणवो.

श्लोक—अन्यलिंगादि सिध्धाना माधारः समतैवेहि ।
रत्नत्रयफलप्राप्तेर्यथा स्याज्ञावजैनता ॥
ज्ञानसाफल्यमेषैव नयस्थानावतारिणः ।
चंदनं वन्हिनेव स्यात् कुग्रहेणतु जस्म तत् ॥

जे अन्यलिंगी सिद्ध थया तेपण द्रव्यथी मोक्ष फल साधता थका रत्नत्रयना फलनी प्राप्तिवडे भावथी जैनपणुं पाम्या; माटे ते अन्यलिंगीओने पण समता ते एक आधारभूत हती जो नयस्थानके उतारी जोइये तो, ए समताज ज्ञाननुं फल छे, ने जेम ज्ञानवडे भवताप शमे छे, तेम समता रुप चंदने करी भवताप शमी जाय छे, पण कुग्रह के० कदाग्रह अज्ञानरुप अग्निवडे समतारुप चंदन वली भस्म थाय छे.

दूरे स्वर्गसुखं मुक्तिपदवी सा दवीयसी ।
मनः संनिहितं दृष्टं स्पष्टं तु समतासुखं ॥
दृशोः स्मरविषं शुष्येत् क्रोधताप क्षयं व्रजेत् ।
औद्धत्यमलनाशः स्यात् शमतामृतमज्जनात् ॥ अध्या० ॥

देवलोकनां सुख तो दूर छे. वली मोक्ष पदवी ते तो मोटी छे अने भव स्थितिने हाथ छे, ते वारे मननी पासे प्रगटपणे देखीए एवी समतानु सुख ते शु खोटुं छे? समतारुप अमृत कुण्डमां स्नान करवाना प्रभावथी आंख थकी कंदर्परूप दर्पनुं विष शोषाइ जाय छे, क्रोधरूप ताप नाश पामे छे, उद्धतारूप मेल ते पण दूर थाय छे

आरुरुक्षुर्मुनिर्योगं, श्रयेद्बाह्यक्रियामपि ।
योगारूढः शमादेव शुध्यत्यंतर्गतक्रियः ॥ ज्ञानसार० ॥

योगारूढ थवाने इच्छतो मुनि बाह्य क्रियाने पण सेवे छे. (परंतु) अंतर्गत क्रिय एवो योगारुढ मुनि शमे करीनेज शुद्धिने, सिद्धिने पामे छे

श्रुतपद नमीए श्रुतपद भजीए श्रुत छे जगत आधार
श्रुत पद नमीएजी ॥ ए राह ॥
दर्शन ज्ञान चरणमय चेतन, समभावे स्थिर रहीएजी,
एवी आणा श्री जिनवरनी, साधी शिवसुख लहीये—समपद०
सेवोने; समपद सेवो, अनुभव मेवो, जिन शासननो सार—सम० ॥१॥

चेतन अंग अनंग अनुपम, एक रूप निज जाणीजी ।
ए विण अवर न आतम अर्थे, श्री जिनवरनी वाणी–सम० ॥२॥
द्रव्य भाव हिंसा नहीं एहमां, परम दया पद साचोजी ।
अनृत वचन टळ्युं इंहां सघलुं, शुद्ध सत्यपद जाचो;–सम० ॥३॥
नहि परद्रव्य हरण पण दीसे, शुद्ध शील इंहां धारोजी ।
त्रिविध परिग्रह छे नहीं एहमां, निज आतम हितकारो;–सम० ॥४॥
पापनां स्थान अढार न होवे, निज ज्ञाने निज जोवेजी ।
उदासिन्नता सहु परभावे, कर्म मेल सवि धोवे–सम० ॥५॥
संवर निर्जर मोक्ष एहमां, आश्रव बंध निकंदेजी ।
परम क्षमाने मार्दव आर्जव, मुक्ति गुण आनंदे–सम० ॥६॥
इंद्रिय विषय न चाहे चित्तमां, धन्नादिक कीम इच्छेजी ।
दर्शन ज्ञान स्वभावे तृप्ती, ते परपद केम वंछे–सम० ॥ ७ ॥
शुद्ध उपयोगे स्थिरता करतां, संयम शुद्ध अभ्यासेजी ।
सत्तर भेदे असंयम टाली, निज मति निजमां वासे–सम० ॥८॥
निज द्रव्यादि निजमां भासे, सत्य धर्म पण एहोजी
कर्म मलिनता इंहां नवी स्पर्शे, शौच सदा गुण गेहो–समपद० ॥९॥
देहादिकनी ममता नाही, तो कंचन तृण केनुंजी, ।
तेथी अकिंचन छे साचो, पुद्गल संग न जेहनुं–समपद० ॥ १० ॥
सिद्ध समो शुद्ध ब्रह्म लखे जे, टाली अब्रह्म भावोजी, ।
सहस अढार भेद छे तेहना, राखे एक स्वभावो–समपद० ॥ ११ ॥
ए तीरथ ए तारण कारण, दुरित दोष सहु नासेजी, ।
वैर विरोध न किनसुं होवे, सत्ता शुद्ध प्रकाशे–समपद० ॥ १२ ॥
अरिहंत सिद्ध ने आचारज पद, समपद मांहे लहीएजी, ।
श्री उवझाय ने साधु सकलनुं, लक्षण एहज कहीए–समपद ॥१३॥
दर्शन ज्ञान चरण तप वीरज, नवपद साधन थायजी, ।
गुणठाणानी श्रेणी चढतां, समपद श्रेष्ठ सहाय–समपद० ॥ १४ ॥

ज्ञान ध्यान अनुष्टान एह विण, जन मननी अनुवृत्तिजी ।
षट् दरशन पण एह स्विकारे, समपद अमृत वृष्टी—समपद० ॥१५॥
द्वादश भावना सार एह छे, चार भावना जाची जी, ।
साधुनी पण पंच भावना, एहमां नवी रहे काची,—समपद० ॥१६॥
इह पर लोकादिक आशंसा, समजावे नवि थायजी, ।
पंच चरण पण एहमां दीसे, पंचाचार समाय—समपद० ॥ १७ ॥
मन वच कायने पच इंद्रीनी, किरीआ एहमां नावेजी ।
पच्चीश किरिआ दूरे नाठी, सहेजे सुमति सोहावे—सम० ॥ १८ ॥
शरीर पंचनी परिणति नहीं ए, चिदानद घर घरणीजी ।
प्रशमरति स्त्री नाम एहनुं, जोगीश्वर मुख वरनी—सम० ॥ १९ ॥
आर्त्त रौद्र कुध्यान नसावे, धर्म शुकल प्रगटावेजी ।
जेम जेम समपद दृढतर उलसे, शीव वधु सनमुख आवे—सम० ॥२०॥
खट आवश्यकने समकितनुं, एहज फल छे साचुंजी ।
सद्गुरु रंग लग्यो होय जेहने, ते जन जाणे जाचुं—सम० ॥ २१ ॥
विद्या अविद्या ए बेहु सरखी, जूगा सवि मत नेदोजी ।
समकित सार लह्या विण मूरख, हठ करी मांड्यो खेदो ॥ सम०॥२२॥
इछा मिछा दुक्कड तहत्ती, आवश्यक तिम जाणोजी ।
निषेधीक आपुच्छा ने वली, पडिपुछा मन आणे ॥ सम० ॥ २३ ॥
गुरुने आहारादिकनुं देवुं, आमंत्रण वली करवुंजी ।
गुरु निकट रहेवुं एम दशविध, समजावे अनुसरवुं ॥ सम० ॥२४॥
एम बहुविध समजावनां कारण, ए अर्थे आदरीएजी ।
अप्रशस्तता टाली एहनी, सम संतोषे तरीए ॥ सम० ॥ २५ ॥
रत्न चिंतामणी काम कुंज सम, सम दम छे सुख दाइजी ।
मनसुख समपद लही शीव पावे, परम पूज्य प्रभुताई ॥ सम० ॥२६॥

॥ आढेलालनी देशी ॥

श्री सिद्धारथ नंद, विलसे परमानंद, आढेलाल, आतमतत्त जेणे ऊपदिश्योजी ॥ १ ॥

निर्मल सिद्ध समान, जलहल केवल नाण, आ० अप्पा परमप्पा समोजी.
कीनो देह ममत्त, नूल्यो ते निजतत्त, आ० मोहनी कर्मे घेरीउंजी.
प्रकृति अडवीस तास,करीसंसर्ग विलास,आ०अध्यवसाय असंख्यठेजी.
अविनाशी निजअंग, देह विनाशी संग, आ० विनाशी निज मानतोजी.
जेहथी तेह हणाय, क्रोध ते ऊपर थाय, आ० अवाधित पद नूलीउंजी.
मति प्रवृत्ति त्यांहि,लही निवृत्ति न यांहि,आ०खांति गुण हणियो तिणेजी.
मान करी मद अष्ट,विनय थयो तसु नष्ट,आ०सद्गुरु वचन ऊवेखियोजी.
नवि पामे ते धर्म, करतो विविध कुकर्म आ० जोग प्रवर्त्या मानमांजी.
पुद्गल संपत्ति अन्य,जाणी तेहने धन्न, आ० हरवा चित कूडो थयोजी,
नविजाणे निजरिद्धि,ते केम पामे सिद्धि, आ० सकल प्रवृत्ति मायमांजी.
सहजानंद वियोग,पुद्गलमां लखिजोग, आ०लोने लक रह्यो सदाजी.
वाधीकामना तेण, नवि लहतो चितचेन, आ०डंसी तृष्णा सर्पणीजी.
वित्त विषयने काज,ढंमी आतम लाज,आ०वहुविधि श्रमदुःख जोगवेजी.
नूततणां पकवान, जमतो कोइ अजाण, आ० तृप्ति नवपामे क्यमेजी.
करतो परनी हास्य,न लह्यो ज्ञान विलास,आ०अनंत हास्यस्थानकथयोजी
पुद्गलमां थइ रक्त,विण जाणे निजशक्ति, आ०योग प्रवृत्ति तिहां ठरीजी.
अस्थिर पुद्गलमांह्य,रतिमानी रह्यो त्यांय,आ०तेक्यम स्थिर रहेवे सदाजी
अरति ऊपजी तेह,जाएया विण निजगेह,आ०विविध प्रयत्न प्रयुंजतोजी.
अतूट अखंडित अंग,नूलि पुद्गल संग, आ०निर्नय पण नय जोगवेजी.
नमतां आ संसार, काल अनंत अपार, आ० आतम अंग अखंडठेजी.
नवि घास्यो गुणलेश,लुट्यो न एकप्रदेश, आ०निजधन ते निज पासठेजी.
नवि जाएयो ए मर्म,देह विषे निज नर्म,आ० शोकज इणविध ऊपन्योजी.
स्पर्शादिक निजनांहि,करीममता तेमांहि, आ० अमनोज्ञ दुगंछतोजी.

रोग रहित निजअंग, नि.कामी निःसंग, आ० परसगे परकामनाजी.
मोहनी प्रकृति एह, जूली निजगुणगेह, आ० तिहां त्रियोग प्रवर्त्तियाजी.
नवी पामे विश्राम, सकलसमय परकाम; आ०एम निजतत्त्व नवी लख्योजी.
मनसुख लही निजरूप, निर्मल सिद्धस्वरुप, आ०परमानंद पद अनुभवेजी.
॥ २८ ॥

॥ कलश ॥

गायो गायोरे समजाव सुधारस गायो, ।
बहुश्रुत साखे समपद रचता आनंद अति उलसायो ।
मोह महातम हरवा दिनमणि, शीवसुख सुगम उपायोरे ॥ सम ०१॥
कल्पवृक्षने कल्पलता सम, कामकुंज सुख दायो ।
सकल कर्मनी व्याधि विदारण, चिंतामणि जीम पायोरे ॥ सम० २ ॥
जे जविजन ए गाशे ध्याशे, तसु जवभ्रमण नसायो ।
संवत ओगणी साठनी साले, श्रावण मास सुहायोरे ॥ सम० ॥ ३॥
शुकल पंचमी बुध बोधमय, सकल विकल्प नसायो ।
सकल सूत्रने ज्ञान ध्याननो, सार एमांहि समायोरे ॥ समजाव ॥४॥
श्रीनेमि जिनवर जन्म कल्याणीक, दिवसे रंग वधायो ।
ओच्छव महोछव समपद मांहि, सहज स्वरुप दिखायोरे सम० ॥५॥
वेजलपुर निवासी शुजमति, कोदरने मणिचंदो ।
दलसुख महासुख मुलचंद वली, गहगहते आणंदोरे ॥ सम०॥ ६ ॥
एहतणा आग्रहथी रचीयो, सामायक प्रतिबोधो ।
सुगुण संतोकचदनी सहाये, निज आतम गुण सोधोरे ॥ सम ॥७॥
समय अन्यासे जस मति वासी, अंतरऊष्टी प्रकाशी ।
सकल जीव समजाव लही एम, विलसो निजगुण राशीरे ॥ समo ॥
निजगुण मृगमद जोगी समरथ, विलसे सहज स्वजावे ।
कर्मशत्रु जीति निज सत्ता, राज अखन्डित पावेरे ॥ समजाव ॥ ए ॥

युगप्रधान गीरुओ श्रुतसागर, अनुजव आनंद कंदो ।
श्री मुनिहूकम पसाय लही में, रचीओ एह प्रबंधोरे ॥ सम० १०॥
समजावे शाश्वत सुख प्रगटे, चित्त धरी निर्मल ध्यान ।
मनसुख दर्शन ज्ञान चरण लही, पामो परम कल्याणरे ॥ सम ११ ॥

॥ दोहा ॥

सिद्ध समाधि विलासमां, यावत् विलसे सिद्ध ।
तावत् समपद ग्रंथआ, अक्षय रहो प्रसिद्ध ॥ १ ॥
विस्तरजो बहु अर्थथी, करी नवि हृदय प्रकाश ।
समपद सेवे ते लहे, परमानंद विलास ॥ २ ॥

समजाव संबंधी जे रचना करी ठे तेमांहे मतिदोषथी, प्रमाद दोषथी, लीखीत दोषथी कांइपण भूल थइ होय ते मिछामिडुक्कडं, वली सुगुण पुरुषोए सद्गुरुनी गुरुगम साथे समजी भूल टाली निर्दोष परमेश्वरनां वचन आदरी आत्म कार्य सिद्ध करवुं. मनुष्य जन्म जिनशासनपामी सफल करवो.

आ ग्रंथ रचनामां भाइ संतोकचंद माणेकचंदनी उत्कृष्ट मदद मली ठे तेनो आ ठेकाणे उपकार मानुं बुं.

ली० दलसुखनाथजी.

श्रीरस्तुः संपूर्ण.

श्री १।

ॐ श्रीवीतरागाय नमः

प्रस्तावना.

आ वावन पद शिवाय विचारवा लायक अनेक पद छे पण अहिंआं मुख्य पणे वावन पद लख्यां छे एज प्रमाणे सकल सिद्धि दायक स्वपर पद विचारी स्व स्वमां अने पर परमां समावो परथी उदासिन वृत्ति करी निज पदमां लयलीन थवुं अहिं जूदी उपमा के अलंकार के राज्यादि अलंकारनी वातो नथी पण संवेदन ज्ञाने जाणेली, स्पर्श ज्ञाने अनुभवेली, अने सूत्र सिद्धांत प्रमाणे सिद्ध थएली वीना छे. माटे पोताना शुद्ध संवेदन ज्ञाने तथा सूत्रसिद्धांतथी मेलवी, ज्ञानवंतनी गुरुगम लेई, अनुभव ज्ञाने सिद्ध करी, असत्य तजी सत्य होय ते आदरवुं. हुं व्याकरण के कविता, छंद, अलंकार विगेरे पूरुं जाणतो नथी, वली मतिदोष अथवा लखीत दोषथी जे भूल थइ होय ते सद्गुरु पासे समजी दोष टाली सत्य होय ते आदरवुं जेने वाह्य क्रियानो हठ हसे ते आ गहन भावो समजी शकशे नहि माटे हठवाद छोडी कोमल चित्त करी आत्माए आत्मीक सुखना दानी थवुं.

सम्यक् न्याय सुधारस वावन पद एवु आ ग्रंथनुं नाम छे

१ ए मांहे सम्यक् न्यायनो अधिकार छे.

२ समकीती जीव अगर तत्त्व रुची जीव मोक्ष जिज्ञासु एनो अधिकारी छे.

३ मुख्य दायक समकीत सिद्ध करवुं अने परमपदनुं पामवुं ए प्रयोजन छे

४ अने पूर्व ग्रथोने अनुसार आ पदनी रचना करवामां आवीछे माटे जणवानो, सांभलवानो, अनुभववानो, विनय सहित अन्यास करवो.

अथ श्रीसम्यक् न्यायसुधारस ग्रंथ प्रारभ्यते.

मन धरी सरस्वती भगवति, प्रणमि आदि जिणंद
न्याय सुधारस पानथी, जिन दरशन आणंद ॥ १ ॥
दरशन निश्चय जे करे, क्षायक समकीत थाय
अनंत किरण उद्योतकर, मिथ्या मूळ नसाय ॥ २ ॥
ते कारण निश्चय करो, सत्यासत्य स्वरूप
क्षायक समकीत पामशो, मूदो भव भय कूप ॥ ३ ॥

२ कवित्त (सवैया एकतीसा)

आतम अधिकार स्वस्वामित्व स्वसंगत्व औ
स्वकर्त्ता स्वभोक्ता स्वग्राहकता सार है
व्यापकता रहणता कारजता कारणता
कारकता प्रभुता ज्ञान अक्रिय उचार हे.
परिणामिकता जनक अगुरुलघु अखंड
आधाराधेय अचल साधक विचार हे
बाधकता देवगुरु शास्त्र धर्म जीवाजीव
पुण्यपाप आश्रव औ संवर उदार हे (१)
निर्जरा बंध मोक्ष शम क्षमा मार्दव औ
अज्जव औ मुत्ति तव संयम श्रीकार हे
सत्य शौच अकिंचन ब्रह्मचर्य निर्भय औ
प्रमेय प्रमाण औ निःप्रयास सुगार हे
सुमित्र परमानंद बावन पद रचनाको
सम्यक् न्याय सुधारस सूत्र अनुसार हे

गुरुसो गुरुगम हे विने न्याय चित्तधरी
पढो याको यह निश्चे सुबोध दातार हे (२)
चिन्तामणि पारस औ कल्पतरु कामधेनु
राजरिद्धि रुप बल सुलभ हे पावना
मंत्र यंत्र प्राणायाम ज्योतिष औ चित्रकला
काव्य अलंकृत करी लोकको रिंझावना
सहेल वाद तप जप मसानमे निशावास
क्रियाकष्ट करी करी शरीर सूकावना
दुर्लभसो दुर्लभ सुगुरु दरवानुयोग
सम्यक् निज बोध संतोष उर आवना ॥ ३ ॥

॥ अथ भाषा लिख्यते. ॥

जगत्मां जीव द्रव्य अनंत छे, पुद्गल द्रव्य अनंत छे, धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय ए एक एक छे सर्वे मली पंचास्तिकाय द्रव्य छे अने छठो काल द्रव्य ते उपचारथी छे ते सर्वे पोताना अस्तित्व, प्रमेयत्व, सामान्य अने विशेष स्वभावे सहित स्वगुण पर्यायमयी स्वगुण प्रवृत्तिए आप आपणी प्रवृत्तिना परिणामी, स्वस्वभावमांहे उत्पाद् व्यय ध्रुवतावंत छे सर्वे समय आप आपणा स्वभावे अस्तिस्वभाववंत छे. कोइ समये कोइ द्रव्य पररुप थतो नथी ते द्रव्यनुं शुरूरुप अनादि कालथी मिथ्यात्वी जीव अणजाणते पुद्गल द्रव्यमां पोतापणं मानी ते मांहे पोतानो अधिकार जाणी निज अधिकार चूकी अनंत मिथ्या भावने करे छे तेथी रागादि कषायो उपजी चार गति ससार भ्रमण करतां वेहद दुःख

सहेठे. ज्यारे वस्तुना सम्यक् स्वरूपने जाणे त्यारथी ज्ञान, दर्शन, चरण गुण निर्मल करवा मांडे. ज्ञानादि गुण निर्मल थये परमानंद सिद्धि सुख पामे. ते प्रथम स्वपर स्वरूपनी दृढ प्रतित अने मिथ्यात्व आदि आश्रवनाव तजवो अने संवर निज उपादेय नावमां स्थिर थवाथी निज गुण निर्मल थाय. माटे प्रथम मिथ्या नावनो नाश करवो जोइए. कांइनुं कांइ जाणवुं तेने अज्ञान कहिये. कांइनुं कांइ निश्चय करवुं अने कांइनी कांइ प्रतित, श्रद्धा, रुचि करवी तेने मिथ्यात्व कहिये. वस्तुनुं स्वरूप जेम ठे तेम प्रतित सहित जाणवुं, तेने सम्यक् नाव कहिये.

(१) आत्म अधिकार पद.—आत्मा पोते स्वआत्मपदनो अधिकारी ठे, परपदनो अधिकारी नथी. आत्मा पोते पोताना अस्तित्व, वस्तुत्व, द्रव्यत्व, प्रमेयत्व, सत्त्व, अगुरुलघुत्व, एम पोताना सामान्य स्वनावे सहित ठे. आत्मा एवुं पोतानुं नाम पोतामां ठे, असंख्यात प्रदेशरुप स्वक्षेत्रे पोतानी स्थापना ठे ते निराकार आकृति ज्ञानरुप जाणवी, पोताना अनंत लक्षणने एकत्व आधारे राखनारो पोते द्रव्य ठे, ज्ञान, दर्शन, चारित्र सुख, वीर्य, कर्त्ता, नोक्ता, ग्राहकता, व्यापकता, रमणता आदि विशेष स्वनाव पोताना नाव पोतामां ठे. पोते द्रव्यथी एक, क्षेत्रथी असंख्य प्रदेशी, कालथी स्वगुण पर्याय वर्तनारुप, नावथी अनंत ज्ञेयनो ज्ञाता द्रष्टा आदि अनंत वीर्यवंत. स्वस्वरुपे अस्ति परस्वरूपे नास्ति, द्रव्यथी नित्य पर्यायथी अनित्य, अनंत लक्षणना एकत्व पिंडपणे एक गुण पर्याय प्रदेशथी अनेक, जाणवुं देखवुं आचरवुं आदि निन्न कार्य करवे बहुनेदे नेद स्वनाव अने ज्ञानादिक निन्न निन्न कार्य स्वप्रदेशे अनेद, ज्ञान दर्शनादि कार्य स्वक्षेत्रे नवा नवा पर्यायना नवन व्ययेकरी नव्य, स्व स्वनावे सदा रहे पलटे नहि तेथी अनव्य, पोतामांहे अनंत गुण एवा ठे के वचन गोचर आवे

अने श्रुतज्ञाने जाणी शकाय तेथी वक्तव्य, वक्तव्य धर्म करतां अनंत गुणा पर्याय अगर धर्म छे ते केवलज्ञाने पण वचनगोचर आवे नहि तेथी अवक्तव्य, ए अवक्तव्य धर्मथी अनतमे भागे अभिलाप्य एटले वक्तव्य धर्म छे अने अधिकारी पोताना परम स्वभावंत छे एटले द्रव्यना सर्वे स्वभाव पर्याय परमस्वभावने अनुयायीपणेज परिणमे नैगम नयथी पोताना असंख्यात अंश पोतामां छे. स्वअंश परद्रव्यमां नथी, परअंश स्वद्रव्यमां नथी. पोतानी सत्ता पोतामां वर्ती छे, परसत्ता पोतामां नथी. व्यवहारथी ज्ञानादिक स्वकार्य अनेक भेद पोताना पोतामां छे, वर्णादि परकार्य भेद पोतामां नथी अने जाणवा, देखवा, आचरवादि स्वकार्य परद्रव्यमां नथी. ऋजुसूत्रे स्वगुण पर्याय परिणामी छे; परगुण पर्याय कार्य परिणामी नथी. शब्द नये थोडी व्यक्ति, समभिरुढे बहु व्यक्ति, एवभूते पोतानी पूर्ण व्यक्ति पोतानी पोतामां प्रगटे, अन्य द्रव्यमां नहि. अने अन्य द्रव्यनी देश व्यक्ति, बहुदेश व्यक्ति, सर्वदेश व्यक्ति पोतामांहे न प्रगटे. स्वद्रव्यादिके अस्ति, परद्रव्यादिके नास्ति, अस्ति नास्ति एकसमये कहि शकीए नहीं माटे अवक्तव्य, अस्ति नास्ति एक समये समकाले छे ते जणाववाने माटे स्याद् अस्ति नास्ति, अस्ति धर्म अनतो एक समये समकाले वर्तो छे ते वर्तां कहि न शकाय माटे स्याद् अस्ति अवक्तव्य, नास्तिधर्म पण अनतो समकाले वर्तो छे वर्तां एकवचने कहि शकाय नहीं माटे स्याद् नास्ति अवक्तव्य, अस्तिधर्म अनंत तथा नास्तिधर्म अनंत समकाले वर्तो छे पण वचन गोचर आवे नहि तेथी स्याद् अस्ति नास्ति युगपत् अवक्तव्य, एवा आत्माना ज्ञायकतादि अनंत गुणमांथी एक गुण जाणी बहु गुणनुं प्रमाण करी गुणथी द्रव्यनुं प्रमाण करीए द्रव्यमांहे वर्ती पर्याय प्रवर्त्या विना गुणरुप कार्य न थाय माटे गुणथी पर्यायनुं प्रमाण करीए. ए प्रमाण विषे आगल प्रमाण पदमांहे विशेष लख-

वामां आवशे त्यांथी समजी लेवुं. आत्मा पोताना गुण पर्यायनो अधिकारी छे. ज्यां मोहनो अधिकार गयो छे; पुद्गलादि परद्रव्यनां वर्ण, गंध, रस, स्पर्श, आकारादि अनंत परिणमन छे ते मांहेथी एक पर्यायनो पण अधिकारी आत्मा नथी. भ्रमथकी पर-अधिकारी पणुं जाण्युं, मान्युं, तेथी ज्ञान, दर्शन, चरण, वीर्य, अव्याबाधादि आनंदमय निज अधिकार चूक्यो. अन्य अधिकारनो अधिकारी कोइपण द्रव्य थइ शके नहि. जेम भीखारी राज्य करवानो अधिकारी नथी अने राजा भीख मागवानो अगर नट खेलादिनो अधिकारी थवा जाय तो पोतानो आनंदमय अधिकार चूके. माटे पोतानो अधिकार जाणी अन्य अधिकारपणानो भ्रमरूप मिथ्याभाव श्रद्धा, प्रतित, रुची छोडवी. आ पदमां लखाएला भाव आगल जे जे पद लखवामां आवशे ते ते सर्वेमां ज्यां घटे त्यां जिन आज्ञाए पोतानी बुद्धि प्रमाणे फेलाव करी लेवो अगर सद्गुरु चरणे रही नीचेना सर्वे पदोनो यथास्थित भाव समजी मिथ्यात्वना अंश अंश जरुर मूलथी भेदज्ञान शस्त्रे ऊखेडी सम्यक्रूप शुद्ध सत्ता भूमि करवी.

(२) स्वस्वामित्वपद—शुद्ध नये जेम अनंता द्रव्यमांथी कोइ द्रव्य कोइ अन्य द्रव्यनो स्वामि नथी. निश्चय नये सर्वे द्रव्य आपआपणा स्वभाव गुण पर्यायना स्वामि छे ने ज्यारे परद्रव्य गुण पर्यायने पोताना जाणे छे त्यारे स्वस्वामित्व चूके अने परगुण पर्याय पोताना न थाय, आपणी इछाए न प्रवर्त्ते, तेथी अन्य अन्य द्रव्यनुं स्वामित्व वारवार आदरी बहु खेद पामे, माटे स्वस्वामित्वनी प्रतित करी परस्वामित्वरूप मिथ्या भाव तजवो. स्वस्वामित्व स्वस्वामित्व पणे अस्तित्व छे परस्वामित्व पणे नास्तित्व छे; ते छतां पर स्वामित्व मानवुं ते प्रत्यक्ष मिथ्या भ्रम छे ए वात साधारण माणस पण खोटी कही शकशे नहि.

(३) स्वसंगत्वपद्–शुद्ध नये कोइ द्रव्य कोइ अन्य द्रव्यनो संगी नथी, स्वगुण पर्यायनो संगी छे अने परद्रव्यनुं भ्रमथी संगीपणुं मानी जे जे भेद करवा ते प्रत्यक्ष नाभेदीनुं कारण छे. माटे परद्रव्यना संगपणानो मिथ्या भेद अने आशा तजी स्वगुण पर्याय संगी एकांगी पणे मग्न रहेवुं. द्रव्य स्वगुण संगीपणे सदा अस्तित्व छे. व्यवहारे परसंगी पणुं भासे पण परगुण पर्याय निज द्रव्यना स्वक्षेत्रमां आवी शके नहि माटे प्रत्यक्ष परसगीपणानो भ्रम छोडी स्वक्षेत्रे स्वगुण पर्याय अभेद सासय संग जाणी मग्न रहेवुं. व्यवहारे परद्रव्यनो संग छे तो पण ते शाश्वत नथी

(४) स्वकर्त्तापद–शुद्ध नये कोइ द्रव्य कोइना गुण पर्यायनो कर्त्ता नथी, अने परगुण पर्यायनुं कर्त्तापणुं मानवुं ते प्रत्यक्ष मिथ्या भ्रम छे, परकार्य कर्त्तापणुं जाणवा मानवाथी पोताना ज्ञान, दर्शन, चरण, वीर्य, रमण, सुख, अबाधितपणाने चूकी मन, वचन, काययोग द्वाराए आत्मवीर्य अनंत पुद्गल पर्यायमांहे प्रवर्त्तावबाथी स्वगुण पर्यायरुप कार्यमांहे वीर्य फुरतुं नथी, माटे परकर्त्तापणानुं मिथ्या अभिमान मूकी पोतानेज स्वकार्य कर्त्ता जाणी, मानी, अनुभवी सहजानंदनी प्राप्ति करवी. सर्वे द्रव्य स्वस्वभाव कर्त्ता पणे अस्ति छे. एम सम्यक् भावे स्वभाव कर्त्ता पणे अस्ति छे व्यवहारथी कुंभार घटनो कर्त्ता कहेवाय, पण एक पांच शेरनो घट हाथमां लइ विचारीए तो तेमांथी केटली माटी कुंभारे करी ? अने माटीना वर्ण, गध, रस, स्पर्श, आदि माटीमां अनेक धर्म छे तेमाथी कुंभारे केटला कर्या ? मात्र पुद्गल पर्याय वर्ते मृतिकाना आकार पर्यायने घटाकारे पलटाववानो कारण थयो. तेथी कारणमां कर्त्तानो उपचार करीने व्यवहार नये घटनो कर्त्ता कहेवाय, शुद्ध नये तो मृदु द्रव्य पोताना स्वभावनो कर्त्ता छे, पण शुद्ध नयमा उपचार संभवे नहि, एम घर, गाम, द्रव्य कर्मादिनो कर्त्ता उपचारथी जाणवो.

(५) स्वभोक्ता पद्–जीव द्रव्य पोताना सर्वे शुद्धाशुद्ध स्वगुण पर्यायनो भोगीछे, परक्षेत्री परद्रव्यनो भोग स्वक्षेत्रमां आवी शके नहि, माटे परगुण पर्यायना भोगनो भ्रमरूप मिथ्या भाव तजी निर्मल स्वगुण पर्याय भोगी पणे मग्न रहेवुं. आत्मा स्वगुण पर्याय भोगी पणे अस्तित्व छे, परक्षेत्री परगुण पर्यायं भोग नास्तित्व पणे जाणी ते मांहे मन, वचन, कायाना योग न प्रवर्त्तावतां निवृत्तिपणे परद्रव्य मांहे वपरातुं आत्म वीर्य सर्व समेटी स्वगुण पर्याय प्रवृत्तिमां स्थिर अकंप राखवुं. जीव द्रव्य स्वक्षेत्रे रह्या जे ज्ञानादिक शुद्धाशुद्ध गुण पर्याय तेनो भोगी छे. अशुद्धे अशुद्धनो, शुद्धे शुद्धनो भोगी जाणवो. पर पुद्गल क्षेत्रे रह्या जे वर्णादि पर्याय तेनो भोगी नथी अने स्वजाति अन्य जीव द्रव्य ते मांहे रह्या जे ज्ञान दर्शनादि गुण पर्याय तेनो पण भोगी नथी. व्यवहारथी स्त्रीए पुरुष भोगव्यो अने पुरुषे स्त्री भोगवी एम जणाय छे पण स्त्रीना स्पर्श अने प्रेरणाथी पुरुषना रक्त वीर्यादिमां जे जे विकार थाय तेनो अज्ञानी जीव भ्रमथी भोगी छे; तेमज पुरुषना स्पर्श अने प्रेरणाथी स्त्रीना अंगमां जे विकार थाय ते मने थाय छे एम जाणी भ्रमथी राग हास्यादिने भोगवे छे अने जाणे छे के पुरुष भोगव्यो. रक्त वीर्यादि आत्माथी परक्षेत्री भिन्न द्रव्य छे तेनो भोगी आत्मा नथी अने भ्रमथी भोग मानवो ते मिथ्या भाव छे. तेमज शब्दादि पंच विषय अने धनादिकनो पण अज्ञानी जीव भ्रमथी भोगी छे. वली दृष्टांतके एक सुमति अने बीजो जरू नामना बे पुरुष हता ते बंनेने कुरमति नामना त्रीजा पुरुषे घणा कुवचनथी आक्रोशथी तिरस्कार करी निर्भ्रंछ्या. ते कुरमतिना वचनरूप कारण स्पर्शी जरू पुरुषना चित्तरुप स्वक्षेत्रमां ज्वाजल्यमान क्रोध उत्पन्न थयो. पण सुमति नामनो पुरुषतो पोताना ज्ञानादिक स्वधन अने निज आत्म अंग अबाधित जाणी तेना वचनरूप कारणने न आदरतां (पोताना

चित्तमां न स्पर्शतां) परम क्षमामय निजगुण मांहे अकंप अडोल पणे स्वगुण जोगी रह्यो, क्रोधनो जोगी न थयो. दुरमतिना चित्तमां जे क्रोध हतो ते परक्षेत्री क्रोधनो जोग सुमतिना अंगमां न आव्यो पण जरू पुरुषे दुरमतिना वचनरूप कारण स्पर्शी पोताना चित्तरूपी स्वक्षेत्रमां क्रोध ऊपजाव्यो एटले क्रोधनो कर्त्ता अने जोक्ता थयो माटे कर्त्ता ते जोक्ता एम जाणवुं. अने कर्त्ता जोक्तापणुं स्वक्षेत्रे छे. माटे परक्षेत्री जोग कोइने आवतो नथी जे स्वक्षेत्रमां रागादि अशुरूताने आदरे, करे, तेज अशुरूताने जोगवे पण जे शुरूता राखे ते अशुरूताने जोगवतो नथी पुद्गलना त्रिकालवर्तीना अनंत पर्याय छे एटला रागरुप अशुरूताना अनंत पर्याय जाणवा. ते रागादि अनत पर्यायमांथी जेटला पर्यायनो नाश करिये तेटला ज्ञानना शुरू पर्याय प्रगट थया एम जाणवुं. एम सर्व पर्यायनी शुरूता करवाथी केवलज्ञान प्रगट थाय छे अने जेटला रागादि विभाव पर्याय नाश कर्या तेटला स्थिरतारुप चारित्रना पण पर्याय प्रगट थाय अने रागादिना पूर्ण पर्याय नाश करवाथी परम स्थिरतारुप क्षायक चारित्र प्रगट थाय. एम पुद्गल द्रव्यना अनंत पर्यायमां पोतापणुं मानवुं अगर कांइनुं कांइ निर्धार, रुचि, प्रतित करवी ते मिथ्यात्वना पण अनंत पर्याय जाणवा तेमांथी जेटला पर्यायनो नाश करिये तेटला दर्शनना पर्याय प्रगट थाय. मिथ्यात्वना अनंत पूर्ण पर्याय नाश करवाथी दर्शनना अनंत पर्यायना एकत्व पिरुरुप केवल दर्शन प्रगट थाय अने अनंत परपर्याय सगे रोकाएलु, चलायमान थएलुं आत्मवीर्य, ते समेटी स्वगुण पर्यायमां फोरववाथी अनंत पर्यायवंत वीर्य गुण निरावरण (स्वतत्र) प्रगट थाय एम चारे घनघातीकर्म नाश करी अनंत चतुष्टय जोगी थाउं. पुद्गलना अनंत पर्यायमांथी अज्ञानवशे कोइ पर्यायने पोताना खपनो अने भलो जाण्यो ते पर्याय ऊपर राग थाय अने कोइ पर्याय पोताने अहितकारी

जाण्यो तो तेना ऊपर द्वेष थाय ते ज्ञानावरण कहिये. अने ते पर्यायने इष्टानिष्ट जाणवाथी जे चपलता आत्मअंगमां थइ ते चारित्र गुणनी अस्थिरतारुप अशुद्धता जाणवी. अने स्वपर पर्यायमां कांइनी कांइ श्रद्धा, रुचि करवी एवो अशुद्ध निश्चय ते दर्शनगुणनी मलिनता जाणवी. तो वस्तु जेम छे तेम जाणवाथी अने जेम छे तेम निर्धार करवाथी अने जेम छे तेम आचरण करवाथी त्रणे गुणनी अशुद्धता मटे. अने ए त्रणे गुणनी अशुद्धता संबंधे वपराएलुं आत्मवीर्य ते जेम जेम त्रणे गुणनी अशुद्धताना अंश मटाडता जइए तेम तेम वीर्यगुण शुद्ध अने अचल थाय एटले चारे घनघातीकर्मनो नाश थाय. एम प्रमाद छोडी जिन वचनामृतनुं पान करी अनंत चतुष्टय भोगी थवुं.

(६) स्वग्राहकतापद—कोइ द्रव्य अन्य द्रव्यना गुण पर्यायरुप ग्राह्यने ग्रहण करी शकतो नथी. जेम सोनाना पित्तत्व गुरुत्व आदिने सीसुं ग्रहण करी शकतुं नथी माटे परग्रहणता रुप मिथ्याभाव तजी स्वग्राह्य ग्राहकत्व अस्तित्व जाणी परग्राह्य ग्रहणबुद्धि तजी स्वाग्राहकत्वे स्थिर, अचल, अकंप, समाधि भोगी थवुं.

(७) स्वव्यापकता पद—कोइ द्रव्यना व्याप्यमां कोइ अन्य द्रव्य व्यापी शकतो नथी माटे पोते अनंत चेतना चिन्हरुप स्वव्याप्य व्यापकता न भूलतां पर पुद्गल वर्णादिनी व्यापकता नास्तित्वभावे जाणी स्वलक्षण अस्तित्वमां स्थिर थवुं.

(८) स्वरक्षकता पद—कोइ द्रव्य कोइ अन्य द्रव्यनो रक्षक नथी, जेम पुद्गल द्रव्य गुण पर्यायने चेतना राखी शकतो नथी अने ज्ञान दर्शन सुख वीर्यादिकने पुद्गल के धर्मास्तिकायादि अन्य द्रव्य राखी शकता नथी माटे अन्य द्रव्यनुं रखोपु करतां स्वरक्षणता चूकी पररक्षणता माटे जूठो प्रयास करवो एवो मिथ्या भाव

ठोमी निःप्रयास निज रढ़ाकता अस्तित्व जावे जाणी स्थिर समाधि संतोप मांहे रहेवुं.

(ए) स्वकार्यत्व पद्–कोइ ड्रव्यनुं कार्य कोइ अन्य ड्रव्यमां नथी ड्रव्यनुं कार्य ड्रव्यना स्वड्रव्यादिकमां अस्तित्व ठे. परड्रव्यादिकमां स्वकार्यनुं नास्तित्व ठे. नास्ति ठतां तेमां कार्य मानवुं ते मिथ्याजाव वडे आत्मा स्वकार्य चूकी परड्रव्यमां कार्य मानतो अज्ञान मिथ्यात्व अने कपाये करिने चौदराज लोकमां जटकतो स्वकार्य सिद्धि करि शकतो नथी माटे स्वड्रव्यादिकमां कार्य मानी, जाणी, अनुजवी सदा स्वसंपदा जोगी थइ रहो.

(१०) स्वकारणता पद–शुद्ध नये स्वकार्यनी कारणता रुप ठती पर्यायरुप करणनी प्रवृत्ति स्वड्रव्यमांहे अस्तित्व जावे ठे ते माटे परड्रव्यमांहे करण कारणता जाणवा रुप मिथ्याजाव तजी स्यक्स्वरुप जाणी स्थिर थवु व्यवहारथकी विजावीक काममां अने कर्मबंधमां फस्या पठी पातुं तुटवाने माटे परड्रव्य निमित्त कारण थइ शके ठे पण शुद्ध नयेतो कोइ ड्रव्यनी कारणता कोइ अन्य ड्रव्यमां नथी. विवक्षित कार्यना कारण वमे अन्य कार्य थाय नहि अने अन्य कार्यना कारणवमे विवक्षित कार्य थाय नहि. कारण ते स्वकार्य कारणपणे अस्तित्व. अन्य कार्य कारणपणे नास्तित्व कारण ते कार्य नहि, कार्यते कारण नहि कारणते कर्त्ता नहि, कर्त्ता ते कारण नहि अने कारण कार्य एक समये होय कारणपद कर्त्तानें आधीन ठे माटे विपर्यास बुद्धि तजवी

(११) स्वकारकतापद–शुद्ध नये स्वकार्य कारकता स्वड्रव्यमां अस्तित्व जावे ठे. निज कार्य कारकता परड्रव्यमां नास्तित्व जावे ठे माटे परड्रव्यमां स्वकार्य कारकता जाणवी ए मिथ्याजाव जाणी तजवो जेम आत्मसिद्धि रुपी कार्यनो कर्त्ता आत्मा ठे, कारण

ऊपादान छती पर्याय छे, छती पर्यायनी प्रवृत्ति ते संप्रदान, परगुण पर्यायमां करणो न प्रवर्त्तावयां ते अप्रदान, कारक प्रवृत्ति करवानो आधार स्वप्रदेश अने स्वकाल आदि जाणवुं. माटे परमां निज कारक जाणी निज कार्य करीश एम मानवारुप खोटो भ्रम अने श्रम तजी सम्यक् भावे स्थिर थाउं. विवक्षित कार्यनी कारकता अन्य कार्य कारकतामां नथी. जेम घट कार्यनी कारकता घट कार्य पणे अस्तित्व पण पटकार्य कारकता ते घटकार्य कारकता पणे नास्तित्व जाणी विपर्यासता तजवी.

(१२) प्रभुत्व पद—कोइ द्रव्यनी शक्ति कोइ द्रव्यमां नथी. प्रभुता एटले शक्ति. निज शक्तिनुं प्रभुत्व निज मांहे अस्तित्व भावे छे. अन्य द्रव्यनुं प्रभुत्व स्वद्रव्य मांहे नास्तित्व भावे छे. माटे परद्रव्य मांहे प्रभुत्वनुं अभिमान छोडी निज प्रभुत्व मांहे आनंदित रहो.

(१३) ज्ञायकता पद—जीव पोतानी ज्ञायकता शक्तिए निज स्वरूपनो ज्ञाता द्रष्टा छे. वली जे ज्ञेय पदार्थ परक्षेत्री द्रव्य ते पोतानी ज्ञायकता ज्ञेयाकारे परिणमे तेथी परज्ञेयनो पण ज्ञाता द्रष्टा कहिये, पण ज्ञान परक्षेत्रे जतुं नथी, ज्ञेय ते ज्ञान क्षेत्रे आवता नथी; अने निज द्रव्य परद्रव्य रूपे थतो नथी, स्वक्षेत्र परक्षेत्र रूपे थतुं नथी; स्वकाल परकाल रूपे न थाय, अने स्वभाव परभाव रूपे न थाय. निज द्रव्य क्षेत्र काल भाव स्वद्रव्यादिके अस्तित्व, परद्रव्यादि रूपे नथी अने थाय पण नहि. तो तेने परद्रव्यादि रूपे जाणीए, मानीए, अनुभवीए, के ममत्व करिये, ए सर्वे मिथ्या भाव जाणी तजवो.

(१४) अक्रियता पद—द्रव्य स्वस्वभावे सदा अक्रिय छे, अने पुद्गल द्रव्यने ममत्वे चेतना विभावे सक्रिय छे. माटे पुद्गल द्रव्यनुं ममत्व ते मिथ्या भाव जाणी सदा अक्रिय स्वभावे मग्न रहेवुं.

(१५) परिणामीकता पद–द्रव्य आप आपना गुण पर्यायनो परिणामी छे. पुद्गल परिणतिना परिणामी थवुं ते मिथ्या जाव जाणवो पर परिणतिनी परिणामीकताना ममत्वथी निज परिणामीकता चूकी अनंत पर पुद्गल द्रव्य मांहे संसर्ग करि सहजानंद परिणामीकताने चूके छे माटे पर परिणतिना परिणाम रूप मिथ्या जाव छोडी, क्षायक दर्शन ज्ञान चरण रूप निज परिणामीकता जाणी, मानी, अनुभवी शाश्वता सुखमां आरामी थाओ.

(१६) जन्य जनकता पद–कोइ द्रव्य कोइना गुण पर्यायने ऊपजावे एवो नथी द्रव्य निज जनकपणे त्रिकाले अभेद छे माटे परनु जन्यजनकपणु मिथ्या जाणी तजवुं. आ पुत्रादिकने में जन्माव्या, हुं जनक हुं, अथवा हुं जन्य, माता पिता जनक एवो मिथ्या जाव तजवो.

(१७) अगुरुलघुपद–सर्वे द्रव्य पोताना अनंतगुणे करि अने गुण गुणना अनंत पर्याये करि सर्वदा सत्य छे ते समय समय गुण गुणना अनंत पर्यायनो षट् गुण हानी वृद्धि पणे उत्पाद् व्यय दर समय थाय तेमां कोइ समये आवीरजावे पर्यायनी षट्गुणी वृद्धि होय अने तीरो जावे हाणी होय कोइ समये आवीरजावे पर्यायनी षट्गुणी हाणी होय अने तीरोजावे षट् गुण वृद्धि होय. ए अगुरुलघु स्वजाव कहिये तेथी द्रव्य हलको अगर जारे थतो नथी तो हु मोटो हुं नानो अगर जारे हलकुं मानवुं ए मिथ्याजाव जाणी तजवु

(१८) अखंडता पद–जीव द्रव्य पोताना अनंत आवीरजाव अने तीरोजाव पर्याये प्रवर्त्ततो सत्ताए सदा अखंड छे पर्याय आवीरजावे ऊपज्या तीरोजावे विणश्या, तीरोजावे ऊपज्या आवीरजावे विणश्या ते उत्पाद् व्यय अनित्य स्वजाव कहेवाय तो पण त्रिकाल

अखंड छे. अने आवीरभाव तीरोभावे थवुं अने सत्ताए ध्रुव रहेवुं एज उत्पाद् व्यय ध्रुवरूप द्रव्यनुं शाश्वतुं लक्षण छे. तो हुं उपज्यो; हुं विणश्यो, मारुं भाग्युं, मारे आव्युं, अथवा जशे आवशे एवा मिथ्याभावे करीने पोताने कोण पमाडवो नहि. निज नीधि सहित नित्य अने पर्याय प्रवृत्तिथी अनित्य निजात्म तत्त्व जाणी सदा सम्यक् प्रकारे स्थिर रहेवुं.

(१९) आधाराधेय पद—कोइ द्रव्य कोइना गुण पर्यायनो आधार नथी. अने कोइना गुण पर्याय कोइने आधारे नथी. माटे परद्रव्यमां आधाराधेय पणुं मानवुं ते मिथ्याभाव छे एम जाणी तजवो.

(२०) अचलपद—द्रव्य निज स्वभावे त्रिकाल अचल छे जेम जीव द्रव्य चेतना आदि लक्षणे अने पुद्गल पूरणगलनादि लक्षणे सर्वे समय अचल छे. माटे पुद्गलना चल उपाधि पर्यायमां ममत्व करी निज अचल परिणतिने चूकवुं नहि. पुद्गलनी चल परिणतिना ममत्वरुप मिथ्याभाव तजवो.

(२१) साधकतापद—जीव वर्णादि परगुण रहित अने पर-गुण ममत्वविना रागादि रहित अरुपी, अतींद्रिय, केवल ज्ञानानंद-मय, अनंत वीर्यवंत, अव्याबाधमय, सिद्ध समान स्वरुपे अस्तित्व छे. एम परमात्मरुप जाणी ते उपयोगने चलायमान न करवो स्वरुपे राखवो ते साधकता कहिये. अने वर्णादिरुपे नथी माटे वर्णादि रुपे जाणवानो मिथ्याभाव तजी स्वस्वरुपे रींझी सहजानंद विलासी रहेवुं.

(२२) बाधकतापद—जीव परद्रव्यमांहे ज्यारे रक्त थाय छे त्यारे बाधकता परिणति आदरी कर्मबंधने करे छे. माटे परद्रव्यमां रक्त थवुं ते मिथ्याभाव छे एम जाणी तजी स्वस्वरुपे रींझी सहजा-नंद विलासी रहेवुं.

(२३) देवपद—केवल दर्शन ज्ञान स्वभावमां अचल रमण-

वंत अनंत वीर्य अबाधित निज अस्तिधर्मना जोगी ते देव कहिये. ते देव देवतत्त्वे अस्तित्व. एथी जे उलटा पुद्गल परिणतिमांहे मग्न जड चल जीवनी थेंठना जोगी ते मांहे देव पणानो नास्तित्व जाव जाणी देव पणाना मनन रुप मिथ्याजाव तजवो.

(७४) गुरुपद–शुरू नये सिरू समान आत्म स्वरुपना वतावनारा अने शुरूात्म प्रशस्तपणे हेय ऊपादेय मोक्षमार्गना दर्शावनारा, धन, विषय, मान, ममत्वना अर्थी नहि, निरपेक्ष, स्वपर स्वरुपना जाण, करुणाना जंडार ते गुरु. एथी जे ऊलटा शुरू नये स्वपर स्वरुपना अजाण; धन, विषय, मान, ममत्वना अभिलाषी, संसार समुरूमांहे डूबाववावाला, परपरिणतिमां रींझावनार ते गुरु नथी माटे तेने गुरुपणे मानवा रुप मिथ्याजाव तजवो.

(७५) शास्त्रपद–शास्त्र कहीए समय जेथी आत्मा आत्म ऊपयोगमां स्थिरता पामे. एथी जे ऊलटुं जे कुशास्त्रवने आत्मा पुद्गल परिणतिना सर्व अंशे अथवा एक अंशमां पण रींझ पामे ते कुवचन जाणी शास्त्रबुध्धिरुप मिथ्याजाव तजी समय जिनप्रणित सिद्धातमां मग्न थवुं

(७६) धर्मपद–धर्म ते वस्तुनो सहज उपयोगमय ज्ञानानदरुप अरुपी स्वजाव आत्म क्षेत्रथी अभिन्न तेने धर्म कहीए अनादि पुद्गल द्रव्यने ममत्वे थएली जे वकता रागादि परिणाम अने पुद्गल वर्णादिमां क्रिया प्रवृत्ति ते अधर्म. तेने धर्म जाणवारुप मिथ्याजाव तजवो. पण शुध्धात्म धर्म प्रगट करवा अर्थे कारणपणे पुद्गल क्रिया प्रवृत्ति ते कारण धर्म जाणवो · पुद्गल क्रिया प्रवृत्ति शुध्धात्मजाव प्रशस्तताए आदरवी अने अप्रशस्तताए होय ते तजवी एम हेय ऊपादेयरुप क्रिया जाणवी वली गुणठाणा साफक पण क्रिया हेय ऊपादेय जाणवी. पण शुध्धात्म रमणतो आत्माथी अने-

दपणे सदा ऊपादेय जाणवुं. शुध्धात्म धर्म ऊपदेशकनो, अगर शुध्धात्म धर्मनो, अने शुध्धधर्मीनो विनय, वैयावच्च, वांचना, पृछना, परियट्टना, अनुप्रेक्षा (बार नावनानुं नाववुं), धर्मकथा, धर्मशुक्लादि शुभध्यान, अने षडावश्यक प्रवृत्ति शुध्धात्म धर्म प्रगट करवा अर्थे ऊपादान सन्मुख देश संयम अने सर्व संयमनो व्यवहार ते कारण धर्म जाणवो. एथी उलटुं इहलोक अर्थे, परलोक अर्थे, देखा देखी अपमान टालवा अने मान पामवा अर्थे, विष, गरल, अनुष्टान प्रवृत्तिमां धर्म नथी एम जाणवुं.

(२७) जीवपद—दर्शन ज्ञान उपयोगवंत अनंत चेतना चिन्हमय. एथी जे विपरित अचेतन वर्ण गंध रस स्पर्श आकारादि परगुण पर्यायमांहे जीवबुध्धिरूप मिथ्यानाव तजवो. जीव चेतना लक्षणवंत अनादि नित्य छे. कोइ अन्य द्रव्यथी उपज्यो नथी अनंत लक्षणनो एकत्व पिंड निगोदथी मांमी सिध्धसुधी ज्ञान, दर्शन, सुख, वीर्य, कर्त्ता, भोक्ता, ग्राहकता, व्यापकतादि लक्षणे परयोगे अशुध्ध, निरयोगे शुध्ध, प्रत्यक्षादि प्रमाणे नासतो स्वगुण अस्तित्वपणे छे. (१) जेम सर्व द्रव्य अनादि नित्य छे तेम जीव पण अनादि नित्य छे. केमके जे पुद्गल स्कंध पेरे बहु परमाणुथी उपजेलुं होय, जेमां संधि होय ते विणसे पण जीवतो एकत्व पिंड छे तेने नित्य अविनाशपणुंज होय; तथा आहारादि संज्ञाओ अने घणा प्रमाणो वडे पण नित्य जाणवो. जो पुद्गल पेठे बहु परमाणुमयी थयेलो होय, तो एकपणानो अनुभव कोण करे छे? माटे नित्य जाणवो. (२) ते जीव द्रव्य पुद्गल द्रव्यना ममत्वे रह्यो थको कर्मनो कर्त्ता अने परद्रव्यना ममत्व विना शुध्ध ज्ञानादिनो कर्त्ता. (३) विभाव वशे भ्रमथी परद्रव्यनो भोक्ता, अने विभाव तजी शुध्ध नये शुध्ध स्वरूपने जाणवे, आदरवे शुध्ध स्वभावनो

नोक्ता. (४) परभाव तजी शुद्ध स्वरूप अनुभवी परमानंद प्राप्ति करी शके छे, जेम जेम प्रत्यक्षपणे मिथ्यात्व अने कषाय रूप अशुद्ध अध्यवसाय जेटला जेटला अंशे तजीए तेटला तेटला अंशे ज्ञान, दर्शन, चारित्रनी शुद्धता, दृढता प्रगट थती जाय छे तो पूर्ण अभ्यासे त्रिगुणरूप आत्मता शुद्ध प्रगट करी निर्वाण पद प्राप्ति थाय एमां शंका नथी. (५) निर्वाण प्राप्ति अर्थे शुद्ध स्वरूपनुं ज्ञान अने दृढ पतित अंने द्रव्य भाव संयम एज परमानंद प्राप्तिनो उपाय छे. ए मांहे विपर्यासता अने शंका कखा वितिगिच्छादि दोषो होय ते सद्गुरु पासे यथास्थित समजी षट् स्थानकेना भाव यथार्थ समजी सकल विपरितता रूप मिथ्याभाव तजवो.

(२८) अजीव पद—वर्णादि पूरणगलनमय पुद्गल द्रव्य, चलन सहायमय धर्मास्तिकाय द्रव्य, स्थिरसहायाधार अधर्मास्तिकाय द्रव्य, अने अवकाश दानरूप आकाश द्रव्य, ए अजीव पद जाणवुं, अने कालद्रव्यनुं स्वरूप उपचारथी छे अने एनी चर्चा विशेष छे माटे अहिंआं लख्युं नथी बीजा ग्रथोथी जाणी लेवुं. अने स्वकाल तो पंचास्तिकायनो वर्तना पर्याय अंतर्गत अभिन्नपणे छे अने व्यवहार काल ग्रहोनी गतिथी आयुष्यादि मान अर्थे जाणवो.

(२९) पुण्य पाप पद—दान, दयालुता, शील संतोष, सराग संयमादि शुभभाव ते पुण्य, एथी उलटुं चोरी, अदया, कुशील अगर अढारे पापस्थानक ते पापरूप जाणी तजवां. हवे पापना अनंत पर्यायमांथी एक पर्यायने पण पुण्यरूप न जाणवो एम पुण्य पाप मांहे जे विपरित बुद्धिरूप मिथ्याभाव होय ते तजी सम्यक् भावे स्थिर थवु

(३०) आश्रव पद—जीव ज्यारे पुद्गल द्रव्यमां इष्टानिष्ट बुद्धि करी क्रिया रसमां रक्त थाय (१)—ते वखते आत्मा पूर्व कर्म

वर्गणा सहित जे आकाश क्षेत्रमां रह्यो होय तेज क्षेत्रमां रहेली पुद्गल वर्गणा शुभाशुभरुपे प्रणमी, आवी, पूर्व वर्गणा साथे वंधाय छे; तेने आश्रव कहिये. तो पुद्गल द्रव्य आपणने गुण अगर दोष कांइ करी शके एवो नथी एम जाणी पुद्गलमां इष्टानिष्ट बुद्धिरुप मिथ्याभाव न करवो.

(३१) संवर पद—शुद्ध नये आपणुं सिद्ध समान शुद्धात्म स्वरुप जाणी त्यांज उपयोग द्रढ करवो ते संवर. संवर संवररुपे अस्तित्व अने पंच अव्रतरूप, पंच इंद्रियोना विषयरूप, चार कषायरूप, मन वचन कायानी चपलतारुप, अथवा पच्चीश क्रियारूप के कोई पण विभावनी क्रियामां संवरनुं नास्तित्व जाणी ते मांहे संवर बुद्धिरूप मिथ्याभाव तजवो.

(३२) निर्जरा पद—पूर्वे बांधेला शुभाशुभ कर्मवडे मनोज्ञ शब्दादि पुद्गल भोगनी इच्छा थाय छे. अने अमनोज्ञ स्पर्श, शब्दादि उपर द्वेष आवे छे. तो ज्ञान दर्शन चरणानंदमय निजात्मरूप अनुभवमांहे तृप्तिवंत थवाथी पुद्गल भोग इच्छा निवर्ते एटले राग द्वेषरूपी रस निर्जरे अने पुद्गल कर्मदल पण केटलेक देशे खरे तेने निर्जरा कहीए. ते निर्जरा निर्जराभावे अस्तित्व, अन्य भावे निर्जरा नथी. माटे निर्जरामां जे विपर्यास बुद्धि होय ते तजवी.

(३३) बंध पद—परद्रव्यसाथे रागादि परिणामे वंधावुं ते भाव बंध. अने रागादि शुभाशुभ भावे कर्मदल आवी आत्म प्रदेश साथे क्षीरनीर पेरे एक क्षेत्रावगाहे पुद्गल वर्गणानुं वंधावुं ते द्रव्य वंध. ए द्रव्य बंधरूप जे कर्म वर्गणा ते नवा रागादिनुं निमित्त कारण थाय छे अने नवी वर्गणा ग्रहवाने उपादान कारण थाय छे. अने रागादि भाव बंध छे ते नवा रागादि बंधनुं उपादान कारण छे अने नवी ग्रहवानुं निमित्त कारण छे. ए बंध पोताना अनंत

पर्याय बंधरूपे अन्नेदे बंधपणे एक छे. बध बंधपणे अस्तित्व, एथी उलटो शुद्धात्म अनुन्नव त्यां बंधनुं नास्तित्व पणुं छे. माटे एमांहे कांइ पण विपर्यास बुद्धि होय ते मिथ्याज्ञाव जाणी तजवी

(३४) मोक्ष पद–जीवे सकल प्रदेशे पुद्गल द्रव्यथी अने रागादि ज्ञावथी अगर ज्ञानावरणादि आठ द्रव्य कर्मथी अने रागादि विज्ञावथी सर्वांशे मूकावु ते मोक्ष. आत्माना अनंत पर्यायनी सिद्धिरूप, व्यक्तिरूप जे स्वरूप ते मोक्ष मोक्ष मोक्षरूपे अस्तित्व, एथी जे उलटो अनात्म पर्यायनो संग, ममत्व, के परिचय, ससर्गादिमां मोक्षनुं नास्तित्व पणु छे माटे ए मांहे कांइ पण विपर्यास ज्ञाव होय ते जाणी, तजी, सम्यक् ज्ञावे स्थिर थवु.

(३५) सम पद–आत्मा अनादि अशुद्ध स्वज्ञावरूप अविद्या वडे पोतानुं शुद्ध स्वरूप जेवु छे तेनुं अणजाणते जे पुद्गलमां व्यापेलो तेने पोतापणे जाण्युं अने ते पुद्गलमां थता विकारोने टालवा माटे जे अन्य जीव तथा जे पुद्गलने प्रशस्त जाणे ते उपर राग अने जे जीव अने पुद्गलो अप्रशस्त जणाय तेना उपर द्वेष उपजे वली प्रशस्त जाणेला जीव तथा पुद्गलने कोइ रोके, हरकत करे ते उपर द्वेष तेथी ज्ञानावरणरूप विषम पणु थयु एटले ज्ञान गुण मलीन अने चल थयो कोइ पुद्गल आत्माने हित अथवा अहित करी शके एवो नथी ते उतां परद्रव्यमां शुज्ञाशुज्ञ संकल्प्यो पण जेवुं पोतानु शुद्ध अबाधित निजात्म स्वरूप छे तेवु जाणेथी शुज्ञाशुज्ञ संकल्प मटे, ज्ञानगुण निर्मल अने शुद्ध थाय पुद्गल द्रव्यना अनंत पर्याय छे तेटला रागादि अशुद्धताना पर्याय जाणवा. अशुद्धता मटवाथी ज्ञानना अनंत पर्याय निर्मल अने स्थिर थाय ते ज्ञानने समपद जाणवुं. परमां पोतापणानो निर्धार, श्रद्धा, रुची, पतित ते मिथ्यात्व एटले दर्शन गुणनी मलीनता जाणवी.

जेटला पुद्गल द्रव्यना पर्याय छे तेटला मिथ्यात्वना पर्याय जाणवा. आत्म गुण पर्यायमां आत्मपणानो निश्चय, श्रद्धा, रुची, पतित थवाथी मिथ्यात्वना अनंत पर्यायनो नाश थइ दर्शन गुणना अनंता पर्याय निर्मल स्थिर स्वभावे प्रगटे, परद्रव्यना अनंत पर्यायमांथी एक पर्यायनी पण पोतापणे अथवा मारा खपनो छे एवी श्रद्धा, रुची, पतित होय त्यां सुधी दर्शन गुणनी मलीनता जाणवी. शरीरादि परद्रव्यने पोतापणे जाणवाथी ते पर शरीररूप जे पुद्गल तेने प्रशस्तपणे अन्य पुद्गलो अने जीवादि संबंधमां जे विषयादिरुपे आचरण अगर अप्रशस्त टालवा कषायरुपे आचरण ते चारित्रगुणनी मलीनता तथा अस्थिरता जाणवी. तेना पण पुद्गलादि अन्य द्रव्यना पर्याय जेटला पर्याय जाणवा. ज्यारे आत्मा शुद्ध निजात्मरुपे पोतापणे जाणे, द्रढ श्रद्धा, रुचि पतित करे अनुभवे त्यारे परम स्थिरता पामे एटले पराचरणना अनंत पर्याय नाश थइ चारित्रना शुद्ध अने स्थिर रमणरुपे अनंत पर्याय प्रगटे. ज्यांसुधी पुद्गलना एक पर्यायनुं आचरण छे त्यांसुधी चारित्रनी अशुद्धता कहीए. ए त्रणे गुण अभेद पणे एक आत्म स्वभाव छे. ते समपद आत्म स्वभावे अस्तित्व पर अनंत पर्याये नास्तित्व, स्व अनंत पर्याये अनेक स्व आत्मपणे एक, स्व अनंत पर्यायना भेदे भेद, बहु भेदपणे पण अभेदी, स्व द्रव्यथी ध्रुव सदा नित्य, स्व पर्यायना उत्पाद् व्यये अनित्य, नव नवा पर्यायभवने भव्य, स्वस्वरुपे रहे माटे अभव्य, समभावना अनंत पर्याय श्रुतज्ञान गम्य वचन गोचर आवी शके तेथी वक्तव्य, समभावना वक्तव्य पर्याय करतां अनंत गुणा पर्याय वचन गोचर आवे नही पण केवल ज्ञानगम्य तेथी अवक्तव्य, नामथी समभाव, क्षेत्रथी असंख्यात प्रदेश स्थापनारूप, द्रव्यथी अनंत स्थिर चेतना पिंड, भावथी ज्ञान दर्शन सुख वीर्य रूप परमानंदमय. समभावना अंशो समभावमां छती जाणवा. नैगमे पुद्गलादि परद्रव्य अंश अहिंआं

नथी, संग्रहे अनंत शुद्ध सत्तावंत, व्यवहारे समिति गुप्ति आदि सत्तावन अगर अनंत भेद, ऋजुसूत्रे परिणामे परमानंदनुं कारण, शब्द, समभिरूढ, अने एवंभूते परमानंद व्यक्तिरूप ते समभाव जाणवो

(३६) क्षमापद–स्वपर आत्माना ज्ञानादिक अनंत पर्यायने शुभाशुभ संकल्पे करीने हणवा नहि, दुखववा नहि, बीजा पासे पण हणाववा अनुमोदवा नहि, समभावे राखवा अने स्वपर द्रव्य प्राणने विषयादि कारणे अगर अकारणे हणवा नहि, ते क्षमा. आत्म गुण रखोपाना अनंत पर्याय क्षमामां अभेद पणे अस्तित्व जाणवा आत्म गुण रखेपुं, मोहनिकर्मादि कर्म परिणामनुं रमण तजी शुद्ध स्वभावमां स्थिर थवाथी थाय छे

(३७) मार्दवपद–मृदुता परिणामे अरिहंत अने धर्माचार्यादि गुणीनो अने ज्ञानादिक गुणनो तथा ज्ञानादिक गुणनां कारणोनो विनय, बहुमान, आदर, सन्मान अने कोइ जीवनु पण अपमान नहि अने आठ प्रकारना मदनो त्याग ते मृदुता गुण कहिये.

(३८) आर्यवपद–चित्तमांथी कुटिलता परिणाम तजी जीवोना सुख पर्याय अनंतमांथी एक पर्यायने पण उगवो नहि ते आर्यवपद.

(३९) मुक्तिपद–पुद्गलना अनंत पर्यायमांथी एक पण पर्यायनी ग्रहण संग्रहनी इछा, मूर्छा, कामना, मनोरथ, तृष्णा, अभिलाष नहि ते मुक्तिपद

(४०) तपपद–दर्शन ज्ञान चारित्रना अनंत पर्यायमां तृप्ति, मग्नता वधे पुद्गलना अनंत पर्यायमांथी एक पण पर्यायने भोगववानी इछा, कामना, मनोरथ न करवो ते पूर्ण तप पद

(४१) संयमपद–आत्म गुणना अनंत पर्यायने उपयोगमां

संभाली राखवा. उपयोग विषय, कषाय हिंसादि अव्रतरूप अने परभावनी क्रियामां मन वचन कायाए करीने जवादेवो नहि एटले द्रव्य भाव हिंसामां उपयोग न जवा देवो, स्वस्वरूपे स्थिर राखवो ते संयमपद.

(४२) सत्य पद–निजात्म द्रव्य गुण पर्यायने पोतापणे जाणवुं, मानवुं, अनुभववुं अने प्ररूपवुं ते सत्य. एथी उलटुं पर द्रव्य गुण पर्यायने पोतापणे जाणवुं, मानवुं, अनुभववुं ते असत्य.

(४३) शौच पद–निजात्म गुण पर्यायने राग, अज्ञान, मिथ्यात्व रूपे मलिन न थवा देतां स्वस्वरूपे निर्मल राखवो अगर पूर्वे मलिन थएला ज्ञान दर्शन चरण गुण ते भेदज्ञान रूप स्वपर विवेके संवर जले निर्मल करवा ते शौचपद.

(४४) आकिंचन पद–कंचन, मणि, माणेक, तृण तुष परमाणु मात्रनो संग्रह न करवो ते आकिंचनपद.

(४५) ब्रह्मचर्यपद–शुद्ध सिद्ध समान शुद्धात्म ब्रह्ममां निज परिणतिनुं रमण, अने अढार हजार भेदे अगर अनंत भेदे अब्रह्म टालवुं ते ब्रह्मचर्य पद. ए क्षांत्यादि दशे स्वस्वरूपे अस्ति परस्वरूपे नास्ति, माटे दशेनुं स्वरूप यथार्थ जाणवुं अने रूची, पतित, ते सम्यक्त्व. एथी जे विपर्यास बुद्धि ते मिथ्यात्व.

(४६) निर्भयपद–पोताना ज्ञानादिक अनंत पर्यायमांथी अगर आत्म अंगमांथी कोइपण प्रदेश के शक्तिरूपी धननो वियोग थवानो नथी. आत्मा पोतानी ज्ञान दर्शन स्वभाविक चाल छोडी पुद्गल मांहे गमन करे नहि. अने पुद्गल चाल आदरे नहि तो परलोक कोण जाय ? पोताना ज्ञान दर्शन चरण सुख वीर्य प्राणे करी सदा जीवतो अबाधित छे, कोइ समये विनाश पामतो नथी, रोगादिक पुद्गलमांहे होय छे पण पुद्गलथी न्यारुं पोतानुं स्वरूप शुद्ध

जाण्युंके त्यां रोगादिकनो अंश मात्र प्रवेश थाय तेम नथी. कोइ द्रव्यना गुण पर्याय कोइ राखी शकतो नथी द्रव्यना गुणो द्रव्यथी समवाय संबंधे शाश्वत होय छे एटले मारे कोइ रक्षकनी जरुर नथी मारुं ज्ञानादिक धन, शक्ति, रिद्धि मारा आत्म अंगथी अभेद, अतूट, अखंड छे. चोरादि मारा ठता खजानाने जाणी अने लेइ लुंटी वगाडी शकता नथी द्रव्यना शाश्वत स्वभावमांहे अणचित्यु कांइपण थवानुं नथी ज्ञानादिकना पर्याय अनंतकाल ज्ञानादिक स्वभावे उत्पाद् व्यय ध्रुवरुप परिणामिकपणे परिणम्या करशे, कांइ अगुस थवानुं नथी हुं निर्भय, निशंक, निराकुल, स्वतंत्र, स्वयसिद्ध अनंत मोकलाशमय सत्ता स्थलमां सदा आनदित विराजुं तु एम जाणी निर्भय रहेवुं एमांहे कांइ विपर्यास भाव भासे ते सद्गुरु सगे सद्बोध आदरी विपर्यासता तजवी

(४७) प्रमेयपद्–लोकाकाशमां जेटला जीव द्रव्य छे तेथी एक वधे पण नहि अने घटे पण नहि दरेक जीवमां अनंता ज्ञानादिक गुण छे ते गुणोमांथी एक गुण घटे के वधे नहि एक गुण स्वजाति अन्य गुण रुपे न थाय विजाति अन्य गुण रुपे पण न थाय गुण गुणना अनंता पर्याय छे, तेमांथी एक पर्याय वधे के घटे नहि कोइ पर्याय स्वजाति अन्य पर्यायरूपे न थाय, विजाति अन्य पर्याय रूपे न थाय. वली पुद्गल द्रव्य परमाणुरूपे अनंता छे, द्विप्रदेशी, त्रीप्रदेशी, संख्यात प्रदेशी, असंख्यात प्रदेशी, अनंत प्रदेशी खंध अनता छे ते खंधरूपे वधे, परमाणु रूपे घटे, परमाणुं रूपे वधे खंध रूपे घटे पण परमाणु द्रव्य अनंतामांथी एक पण घटे नहि. नवो एक पण उपजे नहि परमाणुमांहे अनत गुण छे तेमांहेथी एकपण गुणनी सत्ता घटे के वधे नहि अने पर्याय गुण गुणना अनंता छे तेमांहेथी एक पर्याय वधे के घटे नहि एक पर्याय स्व अन्य अनंत पर्याय रूपे न थाय, पर अनंत पर्यायरूपे न थाय, आप आपणी मर्यादाने छोडे नहि. वली

धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकायनी पोताना द्रव्य गुण पर्यायनी जे मर्यादा छे तेमांहेथी घटे के वधे नहि. अन्य रूपे थाय नहि. अलोकाकाशमां आकाशना अनंत प्रदेश छे. प्रदेशे प्रदेशे अनंता पर्याय छे ते प्रदेश अने पर्याय घटे वधे नहि. अन्य रूपे थाय नहि. त्रिकाले पोतानी मर्यादा चूके नहि. एमांहे जे विपरित भासे ते सद्गुरू समीपे समजी सूक्ष्म मिथ्याभावने दूर करवो.

(४८) प्रमाण पद--केवलज्ञान ते प्रत्यक्ष प्रमाण छे. अने अवधि, मनःपर्यवज्ञान ते देश प्रत्यक्ष प्रमाण छे. अने मति, श्रुतज्ञान परोक्ष प्रमाण छे. तेमांहे श्रुतज्ञानरूप कांइ प्रमाण लखीए छीए. पुद्गलना वर्णादि पर्यायमांथी एक पर्यायने जाणी तेना वर्ण गंध रस स्पर्शादि अनंत पर्यायनी छतीनुं प्रमाण करीए. वर्णादि छती पर्यायने जाणी अनंत गुणनी छतीनुं प्रमाण करीए. अनंत गुणनी छतीना प्रमाणथी पुद्गल द्रव्यनुं प्रमाण करीए. पुद्गल द्रव्यथी पुद्गल गुणनुं प्रमाण करीए. पुद्गल गुणथी पुद्गल पर्यायनुं प्रमाण करीए. जीव द्रव्यथी जीव गुणनुं प्रमाण करीए. जीव गुणथी जीव द्रव्यनुं प्रमाण करीए. जीवनो एक गुण होय त्यां जीवना बहु गुण होय एम प्रमाण करीए. जीवना गुणथी जीवना पर्यायनुं प्रमाण करीए. जीवना एक पर्यायथी बहु पर्यायनुं प्रमाण करीए. जीव द्रव्यथी जीव क्षेत्रनुं प्रमाण करीए. जीवना क्षेत्रथी जीवना स्वकालनुं प्रमाण करीए. जीवना स्वकालथी जीवना स्वभावनुं प्रमाण करीए. जीवना स्वभावथी उलटा जे विपरित ते परभावनुं प्रमाण करीए. उत्पादथी व्ययनुं प्रमाण करीए. व्ययथी उत्पादनुं प्रमाण करीए. उत्पाद व्ययथी ध्रुवनुं प्रमाण करीए. प्रमेयथीज प्रमाण थाय छे. उत्पाद व्ययथी अगुरुलघुत्वनुं प्रमाण करीए. उत्पाद व्ययथी द्रव्यत्वनुं प्रमाण करीए. द्रव्यत्वथी सत्त्वनुं प्रमाण करीए. अने सत्त्वथी वस्तुत्वनुं प्रमाण करीए. वस्तुत्वथी अस्तित्वनुं प्रमाण करीए. सामान्यथी विशेषनुं प्रमाण करीए. विशे-

पथी सामान्यनु प्रमाण करीए. नयथी जावनुं प्रमाण करीए. निक्षेप न्यासथी स्वपर जिन्न वस्तुनु प्रमाण करीए नाम निक्षेपेथी स्थापनानुं प्रमाण करीए, स्थापना ए स्वक्षेत्र छे एम जाणवुं स्थापनाथी द्रव्यनुं प्रमाण करीए नामथी जावनुं प्रमाण करीए जावथी नामनुं प्रमाण करीए द्रव्यथी जावनुं प्रमाण करीए

उक्तंच ॥ एक गुण पमाणे वहु गुण पमाणे, गुण पमाणे पज्जय पमाणे, एक पज्जय पमाणे वहु पज्जय पमाणे, वहु पज्जय पमाणे गुण पमाणे, गुण पमाणे दव्व पमाणे, दव्व पमाणे खेत्त पमाणे, खेत्त पमाणे काल पमाणे, काल पमाणे जाव पमाणे, जाव पमाणे काल पमाणे, काल पमाणे खेत्त पमाणे, खेत्त पमाणे दव्व पमाणे, कत्ता पमाणे कज्ज पमाणे, कत्ता पमाणे क्रिया पमाणे, क्रिया पमाणे कत्ता पमाणे, क्रिया पमाणे कज्ज पमाणे, कज्ज पमाणे क्रिया पमाणे.

एम प्रमाणना अनंत जेद जाणी स्वपर द्रव्यादिक जिन्न जाणी परद्रव्यनुं ममत्व तजी मारा खपना नथी मने गुण दोष करी शके एवा नथी एम परद्रव्यने जिन्न जाणी परथी उदासिन्न वृत्ति करी निज शुद्ध स्वजावमांहे स्थिर थवुं वली सुगुण पुरुषोए थोमेथी वधारे समजी लेवुं अगर सिध्धांतमांथी सद्गुरु मुखे समजी लेवुं अप्रमाण कोइ जाव वने नहि माटे विपरित बुधि टाली वस्तुनु सम्यक् प्रकारे स्वरुप जाणी मिथ्या वासना तजवी.

(४ए) सहज निःप्रयासपद—आत्मा कोइ अन्य द्रव्यथी थएलो नथी तेम पुद्गल परमाणु, धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, अने आकाश ए पंचास्तिकाय द्रव्य कोइ अन्य द्रव्यथी थएला नथी माटे आपणे सहज शाश्वत स्वसत्तावंत अनादि नित्य ठीए ज्ञा-

नादि गुणना पर्याय सहज विना प्रयासे अन्य द्रव्यना कारण विना स्वतंत्र वर्त्ते छे तेथी कोइ अन्य द्रव्यनी आशा के कांइ पण प्रयासनी जरुर नथी. अनादि अशुद्ध स्वभाव वडे परद्रव्यमां ममत्व कर्युं के ए मारुं, हुं एहनो, हुं एह, ए हुं, ए मने, ए माराथी, ए मारामां, ए मारावास्ते, एम अनेक प्रकारे ममत्व कर्युं ते ममत्व टालवा सद्गुरुनो विनय, वैयावच्च, बहु सन्मान करी शुद्ध नये निज स्वरुप शुद्ध जाणी, सद्दही, आदरी, अनुभव आस्वाद लेइ सकल क्लेश निवारी सहज स्वभावरुप परमानंदमय निःप्रयास प्राप्ति करीए. अनादि अशुद्ध स्वभाव ते पण आत्मानो छे के स्वरुपथकी बाहेर देखवुं. अने गर्भित अनादि शुध्ध स्वभाव पण आत्मामां छे के जे वडे पोतानी शुध्ध सत्ताने देखवुं. ज्यांसुधी बाहेर देखवानो अने परकर्तृत्व स्वभाव छे त्यांसुधी परकर्तृत्व पणुं करे. पोतामांहे स्वतंत्र कर्त्तापणुं छे. माटे शुध्ध स्वभावने जाण्या पछी अशुध्ध स्वभाव न आदरतां सहज परमानंद भोगी थाय.

(५०) सुकालपद—आत्मामां ज्ञानादिक अनंत गुणनी सत्ता अनादिथी छती छे ज्यारे परमगुरुना वचनरुप ज्ञानघन वृष्टि थाय त्यारे सम्यक् स्वरुप अंकुर ऊल्लसी ज्ञाननी शाखा प्रशाखारुप स्वभावाचरण वृक्ष फेली केवल ज्ञानादिक पुष्पे प्रफुल्लित थइ परमानंद फल प्राप्तिरुप सुकाल थाय. पण ज्ञानघन वृष्टिमांहेथी संवररुप नीर स्वक्षेत्रे वाली लेइए एटले पछी मोक्ष फलनी प्राप्ति पामी सादि अनंत कालसुधी सदा सुकाल रहे.

(५१) सुमित्रपद—सुमित्र एटले निर्वाण मार्गरूप साचा सुखमां प्रेरवावालो हित उपदेशक जाणवो. ते अरिहंत आचार्यादिक स्वपर स्वरूपना जाण, पर अनंत पर्यायमांथी जेनी ममत्व बुद्धि गइ छे, भाषा वर्गणाना उदय वशे, धन, मान, ममत्व अने विषयादि कारण विना परमकरुणा भरेला हृदये जिनवचनना प्रेर्या थका भवीजीवोने

मोक्षमार्गमां प्रेरे छे अज्ञान, मिथ्यात्व, कषाय अने जन्म, जरा, मरणादि व्याधिथी बचावनारा, उत्सूत्रने हलाहल विष समान जाणे छे, जेने बाह्य क्रियानो हठ पक्षपात विषवाद नथी, तेनां वचन बहु सन्माने बाह्य अंतर विनये करी आदरवां. अनंत कालथी शुद्धात्म भावमां प्रेरवावालो नहि मलवाथी सिद्ध समान आत्मानी दूर्दशा थइ छे, मांस वीर्यादि अने वैक्रियादि पुद्गलो जगत् जीवनी एंठने पोतापणे मानी अनंत वेदना सहे छे धन्य ! ते वेलाने अने धन्य ! ते घडीने, धन्य ! ते नगरीने के आपणने प्रेरकनो अवसर मळ्यो प्रेरक मलवाथी मोह अने मिथ्यात्वनो अज्ञान अने अंतरायनो क्षय थाय प्रेरकरूपी सुमित्र पोतानां वचन माननारने वैमानिकादि सुगति करावे छे. सिद्धि पदनो दातार थाय छे. संसारमां स्त्री पुरुषादि कुटुंब पोताना विषयने अर्थे जेने मित्र जाणे छे, तेने कषाय, मिथ्यात्व, अज्ञान, अने नरक तिर्यंचादि दुर्गतिमां प्रेरे छे. जूओ जूओ आश्चर्यनी वात छे ! के अमृत समान सद्गुरूना वचनमांतो आदर थतो नथी तेथी अनंतगुणो पुरुष, स्त्री, पुत्रादिकमां आदर थाय छे. लौकिक रीतमां अने सन्मानमां पण बहु आदर थाय छे. जूओ जूओ मोहनुं महात्म्य ! के दुःख त्रासदाई कुसंगतमां आदर करावे छे अने सद्गुरूना वचनमां आदर थवा देतो नथी माटे सुगुण पुरुषोए चेती प्रमाद छोडी सद्गुरु वचनमां परम आदर करवो. जे सद्गुरुना वचननो परम आदर करे तेने बाह्य अभ्यंतर रिद्धि सिद्धि नवनिधि ने परमानंदनी प्राप्ति पोताना हाथमां छे जेना चित्तमां गुरुनु अपमान छे तेने सुख अने मुक्ति, सुगति दूरे छे जे पुद्गल भावमां प्रेरे, पोताना विषयादिना अर्थी होय तेमां सुमित्र पणानो नास्तित्व भाव जाणवो प्रेरक प्रेरकपणाना अनंत पर्याये सुमित्रपणे अस्तित्व जाणवो विपर्यास श्रद्धा, रुचि तजवी सदा सुमित्र संगे रही परम कल्याणकारी दशानो उमेद करवो.

(५१) परमानंदपद–ज्ञायकता शक्तिनो अनंत ज्ञानानंद, अनंत दर्शनानंद, दर्शन ज्ञानमय उज्वल निज रम्य स्वरुपमां अनंत चरणानंद, दर्शन ज्ञानादि अनंत गुणमांहे निज वीर्य स्फुरे ते वीर्यानंद, निजात्म अंग निज अनंत रिद्धि सहित अवाधित रहे ते अव्याबाधानंद, स्वभावदानानंद, स्वभावलाभानंद, अनंत स्वपर्याय भोगानंद, अनंत स्वगुण उपभोगानंद, स्वतंत्रानंद, अकृत्रिम सहज स्वरुपानंद, आत्म स्वक्षेत्रमांहे अन्य द्रव्यादिक आवी शके नहि अनंत लोकालोक ज्ञायकतानो अवकाश तथा स्वपर द्रव्य ज्ञायकताना अनंत पर्याय त्रिकालवर्त्तीना समकाले एक समयमां भासे ते परम भोकलाशानंद, निज गुण अचल रहे ते अचल निःकंपानंद, स्व स्वरुपे सदा निर्मल रहे ते निर्मलानंद, कोइ अन्य द्रव्यनो भय नहि ते निर्भयानंद, कोइ कार्यमाटे आकुलता नहि ते निराकुलतानंद, स्वसंपदामांहेथी अंश मात्र पण विणसे नहि ते अशोकानंद, स्वसंपदा अक्षय रहे ते अक्षय अमरानंद, रोगादिक आवे नहि ते अजरानंद, प्रदेश के गुण घसाय नही शक्ति हीण न थाय ते अखेदानंद, अंग अथवा गुण भेदाय नहि समवाय पणे रहे ते अभेदानंद, लेश्यादि पुद्गल लेश लागे नहि तेथी अलेश्यानंद, कोइ गुण स्वपर अन्य गुणथी भले नहि भ्रमादि थाय नहि खुटे नहि ते निर्द्वंदानंद, कोइ कारणे कोइ समये विकल्प आवे नहि ते निर्विकल्पानंद, कोइ वाते कलंक आवे नहि ते अकलंकानंद, पोताना ज्ञानादिक धन रक्षणार्थे अन्य कोइ रक्षकनी जरुर नथी पोते पण रक्षा कर्या विना सहेजे स्वधन अतूट अखंड रहे ते स्वरक्षणानंद, सकल कर्म शत्रुने जीती जय वर्या कोइ अन्य पोताने जीती शके नहि ते अजितानंद, आत्म स्थान अन्य दृष्टी गोचर नहि एवा अगोचर स्थाननो अगोचरानंद, आत्मीक अनंत रिध्धि आत्म प्रदेशथी अन्वय समवाय ते अन्वयानंद, कोइ कार्य माटे यत्न प्रयत्न करवुं

पमे नहि ते अयत्नानद अथवा अप्रयासानद, पारकी आशा करवी पमे नहि ते निरपेक्षानंद, संसारी आनंद ऊपचारथी छे रोगादिना ऊपचारने आनद मनाय छे पण आत्मिक आनंद निरुपचरित छे ज्ञानादि रिध्धि वापरतां जोगवतां विणसे नहि खुटे नहि ते अव्यायानंद, आत्मिक आनंद ते नि कंटक एकलो आनंद, संसारी जोगमां रोगादिकनो जय छे ते अहिं नहि ते एकांतिक आनंद, आत्मिक आनंदनो अत आवे नहि माटे अत्यंतिकानंद, ए शिवाय अनंत गुणनो आनंद छे ते जिन्न गुणना एक समय अनंतानंदने परमानंद कहीए एम आनंदना अनंत पर्याय स्वस्वरूपे अस्ति जाणवा अनंत आनद एक रूपे अजेद एम सकल स्याद्वाद विधिए अनंत आनंद जाणी आदरी स्वतंत्र परमानंद जोगी थाउं.

आ वावन पदमां जे जे नाव लख्या छे ते अन्योअन्य दरेकना एक एकमां विचारी आत्मज्ञाव आत्मामां समावी परज्ञाव परमां समावी चित्तमां तत्त्व विचाररूपी कसरत करवी तेथी लब्धीवीर्य प्रगट थशे प्रथम निश्चय समकित निर्मल करी मिथ्यात्व मोहनियना दलने क्षय करी क्षायक समकित पामशे माटे रात दिन वे वे घडी धन कुटुंब मान अपमान संबधे रोकायलुं चित्त पाछुं वाली एक ठामे स्थिर करी हमेश तत्त्व विचार करवो पुरुषाकार पराक्रम फोरवी क्षायक समकितनी सिध्धि करवी पठी घनघातीकर्मनो नाश सहेजे थशे माटे ऊद्यम करवो ऊद्यम एज लक्ष्मीनुं मूल छे. आमां जे जे नावो यथार्थ समजवामां न आवे अगर विशेष न समजाय ते सद्गुरु समीपे समजी मोहादिकनो जय करवो.

॥ दोहा ॥

वावन जिनघर स्थापीए, देव एक अरिहंत ।
तेम वावन पदथी लहो, शुध्ध स्वज्ञाव अनत ॥ १ ॥

बावन जिन घर संघमां, मूल नायक जिम एक ।
बावन पदथी तिम लहो, परमातम सुविवेक ॥ २ ॥
सन्निपात असंखनुं, बावन अक्षर मूल ।
बावन पद विज्ञानघन, सहेजातम अनुकुल ॥ ३ ॥
जे ऊज्वल ऊद्यम करे, पावे सुख भरपुर ।
शिव संपत्ति ते पामशे, प्रगटी ज्ञान अंकुर ॥ ४ ॥
गांधी दलसुख तत्त्वनो, रुचिधर निर्मल चित्त ।
कस्तुरां आनंद बहु, जाणी निज पर हित ॥ ५ ॥
ए बेहुना आग्रह थकी, पद बावन अधिकार ।
बावना चंदन रसथकी, शांती अनंत अपार ॥ ६ ॥
संवत ओगणी वासठे, कृष्ण दशम गुरुवार ।
वैशाखे दोहद रच्यो, तत्त्व सुधा सुविचार ॥ ७ ॥
मनसुख सुखकर वाणि जिन, सेवो थइ सावधान ।
आतम गुण सिध्धि लहो, पामो पद निर्वाण ॥ ८ ॥

॥ श्री रस्तु संपूर्ण ॥



प्रस्तावना.

जिन वचन समय सिद्धांत समुद्र दुर्गम अथाह छे हुं तनुमती तेनो पार पामी शक्यो नथी पण जे जे वचनो मारी समजमां आत्म हितकारी मुख्य पणे जणायां ते प्रवचन भक्तिए प्रेयों कांइक लखवानी उमेद थइ तेथी लख्युं छे पण सहजानंद सुख अभिलाषी जीवोए पूर्वाचार्यना महान् ग्रंथोना प्रमाणमां जे वचन होय ते अंगिकार करी शुरू मार्गे वर्त्तवुं.

आ ग्रंथमां परमात्म भावनी शुरूता आदरवी अने स्वस्वरूप अणजाणतां परसंगे थएली अशुरूता तजवानो अधिकार छे.

जे जीव संसार तापथी भयभीत थइ मोक्ष अभिलाषी थाय ते आनो अधिकारी छे.

परम पुरुषना रचेला अनेक ग्रंथो छे पण बालजीवोने सहेजे समजवा माटे टुंकामां आ विषय लखेलो छे.

परम पुरुषोना रचेला ग्रंथोमां सार समजी आ लखाण कर्युं छे माटे जे भव्य, गुरुगम सहीत धारशे आदरशे ते सहज समाधि पामशे.

॥ श्री ॥

ॐ श्री वीतरागायनमः

॥ आत्मबोध पत्रिका ॥

॥ मालिनी वृत्तम् ॥

अतिशय अति मोटे, सर्व आपत्ति नाशे;
वचन अतिशयेथी, सर्वने अर्थ भासे;
सकल भरम भागे, ज्ञान सिद्धि स्वभावे;
पूजनिय पद पामे, पूज्य पूजा प्रभावे.
परम गुरु मुनींद्रे, दिव्य वाणी उचारी;
सुणि गणधर देवे, द्वादशांगे प्रसारी;
सकल दुरित हारी, सर्व कल्याणकारी;
कुमति सकल कापी, शांति दे निर्विकारी.

उप्पय छंद.

महावीर जिनराज, अनंत चतुष्टय धारी;
नयनिक्षेप प्रमाण, सीय पद युत अविकारी;
शुद्ध प्ररुप्या अर्थ, ज्ञान संयमना कारण;
खचित जेहथी थाय, कर्म अरि अष्ट निवारण;
लाभ तेनो लही विनित जन, निज भावे जे थिर रहे;
लहि लब्धि पंच निज शिवपुरे, सादि अनंते सुख लहे.

॥ श्री दोहरा ॥

स्वस्ति श्री आतम धरम, मृगमद लहो सुवास;
सहज स्वतंत्र समाधियुत, पामो लील विलास. (१)
चिदानंद आनंदघन, शुद्धनये निजरुप;
लही शाश्वत सुख अनुभवो, अखय अनंत अनुप. (२)

चतुर चेतना चूकमां, शुद्ध नये निजरूप,
चेतनता विण और सब, ठांगो अन्य विरूप. (३)
करम करम फल तजी रहो, सहज चेतना लीन;
तुरिय अवस्था पामीने, रिद्धि लही निज पीन. (४)
मनथिर करी शुद्धात्ममें, नरजव सफल करत.
शुद्ध सार जिन वचननो, खुरो लहो शिवपंथ. (५)

स्वस्तिश्री मानवपुरी महाशुभस्थाने जीवाजी चेतना चिरंजीव, योग्यश्री सद्भाव वसतपुरीथी ली. मनसुखलाल, हुं चाहुं हुं के सकल तीर्थंकरोना अपायापगमना अतिशय पसाये ताहारा सकल विघ्न दूर थाओ. तेओना वचनातिशय पसाये द्वादशांगना जावनो जाण था. तेओना ज्ञानातिशय पसाये आपणा सकल संशय मटो. तेओना पूजातिशय पसाये तु पोताना अविचल पूज्यपदने पाम. तेओनी तारक परिणतिनी करुणा ताहारा सर्व प्रदेशे अने साते धातुए परिणमो; ते साथे मारी पण तने एमज आशिष छे. तु पोताना चैतन्य लक्षणे अस्तिपणाने, नित्यपणाने, शुद्धाशुद्धपणाने, शुद्धाशुद्ध भोक्तापणाने, अनंत आनंदमय परमपदनी प्राप्तिने, तथा परमपद प्राप्तिना उपाय संयम ज्ञानने, शुद्ध नये पोते निज अनुभव ज्ञाने जाण

वली जिनोक्त जीवादि नव पदार्थना जावने चारे निक्षेपे यथार्थ जाणी सकल विकल्पोना समुद्रने तर आश्रव बंध आदि भयंकर दु खकारी जावने तजी संवर निर्जरादिक अनंत स्वतंत्र आनंददायक आत्मजावने आदर.

तुं, शुद्ध चेतना सत्ताए सिद्ध समान एक अखंड अबाधित स्वतंत्र छे एम सम्यक् दर्शन निर्मल करी आगळ शिवमार्गे निर्विघ्नपणे चाल

जो के तें उत्पत्ति समये अंगुलना असंख्यातमा भागे अवगाहना करी पुद्गलो ग्रही आहारादिक पर्याप्तिए करी सात धातुपणे पुद्गलो परिणमावी लोलीभूतपणे थइ ममत्व कर्युं. तेज पुद्गलो वधारतां वधारतां अनंतानंत नवा नवा लीधा, अने निहारादिके अनंतानंत छोड्या. जन्म थया पछी वस्त्र आभरण परिजन घर मित्रादि अनेक परवस्तुनुं ममत्व कर्युं. शाता समाधि विषयादि भोग समये पोताने सुखी मान्यो, अशाता असमाधि भय चिंता वियोगादि समये पोताने दुःखी मान्यो, ते जाणनार तथा माननार बंने वखतमां सर्वकाल अनुगत तुं पोते एकज छे. एम पूर्व भवे पण अनादि कालथी तुं पोते एकज छे. अनंतकाल सुधी चैतन्य शक्ति सहित तुं पोते कायम रहीश. कोइ द्रव्य कोइनो संगी नथी, तो आनंदमय निजात्म तत्त्वने जाणी केम छोडीये ? अहिंआं अनित्यादि बारे भावना विचारी धर्म, बोध पामवो दुर्लभ जाणी सदागमनो संग, अने स्वपर विवेक मित्र, अने समकित कामदार, सुरुचि सखी, विमल बोध, निवृत्ति नारी, सुबुद्धि, भववैराग्य, सद्बोध आदि पोताना हेतुओने कोइ समये विसारीश नहीं. तुं पोताना पुरुषत्वने चूकीश नहीं. अन्य जाति शत्रुने भरोसे आपणुं राज्य सोंपीश नहीं, पर पुद्गल द्रव्य शत्रुओनो विश्वास करीश नहीं. पुद्गल वर्णादिकमां मोहनो वास छे, अने ज्ञानावरणादि सर्वे कर्म परिणामनो कुटुंब पुद्गल वर्णादिकमां वसे छे माटे तेमांहे विश्वास करी सुखस्थान जाणी सुखनी आशाए प्रवेश करवो नहीं. ते शत्रुओना सपाटामां सपटाया पछी छुटवुं बहुज मुश्केल छे.

प्रथम देशविरति स्त्रीथी सगपण कर, एटले तेज पोतानी मोटी बेन संयम स्त्रीने मेलवी आपशे. पछी पोतानुं राज्य लेवा क्षमा खड्ग करमां धरी क्रोधने मार. अने अनंत जीवोनो क्षेमंकर था.

तारा आत्म अंगनुं तथा ज्ञानादि धननुं सदा रखोपुं करजे. माह-

णता जाव प्रकाशी थए कायनुं ऊव्य जावे रक्षण करजे, करावजे रक्षण कर्त्तानें अनुमति आपजे.

वली मार्दव परिणामे करी, अने विनयरूप वज्रदंडे मानना आठे पर्वतोने तोरू. अने धर्माचार्य तथा अरिहंतादि तथा आत्मगुण सेवता, सेवरावतानो विनय कर, कोइ जीवने पण अवगणीश नहीं एटले तुं अनत सन्मान पात्र थइश.

वली आर्जव रूप असिधाराए मायावेलीने ठेदी मूलथी उखेडी नांख वली तुं सहजानंद कामी थइ परऊव्य परमाणु मात्रनी कामना मूर्छाके इच्छा राखीश नहीं तेथी तुं चौद रज्जुप्रमाणे लोज सागरने सहजे तरीश एटले तृष्णा नागणी अने दीनता वींछु तने स्पर्श करी शकशे नहीं, दूरथीज मूर्छित थइ जशे

तुं पोताना सहज चेतना विलास अव्याबाध जोगने जोगव, एटले तने पचेऽियना जोगनी इच्छाविना परम तृप्ति रहेशे तुं पंचेंऽियना विषय तथा पंच अव्रत, चार कषाय, मन वचन कायाना जोग-प्रवृत्तिनी चलाचल ठोमी निर्मल चेतनामां उपयोग स्थिर स्थापी अचल अकंप रहेजे. एटले संयम परम पवित्र स्थिर रहेशे सरत राखवी के ताहारा उपयोगने कोण चलावे छे? जागृत थइ सामे सचेत रहेवाथी कोई उपयोग चलावी शकशे नहीं जो उपयोग चलवानुं कारण जणाय तो तेने जेदज्ञाननी धाराए तुरत नाश करजे

तुं पोताने पोताना ऊव्यादिके सत्य स्वरूपने धारी परऊव्यादि असत्य अने नास्तिरूपमां लक्ष दइश नहीं रागादिक रहित सदा शुऊ रहेजे मिथ्यात्वादि अशुऊताना अंश मात्र पण आत्मअंगे लागवा दइश नहीं तुं आकिचन जावे स्थिर रहेजे एटले पुद्गल परमाणु मात्रनो पण आसंगो करीश नहीं अढार हजार शीलाग रथना वहाणमां वेशी शुऊ ब्रह्मनु जहाज चलावजे

अढार हजार शीलांगनी विगत—पांच स्थावर, चार त्रस,

अने एक अजीव वर्णादि ए दशने मथवुं नहीं. ते क्षांत्यादि दशधर्मे गुणतां एकसो थाय, ते चार (आहार, भय, मैथुन, परिग्रह) संज्ञाए गुणतां चारसो थाय, तेने पांच इंद्रियना विषयोए गुणतां बे हजार थाय, तेने त्रण योगना परिणामे गुणतां ठ हजार थाय, तेने करण करावण अनुमोदन ए त्रणे गुणतां अढार हजार थाय. ए अढार हजार शीलांग रथनो चलावनार थजे.

द्रव्य भावथी स्वपर जीवनुं रक्षण करजे. शुद्ध उपयोगमां अप्रमत्त भावे स्थिर रहेवुं एमां भाव दया तथा द्रव्य दया वली स्वपर दया आदि सर्वे जिनप्रणीत धर्ममां समावेश थाय छे. अने मोहनिय कर्मनी अठावीस प्रकृतिमांनी एकमां पण वर्त्ततां प्रथमतो पोतानाज भाव प्राणनी हाणी थइ. अने पछी स्वपर द्रव्य भाव प्राणनी हाणीनी संतती चाले माटे प्रमाद एज हिंसानी जड छे अने ज्ञानावरणादि प्रकृति, स्थिती, अनुभाग अने प्रदेशबंधनी जड पण एज छे. माटे बहु सावचेतीथी परम पुरुषार्थवडे गफलत न राखतां ए जडने मूलथी उखेडी फेंकवी. मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन, परिग्रह ए सर्वे हिंसानाज पर्याय जाणवा. स्वपर आत्माने हितकारी शिवाय अन्य कशुं अलिक बोलीश नहीं. चार प्रकारनुं अदत्त तजजे. औदारिक वैक्रिय अंगना काम भोगनी मन वचन कायाए अभिलाषा करीश नहीं. बीजाने अभिलाषा करावीश नहीं. अभिलाषीने भला जाणीश नहीं. परिग्रहनी मूर्छा राखीश नहीं. अढार पाप स्थानने तजजे एटले तने कोइ परिसह आवशे नहीं.

ते अढार पापस्थाननां नाम—प्राणातिपात (१) मृषावाद (२) अदत्तादान (३) मैथुन (४) परिग्रह (५) क्रोध (६) मान (७) माया (८) लोभ (ए) राग (१०) द्वेष (११) कलह (१२) जूठुं आल (१३) पैशुन्य (चाडी) (१४) रति अरति (१५) पर अपवाद (१६) कपट सहित मृषावाद (१७)

मिथ्यात्व शल्य (१७) ए अढार पापस्थानने मूलथी छोडजे जगत्मां जे जारे दुःखो तथा जयंकर गतिउं थाय छे तेनुं कारण अढार पापस्थान शिवाय बीजुं कांइ नथी माटें पापस्थान नहि सेव्युं होयतो, उपसर्ग अथवा परिसह आवशेज क्यांथी ? माटे मूलथी पापस्थानने छोडी पठी अप्रमत्त गुणस्थान पामी स्थूल कषायनो अंत आणजे. निचे प्रमाणे–

निंदा विकथा विषय उन्मादादि छोरी सावधान थइ अप्रमत्त गज उपर बार जावनारुप अंबाडी स्थापी ज्ञान खड्ग हाथमां लइ वेसजे अने आगल सत्तारूमि साधवा माटे शत्रुनी फोजने जीतजे तुं अखंड, अविनाशी, अजंग अंगवालो तथा अटुट रिद्धिवंत छे, तो तारो शत्रु कोण छे ? तने कोण हरकत करनार छे के जेना उपर तु क्रोध करे ? एम क्रोधने जीतजे सर्वे जीव केवलज्ञानादि रिद्धि सत्ता सहित छे, तो मान कोनाथी ? कोइ तारुं सुख अने धन लइ शके अथवा पारकुं तने मली शके तेम नथी, तो कपट कोनाथी ? एम मायाने जीतजे ताहारा सत्ता जंडारमां ज्ञानादि अनंत रत्नो अने ते गुणोना पर्याय रुप अनंत मणि जरेला छे, तेमां कांइ बीजुं समाय तेम नथी, तो निर्जीव पदार्थनो लोज केम करीए ? एम लोज सुजटनो जय करजे कर्मवशे आपणे अनंतवार हांसीने पाम्या तो शो अचंबो छे ? पारकी हांसी शी वावत करीये ? एम हांसी परिणामने जीतजे अस्थिर पोंढगलीक अंग अने परतंत्रमां रति शानी ? एम रतिने जीतजे आपणुं आत्मिक अंग अने धन अखम अबाधित छे, तो अरति शानी ? एम अरति जीतजे आपणुं आत्मिक अग तथा धन अखूट अटुट अजंग छे तो जय शानो ? एम जयने जीतजे. आपणे अनंत काल संसारमां जटक्या तो पण आपणुं सर्वस्व कायम छे तो शोक शानो ? एम शोकने जीतजे आपणी ज्ञायकतामां शुजाशुज अनत ज्ञेय ज्ञासि रह्या छे तो अमनोज्ञ शब्दादिनी दुगंछा

शेनी ? ते अशुज्ञ वर्णादि आत्म अंगने स्पर्शी शकता नथी. आपणो सहजानंद विलास निज अनुज्ञवमांहे छे तो अन्य स्पर्शादिमां कामना शानी ? कामविकार उदारिकादि शरीरोमां छे, आत्म अंग सदा काम रहित छे. एम शुद्ध सत्ता रमण करी आगळ दशमा गुणस्थाने सूक्ष्म लोज्ञना असंख्य खंड खंड करी मोहने हणी संवर रसे निज अंग प्रक्षाली पवित्र थइ शुक्लध्यान करजे. पृथक्त्व वितर्क स्वपर विचार, अने एकत्व वितर्क अपर विचार करी ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अंतरायनो नाश करी अनंत केवलज्ञान दर्शन अचल-वीर्य जलहल ज्योति जगावी अनंत चतुष्टय ज्ञोगी थजे. पछी मारे कंइ कहेवानुं नथी. एम ज्ञान दर्शन चारित्र निरावाध करी निर्मलता अने एकता करवी, एज तीर्थंकरोए मोक्षनो मार्ग कह्यो छे. पण प्रथम मिथ्यात्व हणवा पूरुं जोर करवुं. अहिंआं मिथ्यात्वनो अंश मात्र टकवा देवो नहीं. सत्ताथी उखेडी फेंकी शुद्ध क्षायक सम्यक्त करवुं, एटले विरति सहेजे आवशे अने पमवानो मर रहेशे नहीं. पछी स्वज्ञावाचरणे रमण करी, सत्तामां रहेला हास्यादिने क्षपावी, दशमे गुणस्थाने सकल मोहनो क्षय करी, यथाख्यात चारित्रे रत्न-त्रयनी एकता करी अनंत चतुष्टय प्रगट करजे. कोइ द्रव्य अन्य द्रव्यनो संगी नथी. माटे पारकी आशा छोमी क्षण मात्र पण प्रमाद करीश नहीं.

द्रव्यना गुण पर्याय, क्षेत्र, काल, ज्ञाव, अस्तित्त्व, वस्तुत्त्व, द्रव्य-त्त्व, प्रमेयत्त्व, अगुरुलघुत्त्व, सत्त्व जे जेना होय ते तेनामां समाववा. जन्य जनक अज्ञेदपणे, ज्ञेद अज्ञेदमां, अंश अंशीमां, सत्ता सत्ता-वंतमां, परिणाम परिणामीमां, धर्म धर्मीमां, अनित्यता नित्यतामां, ज्ञव्य अज्ञव्यमां, वक्तव्य अवक्तव्यमां, अनेक एकमां, व्यक्ति श-क्तिमां समावी पोताना अस्तित्वमां राखी, परनां पररूपे पोतामां नास्तिपणे जाणी द्रव्यना निक्षेपा तथा सप्तज्ञंग धर्म जे जेना ते

तेनामां समावी निज शक्ति व्यक्त करी शुद्ध सिद्ध स्वरूपे पोताने जोजे वली लक्ष लक्षण, ग्राह्य ग्राहक, व्याप्य व्यापक आदि एक समय अने सर्व समय स्वाधिन निर्धारी समाधिमय पोताने जोजे एटले मिथ्यात्वनो अंश मात्र रहेवानो नथी. एम समकीत सडसठ गुण सहित निर्मल थशे वली १ अनित्य २ अशरण ३ संसार ४ एकत्व ५ अन्यत्व ६ अशुचि ७ आश्रव ८ संवर ए निर्जरा १० लोकस्वजाव ११ दुर्लजबोध १२ धर्म ए बार जावना विगते जाववी तथा करुणा, मैत्रिय, प्रमोद, अने माध्यस्थ ए चार जावनाउं पण जाववाथी सदाए कर्म बंधथी बचीश वली साधुनी पांच जावनाउं जाववाथी उतावले कर्म निर्जरा थशे–

मुनीनी पांच जावनाउंनां नाम–श्रुत (१) तप (२) सत्व (३) एकता (४) स्वतत्व (५) एटले मार्ग सुगम थशे एटले आनंदपुरीमां बेठ पहोचाडनारी उदासिन्नतारुप सीधी सडक पामीश आगल कोइने पण मार्ग पूछवो पडशे नहीं माटे धैर्य लोपवुं नहीं.

औदयिकादि पांच जावने जाणी, क्षयउपशम जावे ज्ञान अने वीर्यलब्धि तने प्रगट थे ते वडे क्षायक जाव करी शुद्ध परिणामीक जावे सदा अचल रहेजे.

ते पांच जावना उत्तर जेद जेपन तेनी वीगत–

औदयिक जावना एकवीश जेद–गतिचार, कषायचार, लिंगत्रण, मिथ्यात्व, अज्ञान, असंयम, असिद्धत्व अने लेश्या ७, एम एकवीश थाय

औपशमिक जावना बे जेद–मिथ्यात्वनो उपशम (उपशम समकीत) कषायनो उपशम (उपशम चारित्र.)

क्षयोपशमीक जावना अढार जेद–मति, श्रुति, अवधि, मन.-

पर्यव, मतिअज्ञान, श्रुतअज्ञान, विभंगज्ञान, चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन, दान, लाभ, भोग, उपभोग, वीर्य, वेदक समकीत, (क्षयोपशम समकीत) सराग चारित्र, देशविरति. ए अढारनो क्षय उपशम थाय छे.

क्षायकना नव भेद—क्षायक समकीत, ज्ञान, चारित्र, दर्शन, दान, लाभ, भोग, उपभोग, वीर्य.

परिणामिकना त्रण भेद—जीव परिणामीकता, भव्य परिणामीकता, अभव्य परिणामीकता.

विषयो अने परिसहो आदिथी चलवुं नहीं. ताहारा अखंड अगंने अने धनने कोइ लेवा, हलाववा, चलाववा समर्थ नथी. पण पोते चूकवुं नहीं संवेग राखवाथी पूर्व कर्मना वेगनो वहेलो अंत आवशे. भव वैराग्य भव भ्रमणने मटाडशे; तुं जे अनंत जंतुउं पर करुणा करीश ते सर्वे करुणा ताहारा उपर थशे. तत्त्व दातारनां वचन बहु सन्मान अने विनयथी धारवां. द्रव्य गुण पर्यायना विचारथी मत धारीउंना फंदोने तुं तोडी शकीश. तुं अनंता संयोगमां पोते ज्ञानमय अखंड एक शुद्ध छे. एम एकतानी टेक राखजे. मत धारीउं देवादिकनी ऋद्धिउं लब्धिउंनी लालच बतावे ते लालचमां आपणे पडवानी जरूर नथी, मात्र आत्मा पोतानुं अखंड आनंदमय आत्म तत्त्व पामे एटलुंज बस छे. तो पण माहारा तरफथी एटलुंज कहेवानुं के बत्रीश दोष रहित अने अनंत ज्ञाने भरेलां परम दया वरसावता अरिहंतनां वचनने चूकीश नहीं. हे मित्र ! तुं सकल जीवनो क्षेमंकर था, के तने संसारमां पण अशाता थवानो संभव रहेशे नहीं. माटे हिंसा, मृषा, अदत्तादान, मैथुन, परिग्रहने वशे आपणे स्वपर आत्माने अहितकारी थवुं नहीं.

चेतनानी चार दशा कही छे—महाशयन (१) शयन (२)

जागृत (३) अने तुरिय (४) ए चारमां ताहारे मिथ्यात्व अवस्थामां अनादिनी महाशयन दशा हती ते तो गइ. पण जागतां आलसुनी पेठे पमी रहेवा जेवी शयन दशा ठे, तेने ठोमी प्रमाद तजी अप्रमत्त जावे सचेत था. जागृत दशा पामी मोह शत्रुने हणवा सावधान था. ताहारी सत्तानूमिमां तो तेनुं जोर नथी. आपणे तेना वर्णादिक अनेक पर्यायमांथी कोइ पण पर्यायमां सुख जाणी कार्य मानी तेमांहि चित्त प्रवेश करी व्यापीए तो त्यां सपमाई जइए पठी तुटवुं मुश्केल पडे, जेम कोल्हु यंत्रमां (शेलमी पीलवाना यंत्रमां) आंगली आव्या पठी आखा अंगनो नाश थवानो संजव रहे ठे माटे मोहना नानामां नाना जावमां पण सुखनी आशाए चूकवुं नहीं. मोह वहु रूपे आपणने ठगे ठे माटे घणा जीवोनी तथा आपणी पूर्वनी अवस्था जोइ सावचेत रहेवु ते अठावीश प्रकृती रूपे–सुख दुःख आलस, विकथा, लोकलाज, ऋद्धि, सिद्धि मंत्र, यंत्र, कला, चतुराइ, हसवा, रोवा रूप हाव जावना चाळा जणावी आपणने चूकावे ठे माटे कर्मचेतना, कर्मफलचेतनारूपे न थतां निज ज्ञानचेतना रूपे अकप रहेजे. आत्मा आत्मअधिकारमां रहे तेने अध्यात्म कहीए माटे शुद्धात्म अधिकार संजाली आपणो अधिकार चूकीश नहीं शुद्ध परमात्मजावमांहे मग्न रहेजे–

हे जव्य! तु ए जड पदार्थथी जूली चेतन मित्रसाथे विश्वास थइश नहीं हे आर्य! तुं पोताना विवेक पुत्रने दुर राखीश नहीं ते तने बिलकुल ठगावा देशे नहीं हे बंधु! तुं अध्यात्म साधकोनो संग ठोमीश नहीं.

कुटुंब, मित्र आदि वहुरूपे मोह नटुवो ठे. कोइ रीते पण पोताना पासमां लइ विकराल जवअटवीमां नचावी वहु विपत्ति पमाडवा चाहे ठे.

सर्वे लोक मोह वशे स्वार्थी छे. अनर्थ ने अर्थ मानी आपणने हितकारी पण जणाय; तोपण हे सुज्ञ! तुंज तारा आत्माना हितमां प्रमाद करीश नहीं. हुं पण मारो स्वार्थ चाहुं छुं पण तुं आत्म हित चूकीश नहीं, ज्ञानी, ध्यानी, केवलीने सिद्धनी सत्तामां तुं अनंतानंद विलासी थजे.

तुं सम्यक्तना सडसठ बोल विचारी समकीतनी बहु दृढता करजे.

ते सडसठ बोलनी विगत–चार सद्दहणा, त्रण लिंग, दशनो विनय, त्रण शुद्धि, पांच दूषण, आठ प्रभावक, पांच भूषण, पांच लक्षण, छ यतना, छ आगार, छ भावना, छ स्थानक, एम सर्व मली सडसठ बोल थाय.

सद्दहणा चार–जीवादि नवतत्त्वरुप पदार्थना परमार्थनी यथार्थ श्रद्धा. (१) शुद्धात्म स्वरुपमां रमण करतो अने शुद्धात्मस्वरुप दर्शावनार एवा गुणे मुनिने झवेरीनी पेठे परखी आदरवो. (२) पासथ्था, कुशिलिया विगेरे वेषधारी आणा रहितनो संग कदापी न करवो. (३) अन्य दर्शनीनो संग तजवो. (४)

लिंग त्रण–श्रुत सांभलवानो, संभलाववानो अने धारवा विचारवानो अभिलाष. (१) शुद्धात्मधर्म अनुभववानो अभिलाष. (२) आलस रहीत धर्मदातानो विनय करवानो अभिलाष. (३)

दशनो विनय–अरिहंत, सिद्ध, जिनप्रतिमा, श्रुतसदागम, क्षांत्यादि दश धर्म, क्षांत्यादिक दश धर्म धारी मुनिउनो, धर्माचार्य, उपाध्याय (सुत्र भणावनार), जिन आणामां वर्त्तता चतुर्विध संघनो, सम्यक्त. ए दशनो पांच प्रकारे विनय करवो. बहु विधि बाह्य भक्ति (१) हृदय प्रेमथी बहु सन्मान (२) हता गुणनी स्तुति (३) अवगुण न बोलवा (४) आशातना वर्जवी (५) अर्थात् तेमना मन तथा तनने जे अप्रशस्त होय तेने तजी प्रशस्तने आदरवुं–वर्त्तवुं.

त्रण शुद्धि–जिनेश्वरनां वचन एज आत्माने हितकारी छे अ-न्यनां वचन हितकारी नथी. एम मनमां विचारवुं (१) जिन आणा प्रमाणेज वचन बोलवुं ते वचन शुद्धि (२) जिन आणा प्रमाणे काया प्रवर्त्तावबी

पांच दूषण–सकल दोष रहित, अनंत ज्ञान सहीत, जेने राजा तथा रंक समान छे, तेनुं वचन जूठुं न होय, पण पोतानी मंद बुद्धिथी तेमां जे शंका आवे ते नय ज्ञानीने पूछी शंका रहित थवुं (१) कुमतिनी इछा न करवी (२) जिनेश्वरनां एक पण वचनमां तथा कोइपण धर्म कार्यमां कोइ प्रकारे अप्रीति कुगंठा न करवी (३) कुदेवादिकना गुण वर्णन नही करवा (४) अने मिथ्यामतिनो परिचय न करवो. (५).

आठ प्रज्ञावक.–वर्त्तमान सुत्रना अर्थनुं पारगामीपणुं (१) नंदिपेणनी पेरे तत्व उपदेशकपणुं (२) कुवादीउने निरुत्तर करवा-पणुं (३) शासन रखोपा अर्थे निमित्त ज्ञान (४) शुद्धात्म स्वभावमा तृप्तिवंत रहेतां इंद्रियोना विषयादिकने न इछवुं (५) शासन रक्षणार्थे विद्याबल (६) शासन उत्कर्षता माटे सिद्धि (७) काव्य सुधा-रसे जीवोने धर्म रसीया करवा (८).

पांच भूषण–गुरू वंदनादिकमां कुशल पणुं (१) शुद्धोपयोग तथा शुद्धोपयोग दातारने सेववुं एम तीर्थ सेवना (२) शुद्ध देव गुरुनी भक्ति (३) भेद ज्ञानना बल वडे कोइना चलाववेला न चलवु (४ जिन वचननी अनुमोदना (५)

पांच लक्षण–मिथ्यात्व रागादिकनो उपशम (१) शुभाशु-भमां समभाव (२) इंद्रिय विषयने बहु दुःखनु कारण जाणी तेथी विरक्त रहेवुं (३) छकायना प्राणी उपर दयभाववी अनु-

कंपा (४) नवे तत्त्वना भाव सिद्धांतमां प्ररूप्या छे ते उपर आस्तिक्यता (५)

७ यतना–परतीर्थीओ तथा परदेवो वगे ग्रहायेला चैत्यादिकमां वंदन करवुं नहीं. एटले हाथ न जोडवा (१) मस्तकादिक अंग नहीं नमाववां. (२) तेना निमित्ते कदी कंइ आपवुं नही (३) कुपात्रने पात्र बुद्धिए वारंवार न आपवुं (४) पासत्थादिक साथे विना बोलावे एकवार पण न बोलवुं (५) तेओए बोलाव्या छतां वारंवार न बोलवुं (६)

७ आगार–७ कारणे छुट–राजाने वशे कंइ अनाचार करवो पडे ते (१) घणा लोकोने वशे कंइ करवुं पडे ते (२) व्यंतरादिक देवोना वशे कंइ करवुं पडे ते (३) माता पिता गुरुना कारणथी कंइ करवुं पडे ते (४) दुर्लभ आजीविकार्थे कंइ करवुं पडे ते (५) बलवंतना बलात्कारे कंइ करवुं पडे ते (६) ए ७ बाबतमां शुद्धात्म धर्मथी न चलतां बाह्य क्रिया प्रवृत्ति माटे आगार छे.

७ भावना–आ प्रमाणे भाववी–श्रेष्ट अने रसवाला समकीत रुप मूल विना चारित्र वृक्ष शिव फल आपतुं नथी (१) समकीतए धर्म-पुरीनुं बारणुं छे ते विना स्वभाव धर्मरुपी नगरीमां प्रवेश थतो नथी (२) समकीत ए मोक्ष महेलनो दृढ पायो छे माटे समकीत रुप पायो दृढ होय तो धर्मरुपी महेल रुगे नहीं. (३) समकीत ए मूल गुण तथा उत्तर गुण रुप रत्नोने राखवानो अटुट भंडार छे. ते विना ते रत्नो छुटां रहे नहीं, ए भंडार दृढ होय तो मिथ्यात्वादि चोरोनुं जोर चाले नहीं. (४) सर्वे शुद्ध गुणोनो आधार समकीत छे. सम्यक्तना आधारे समभाव रहे अने दम एटले इंद्रिय विषयथी पण निवृत्ति रहे एटले पृथ्वी जेम सर्वे वस्तुने रहेवानो आधार छे तेम समकीत उत्तम गुणोने राखवाने माटे परम आधार

छे (५) समकीत ए श्रुतज्ञाननो अमृत समान रस अने शुद्धात्म स्वभावनो अनुभव रूप रस जरी राखवानुं जाजन छे (६).

७ स्थानक—समकीत ऽढ रहेवानां ७ स्थानको—ज्ञान दर्शन उपयोगवंत चेतना उतो छे, ते कर्मवशे शुऽाशुऽ रूप थाय छे पण चेतनत्व पणे सदा उतो छे एवी ऽढ प्रतीत पुद्गलसाथे क्षीर नीर पेरे मिश्रित थयो छे तो पण पोते पोताना व्याप्य व्यापक अभेदपणे अनेक परवस्तुथी न्यारो अनुभवमां आवे छे (१) सर्वे ऽव्य त्रिकाले पोताना उत्पाद् व्यय ध्रुवपणे परिणमी रह्या छे माटे पोते नित्य छे, बालकने स्तन पानादिक बहु विधि संज्ञा (वासना) पूर्व भव अनुभव अनुसारे छे माटे आत्मा नित्य छे. (२) पुद्गलमांहे अहंपणारूप मिथ्याभावथी कर्म वशे पुद्गल परिणामनो कर्त्ता छे. जेम कुंभार दंडादि संयोग वडे घटादिनो कर्त्ता छे तेम चेतना पोते मिथ्यात्व, अव्रत, योग, कषाय अने प्रमाद वडे कर्म परिणामनो कर्त्ता छे निश्चय नये तो चेतना पर कारण विना पोताना शुऽ स्वभावनोज कर्त्ता छे (३) व्यवहार नये पुण्य पापनो भोक्ता छे अने शुऽ निश्चय ऽष्टे पोतानी शुऽ सत्तानो भोगी छे (४) निर्वाण पद चेतना पामी शके छे, शरीर अने मनना अहंपणा वडे याधिव्याधि उपजे छे, ते शरीरादिना अने मनना ममत्वना अभावे शुऽ परम पदनी, अबाधित अनंत सुखनी प्राप्ति थाय छे. (५) मोक्ष साधवा माटे खट्कायना ऽव्य भाव प्राणने ओलखी तेनुं रखेपुं करवुं, तेने न हणवुं एटले ज्ञान अने संयम एज मोक्षनो उपाय छे. (६)

ए प्रमाणे समकीत ऽढ करजे के कदी पडवुं पडे नहीं. क्यारे हुं ताहारा निर्मल ज्ञानने जोइ निवृत्तिमां रहुं!

ज्ञान, दर्शन, चारित्र आराधताने तुं कारण थजे, अचल अक्षय वीर्यवंत थजे, कोइवाते हर्ष शोक करीश नहीं, समभाव तने सहाय

थजो, तुं परम शील परम शांतिमां अक्षय अविकारी रहेजे, संसार भमतां अनेक जीवोथी आपणे विरुद्ध करी कये न्याये सुखी थइये, माटे हवे पंच महाव्रत अने पंच समिति, त्रण गुप्तिए करी खट्-कायनुं रखोपुं करी स्वपर जीवथी अविरूद्ध रही शाश्वत सुख वरजे.

जो के खट्काय रखोपुं महा दुष्कर छे तो पण आत्म उपयोग आत्म भावमां रींझ करी स्थिर थापी रहीये तो सहेजे खट्कायथी अविरुद्धता बनी रहे. मन वचन कायानुं ममत्व अने क्रिया तजी परमात्म भावमां स्थिरता करवानो अनुभव अभ्यास करजे एटले सहेजे संसार समुद्र तरीश, वली भव्य जीवोने तारीश.

॥ दोहरो ॥

सवि पर द्रव्य ममत तजी, तजी त्रय योग विलास
ज्ञानी ज्ञानानंदमां, करजे थीर अभ्यास (१)
रिद्धि सिद्धि वरजे सदा, लही आतम अधिकार
सार सकल सहेजे लही, तार तार निज तार (२)

सर्वे वातनो सार एके पोतानी सत्ताभूमिमां अचल, अडग, धीर थइ अनंत अणिवालुं जलहलतुं ज्ञान खड्ग मोहना मर्मस्थानमां दाव राखी मारजे. तेथी मोह शत्रु तरत अनंत खंभोखंड थइ नाश पामशे. तेनी मूढता नामे स्त्री टलवलती शुक्लध्यान अग्निमांहे प्रलय पामशे. पछी तुं जलहल ज्ञान उद्योतमां पोताना अनंत गुण पर्यायने देखतो, जाणतो, परम रम्य स्वरूपमां रमण करी स्वभावाचरणी थइ परम अचल वीर्य अव्याबाध अनंतसुखी अनअवगाहनावंत अगुरूलघुविलासी आनंदपुरीमां सदा आनंदमां रहेजे.

॥ दोहा ॥

शुक्ल ध्यान केसर लही, पुजो परमातम अंग;
निज गुण मृगमद महमहे, विलसे रंग अनंग (१)
आतम पुद्गल दोहदे, लखियो पत्र उदार,
वांची अर्थ हृदय धरे, पामे सौख्य अपार (२)
१ ६ ९ १
शशि रस नक्ति चंद्रमा, वरसे श्रावण मास,
कृष्ण पक्ष अग्यारसे, कीधो पत्र विलास (३)
वांची निर्मल हृदयमां, धरजे तत्त्व प्रकाश;
पूर्णानंद समाधिमां, करजे अविचल वास (४)

संपूर्ण.



॥ श्री गौतमाय नमः ॥

अथ श्री शुद्धोपयोग प्रवेशिका ग्रंथ प्रारभ्यते

॥ दोहरा ॥

ज्ञानानंदी शिव सदा, तीर्थपति जिन पास ।
तास श्रुति प्रणमी कहुं, निर्मल बोध विलास ॥

भाषा–सम्यक् ज्ञान एज संपूर्ण सुखनुं कारण छे ते भाव मिथ्यात्वना नाशथी प्रगट थाय छे, माटे सुखना अर्थी जीवोए (मुक्ति अभिलाषी जीवोए) ते सम्यक् ज्ञान तथा भाव मिथ्यात्वनुं स्वरूप जाणवु जोइए, ते जाणवा माटे अनुभव ज्ञाने सिद्ध थएली विना इहां लखुं तुं

सुख ए शी वस्तु छे ? आपणे कोण छीए ? सुख आपणाथी भिन्न छे के अभिन्न छे ? ते केवी रीते पमाय ? अथवा केम नथी पामी शकता ?

तेनो उत्तर–श्री जिन सिद्धांतमां कह्युं छे के "वत्थु सहावो धम्मो" आत्म वस्तुनो स्वभाव तेज धर्म अने तेज सुख, निर्मल स्फटिक मणि समान चैतन्य स्वभाव मन वचन कायानी निवृत्तिथी स्वतंत्र प्रगट करवो तेज धर्म; तथा निवृत्तिरूप निर्मल शुद्ध स्वतंत्र स्वभाव तेज सुख. अने मन वचन कायानी प्रवृत्ति तेज दुःख छे. निर्मल स्फटिक मणि समान आत्मानो शुद्ध स्वभाव छे, ते अनादि देहादिकना ममत्वादि कर्म परिणामे करी अवराणो (रोकाणो) छे. ते कर्मना बे भेद (१) द्रव्यकर्म (२) भावकर्म द्रव्यकर्म ज्ञानावरणादि आठ प्रकारे छे, अने भावकर्म ते रागादि आत्मानी अशुद्ध परिणति द्रव्यकर्म अने भावकर्मनु मूल कारण भाव मिथ्यात्व छे,

अने नाव मिथ्यात्वथी विपर्यास वासना थाय छे. तेज विपर्यास वासनाथी परम परमेष्टी एवो जे आत्मा ते अनंत संसार भ्रमण करी नयंकर जन्म, जरा, मरण, ताडन, तर्जन, रोग, वियोगादि अनंत विकारने नोगवतो दीन-अनाथ थइ जिहां तिहां गति, योनि, प्राण, पर्याप्ति करी नटके छे. ते जोइ करुणाना समुद्र शुद्धात्म अनुनवी पोताना दिलनी अंदर करुणानी लहेरमां परम मित्रताए विचारे छे, के अहो ! आश्चर्य छे के अनंत ज्ञान, दर्शन, तथा अनंत सुखनो धणी एवो आत्मा आ नयंकर संसारमां अजाण दीन थइ नटके छे, माटे तेनुं शुद्ध स्वरुप जणावीए, अनुनवमां आणावीए, तो दुःख अने अज्ञान लेश मात्र रहेवा पामे नहि; तेथी निचे प्रमाणे उपदेश करे छे.

हे नव्य ! तुं पोताना स्वरुपने जाण, तुं पोते शुद्धात्मा छे. सत्ताए सिद्ध समान, अनंत ज्ञानमयी, अनंत दर्शनमयी, अचपल, बाधा पीडा रहित, अक्षय, अजर, अमर, निःकलंकी, अप्रयासी, एक, नित्य, अव्यय, अक्रिय, परनो अकर्त्ता, परनो अनोक्ता, स्वनाव नोगी, उपनोगी, स्वदानी, स्वलानी, अनंत चेतना वीर्यमयी, इत्यादि अनंत विशेषण युक्त निश्चय नये एक शुद्ध अनिन्न रूप छे, तेने अणजाणतो विपर्यास वासना वडे नवभ्रमण करी क्रोधादि अनंत कषाय, कामादि अनेक विषयोवडे तप्त (आक्रांत) थइ महा आक्रंद करे छे, ते दुःखनी निवृत्ति माटे आप्त केवलज्ञानी रागादिकने जीतेला अरिहंत नगवंते धर्म देशना दीधी. तेमां मुक्तिने माटे असंख्य योग कह्या, तेमां अनुनव योग ते मुख्य छे. तप, तीर्थ, व्रत, संयम, पूजा, प्रनावना, सर्वे योग आत्मअनुनव माटे छे. तेथी कारण तथा कार्यना स्वरुपने जाण्या विना सर्वे निष्फल छे. ए माटे परमेश्वरे उपदेश दीधो के हे नव्य ! तुं शुद्ध निश्चय नये आत्म स्वरुपने जाण अने तेज शुद्ध नये पोताना स्वरूपमां स्थिर थइ

रमण कर, जो तुं अंतरमुहूर्त्त पण समयांतर रहित रमण करीश तो अनत कर्मनी निर्जरा थशे, अने तुरत परमानंदमय (समाधिमय) मुक्तिपदने पामीश. एटले ज्यांसुधी शुद्ध नये पोताना स्वरुपने पोतापणे जाण्युं नथी त्यांसुधी परने पोतापणे मानी परमां मुंझायो तेथी ज्ञानावरणादि आठ कर्मनो बंध कर्यो तेमां मुख्यपणे मोहनीय कर्मनी अठावीस प्रकृति बांधी, ते दरेक प्रकृतिउना लोकाकाशना प्रदेश प्रमाणे असंख्याता अध्यवसाय छे, ते एक एक अध्यवसायमां मन, वचन, कायाना योग प्रवर्त्या ते सर्वे असंयम स्थान छे तेथी ते योगोनी प्रवृत्तिमां निवृत्ति रुप शुद्ध स्वतंत्र चैतन्य स्वभाव, चैतन्य वीर्य, अव्याबाधपणाने न जाणतो न पामतो दुःखी रह्यो, एटले सुख न पाम्यो. अने शुद्ध नये जोतां पोतेज परमात्मा छे शुद्ध निश्चय नय एटले अनंत धर्मात्मक वस्तुने जेम छे तेम यथार्थ जाणवुं ते शुद्ध निश्चय नय कहीए

जेम चार माणसो सोनाना स्वरुपने अणजाणता तेउने सोनाना स्वरुपना जाण पुरुषे एक सोनानुं कणु लावीने बताव्युं अनें कह्युं के आ सोनुं छे ते कणाने ते चारे माणसोए जोयुं, तेमांथी एक जणे पीलाशने सोनुं जाण्युं, बीजाए वजनने सोनुं जाण्युं, त्रीजाए गोलाकारने सोनुं जाण्युं, चोथाए नरमाशने सोनुं जाण्यु, हवे ए चारे जणाए सोनाना स्वरुपने यथार्थ उलख्युं नथी. केमके ते दरेक जणे सोनाना एक एक धर्मने स्वतंत्रपणे सोनुं मान्यु, तेने अशुद्ध व्यवहार नयथी सोनुं उलख्युं कहीए. ज्यांसुधी सोनामां रहेला अनेक गुणोमांथी एक गुणने तथा अनंत पर्यायमांथी एक पर्यायने (एक कार्यने) पण न जाण्युं होय त्यांसुधी शुद्ध निश्चय नये सोनुं जाण्यु नथी ए प्रमाणे व्यवहार दृष्टि जीवो धर्म व्यवहार तथा अध्यात्मना शास्त्रो वांची आत्माना अने पर पुद्गलादिना गुण पर्याय संपूर्ण जाण्या विना अरुपीआत्मा, ज्ञानमयआत्मा, अबंधआत्मा,

कषायआत्मा, योगआत्मा, अनित्यआत्मा ए आदि अनेक विशेषणो मांहेला एकज विशेषण अथवा केटलाक विशेषणोने वांची, सांभली एकांते कुनयनी वासनामां पडेछे, पण ज्यांसुधी संपूर्ण पर्याय जाण्या नथी त्यांसुधी शुद्ध निश्चय नये ज्ञान कहेवाय नहि. पण जेम जेम वस्तुना विशेष गुण पर्यायने जाणतो जाय तेम तेम शुद्ध नय सन्मुख थाय, शुद्धताना अंश वधे, संपूर्ण पर्यायनुं प्रत्यक्षपणे ज्ञान तो केवलीने होय. अने समकितीने परोक्षपणे श्रद्धागोचर पूर्ण पर्यायनुं ज्ञान होय. स्याद्वाद—एटले स्यात्अस्ति, स्यान्नास्ति, स्यात्एक, स्यात्अनेक, स्याद्भव्य, स्याद्अभव्य, स्यात्नित्य, स्यात्अनित्य, ए आठ पद अने सप्तभंगी, नय, निक्षेप, प्रमाण, कारक आदि बहुविधिए वस्तुनुं स्वरूप जाणवाथी वस्तुनो यथार्थ बोध थाय छे. यथार्थ बोध थवाथी आचरण पण यथार्थ थाय छे. अने यथार्थ आचरण थवाथी क्षायक चारित्र (परमस्थिरता) तथा परम समाधि, केवलज्ञान, केवलदर्शन, परमानंद परमनिवृत्तिरूप अप्रतिपाती गुण प्रगटे छे. ते अनंतकालसुधी एक रस आनंदनो भोगी थइ रहेछे, तेने सर्व दुःखथी मुक्त थएलो कहीए. ते स्याद्वाद आदिनुं स्वरूप आगल लखीशुं पण अहिंआं मुक्तिमाटे असंख्य योग कह्या छे ते आत्म अनुभव साथे मेलवीने सुगम रीते बालजीवोने समज पडे एवी रीते कहुंछुं.

हवे आपणा आत्माने सिद्ध समान जाणीए त्यारे शरीरमांहे थता विकारो आपणने नडता नथी, केमके जेनो जे स्वभाव होय तेनो तेज रहे. वस्तु स्वभाव कोइ काले सर्वथा पलटे नहि पण पर्यायथी दर समये कथंचित् रीते पलटे छे. जेम समुद्र पवन योगे अनेक तरंगोने करेछे, ते तरंगो जूदे जूदे रूपे जणाय छे, पण जल रूपे एकरस एकाकार छे. तेम आत्मा पर्याय धर्मे अनंत रूप छे. पण वस्तु धर्मे चैतन्यमय एकरस एकाकार छे. जेम अग्नि, ज्वाला, अंगारा,

मम्मुरा, विजली विगेरे परसंबंधे अनेक रूप छे पण वस्तुधर्मे, दाहक धर्मे, एक रूप एकाकार छे. तेम आत्म स्वरूप शुद्ध नये निर्मल ज्ञानरूप छे. शरीर संबंधे बहिरात्मा, अंतर आत्मा, परमात्मा, एवा त्रण भेद पमेछे. वली कर्मचेतना, कर्मफलचेतना अने ज्ञानचेतना, पण चेतनारूपे चेतना अभेद एकाकार रूप छे तेज चेतननी चैतन्यता के जे अग्निथी बले नहि, शस्त्रथी छेदाय नहि, पाणीथी भेदाय नहि(गले नहि) वायुथी सूकाय नहि, (स्पर्शाय नहि)पृथ्वीथी दबाय नहि, हथियारथी पकडाय नहि, हणाय नहि, कोइ चीजथी मली एकमेक थाय नहि, पोताथी परनी क्रिया थती नथी, पोताना प्रदेशमांथी एक प्रदेश पण घटे नहि, घसाय नहि, ए मांहे परनो एक प्रदेश पण आवे नहि, पोताना गुणोमांथी एक गुण के एक पर्याय पण घटे नहि, परगुण पर्यायमांथी एक पण पोता अंदर आवे नहि, सकल प्रमेय प्रमाणे सत्ता अखंड अबाधित रहे.

पोते अन्य वस्तुनो कर्त्ता नथी, अन्य कोइए एने कर्यो नथी अने अन्य वस्तुथी उपजेलो नथी. पोतानो स्वभाव जाण्या पछी पोते स्वतंत्र छे पोताना स्वरूप अज्ञानथी परतंत्र छे ए माटे ज्ञान दशामां पोताने सुखनो कर्त्ता, तथा अज्ञान दशामां पोताने दुःखनो करनारो पोतेज छे ज्ञाननें अशुद्धता लागवाथी एटले कर्म प्रकृतिनो संसर्ग थवाथी अज्ञान कहेवाय, पण ज्ञान ते ज्ञान रूपज छे पर ते पररूपज छे जेम सुवर्ण मांहे त्रांबु, रूपु, मलवाथी सोनुं अशुद्ध कहेवाय, पण सोनुं पोतानां रूपथी टळ्युं नथी अशुद्धता मली तेने यथार्थ क्रियाए शोधीए एटले सुवर्ण शुद्ध निजरुपे प्रगट थाय.

मुक्तिनो एकज मार्ग छे, धर्म एकज छे, ते शुद्धोपयोगनेज कहीए ए शुद्धोपयोगना निमित्तभूत अनेक कारणो छे, पण शुद्धोपयोग रूप कार्य एकज छे.

जेम परमेश्वरे कह्युं के तप करो. ते तप शुं छे के पुद्गलना शब्द, रूप, रस, गंध, स्पर्शने जोगववानी इछा नहि अने ज्ञानादिक आत्म स्वजावमां तृप्ति तेनुं नाम तप छे. पण शुद्ध नये आत्म स्वरूप जाएयाविना कोइ एम जाणे के हुं जारे तप करुं, पण स्वरूप जाएयाविना शब्दादिक विषयो मांहेथी चित्तनी निवृत्ति केम थाय ? अने शुद्धोपयोग तो आत्म स्वरुपमांहे स्थिरता जावे रमण करवाथी थाय. माटे जे स्वरूपने जाणे छे तेने शब्दादिक विषयो जोगववानी इछा थती नथी, त्यारे दीनता तो शेनीज होय ? एटले सकल विषयो अने मोहनीय कर्मनी अठावीशे प्रकृतिनी प्रवृत्तिथी तथा ज्ञानावरणादिक आवरणोनी प्रवृत्तिथी निवर्त्या मन, वचन, कायाना योग ते परम निवृत्ति रुप सुख छे. अने धर्म पण तेज छे. तेज आत्माथी अजेद अबाधित चेतन वीर्यनो अखंड जोग आनंद मात्र रह्यो. निज स्वरुप जाएयाविना विपर्यास वासना वडे जे शरीर रस, रुधिर, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा, वीर्य ए सात धातु तथा सात मल अने अनेक रोगोनुं स्थानक छे, तेने ए हुं छुं, ए मारुं छे, ए मने, ए मारामां, ए मारा माटे, ए माराथी, एम करवुं ए मारुं काम छे, ए हुं करीश, आ क्षुधा, पीपासा, काम, क्रोध, मरण, जन्म, सडण पडण आदि मने छे एम जाणी ते मटाडवाने, जोगववाने, अनेक प्रयत्न, प्रयास, मनोरथ, जय, शोकादि करी महा विकाळ निविडकर्म बांधी जव समुद्रमां जटकी न कही शकाय एवी वेदना सहे छे. पण ज्यारे पोताना स्वरुपने शुद्ध नये जाणे, अनुजव करे, त्यारे शब्दादिक विषयोने जोगववानी इछा रहेती नथी, तेनेज तप कहीए. बाह्य तप ते शुद्धोपयोगने माटे छे, ए शुद्धोपयोगने अणजाणतां तप ते क्लेशरुप छे.

हवे परमेश्वरनी पूजा ते शुं छे? परमेश्वरनी आज्ञा अंतरंग बहुमाने पूजवी एटले अंगीकार करवी, आज्ञाए वर्त्तवुं तेज पूजा छे. परमेश्वरनी आज्ञा शुद्ध नये निज स्वजाव आनंदमां तृप्त थइ स्थिर

रहो एवी छे. तो शुद्ध नये पोताना आत्म स्वरूपने जाण्याविना शामां तृप्त, अने मग्न रहेवाय? जेम कह्युं छे के "पढमं नाणं तओ दया"अर्थ–द्रव्यथी सकल संसारी जीवना स्वरूपने जाणीने तेना प्राणनुं रखोपुं करवु, नानामां नाना जीवने पण दुःखववो नहि, यत्नाए वर्त्तवुं, त्रिकरण योगे रखोपुं करवुं, बीजा पासे पण रखोपुं करावबुं, अने रखोपुं एटले यत्नाए वर्त्तनारने भलो जाणवो, अने पोते पण मनथी, वचनथी, कायाथी ठ कायना प्राणने हणवा नहि, हणावबा नहि, अने हणता प्रत्ये अनुमोदवुं नहि, ते द्रव्य दया अने आत्माना भाव धर्म जाणी संकल्प विकल्पे करी अथवा क्रोधादिके करी आत्माना ज्ञानादिक अने क्षांत्यादिक गुणोने हणवा नहि, निर्विकल्प उपयोगे स्वपर आत्माना ज्ञानादिक गुणोने स्थिर राखवा, एटले हणवा नहि एटले रखोपुं करवुं, एम भाव दयामां पण त्रिविधे त्रिविधे वर्त्तवुं. एवी रीते द्रव्य प्राण अने भाव प्राणने जाण्या विना रखोपुं केम करी शके? तेथी प्रथम ज्ञान ने पछी दया कही एटले द्रव्य भाव हिंसाए उपयोगने अशुद्ध करवो नहि माटे प्रथम शुद्ध नये स्वरूपनुं ज्ञान करवुं एज पूजा छे अने जिनेश्वरना केवलज्ञानादि गुणनुं बहुमान स्तवनादि जे शुभभाव ते पण शुद्धोपयोगनुं कारण छे, माटे पूजा कहीए केशर चंदनादि ए बाह्य पूजा शासन शोभा अर्थे करवी ते पण शुद्धोपयोगे सफल छे साधु मुनिराजने अभिगमन वंदन नमनादि तथा वस्त्र पात्र आपवुं, अगर सुश्रूषा विनयादिनी संभालमां रहेवुं, ते शुभउपयोग छे. ने आत्म धर्मना हेतुपणा माटे घणा लांबा कालना अशुभ कर्मने नाश करवा वाळो छे अने साधु मुनिराजनी जे भक्ति करवी ते जरूरनीज छे, कारण के ते तेमनी सयम क्रियाने निवृत्तिपणे साधी, भवी जीवोने धर्म देशनाना दातार थाय, अने साधु मुनिराजनी द्रव्यथी अने भावथी सेवा करीए एटले ते तेमनी प्रेरणाथी अनंत जीवोने सुखनुं कारण

थाय छे, ए माटे अहिंआं लखवानुं एटलुंज के जेथी शुद्धोपयोग थाय, ते क्रिया अवश्य आदरवी केमके परमेश्वरे शुद्धोपयोगमां धर्म कह्यो छे. शास्त्र सांभलवुं, भणवुं, वांचवुं, जाणवुं, ते पण शुद्धोपयोग रुप कार्यनुं कारण मोक्षरुपी कार्यना अभिलाषी जीवने छे. जो कदापि आ भव परभवना इंद्रियजन्य सुखने अर्थे अथवा मान शोभाने अर्थे, एज काम करेतो अकारण छे, कर्म बंधनो हेतु छे, भव भ्रमणनुं कारण छे, माटे शुद्धोपयोगने चूकवो नहि, अने जे क्रिया शुद्धोपयोगने अप्रशस्त एटले हरकत करे तेवी होय ते तजवी. एमज दान, दया, यात्रा, शुद्धोपयोगने प्रशस्तपणे ग्राहकताए अने यतना सहित होय, तो ते सफल छे. नहितो ते अकारण छे. एम देशना देवी, भणाववुं, चर्चा, वाद विवाद करवो, ए आदि द्रव्य क्रिया व्यवहारथी धर्मनां कारण कहीए, ते पण शुद्धोपयोगे होय तो धर्म कहीए. जो मान अगर विषयादि पुद्गल परिणामनी ग्राहकताए होय तो शुभाशुभ कर्मनो हेतु छे, भव भ्रमण छे, माटे धर्मार्थी जीवे सदा सावचेतीमां रहेवुं; एवी रीते के आ वर्त्तमान समये हुं पुद्गलीक परिणामनो ग्राहक बुं, के निज परिणाम आत्मधर्मनो ग्राहक बुं, आगामी समये पण इंद्रिय जन्य सुखने चाहुं बुं के निवृत्तिने इछुं बुं, मारी ग्राहकता, व्यापकता, रमणता वर्त्तमान समये अथवा आगामी समये स्वगुण पर्यायनी छे, के परगुण पर्यायनी छे, ते जेम बने तेम दर वखते विचारता रहेवुं, वली हुं स्वभाव दानमां वर्त्तु बुं के इंद्रिय जन्य विषयोना दानमां वर्त्तु बुं, हमणां हुं स्वभावना लाभने इछुं बुं के पुद्गलना लाभने इछुं बुं, हुं स्वभाव भोगी बुं के विषयनो भोगी बुं, तेमज उपभोगी पण स्वभावनो बुं के परभावनो बुं, जो परभावनो भोगी होऊंतो पर एटले पुद्गल, धर्मास्ति, अधर्मास्ति, आकाश, काल, ए मांहेतो कांइ भोग धर्म जणातो नथी, अने जो

जणाय छे, तो विपर्यास वासनाथी छे जेना शरीरमांहे क्षुधादि रोग उदय आवे छे ते वखत पुद्गलना रस उपर रीझ पामे छे, पण क्षुधादि रोगनी शांति थये घणा मधुरादि रसने पण चाहतो नथी, तेमज काम रोगनी आतुरता व्यापे छते स्त्री पुरुषनां रुधिर, मांसादिके भरेलां अंग मलमूत्रनी उत्पत्तिनां स्थानक वली कपटे जरी चेष्टाउं, अमृतथी पण सीठां लागे छे, तेज कामनी शांति थये अप्रिय लागे छे जो कदापि कामक्रीडा करतां मनमां मिथ्या वासनाथी ए समान बीजुं सुख नथी, ए सुख मने महा सुकृतथी मल्युं, हुं धन्य छुं! आ कृत्य करवाने केवो समर्थ छुं! एवुं सुख मने हमेश मलतो केवु सारुं, ए सुख मेलववाने हुं बहुज सारो प्रयत्न राखीश एवा जे मनोरथ, तेथी आत्मा अशुद्ध भावनाए मननो वेग वधारी भव भ्रमण करे छे, पण कामनी निवृत्ति थये ए क्रियाने चाहातो नथी. वली पश्चात्ताप करे छे, थाके छे, क्षीणवीर्य थइ बहुजातनी उपाधिनो संचय पोताना शरीरमां करे छे, जो ए सुख होत तो ए कृत्यथी थाकत नहि, अथवा अप्रीति उपजत नहि, एम शब्दादि पंचे विषयोनी निवृत्ति थये ते विषयो रूप रोगना उपचार रूप आहार, स्त्री आदिक भलां लागतां नथी, जो सुख होततो एम थतुं नहि, माटे हुं स्वभाव भोगी के परभाव भोगी छुं, एम हमेश विचारवुं ऊपभोगमां पण एमज विचारवुं वली जे शक्ति ते हुं आत्मिक शक्ति राखवाने चाहुं छुं के पुद्गलीक शक्ति चाहुं छुं, चेतना शक्ति फोरववा चाहुं छुं के पुद्गलीक शक्ति फोरववा चाहुं छुं, आत्मिक शक्ति तो सदाए नित्य अबाधित छे ते तो जो शुद्ध ऊपयोगे जोइए तो एने राखवाने के फोरववाने बीजो कांइ प्रयास करवो पडे तेम नथी, पण मिथ्या वासनाए देहादिकमां अहंपणुं मानी हुं केवो बलवान छुं, हुं केटली स्त्रीओने रींझवी शकुं छु, मने केवो खोराक पची जाय छे, हुं केवो बोल्यो, में केवो मायों, मारे केटलुं धन, मारे केटलो जथो, हुं केवी

केवी युक्तिउं गोठवी शकुं हुं एम पुद्गलीक शक्ति फोरववानी ऊमेद, पुद्गलिक शक्ति राखवानी आशा, ते मिथ्या वासनाथी थाय छे. जे पुद्गल द्रव्य ते तो पुरावुं, गलवुं, सडवुं, पडवुं, अने विखरवुं, दर-समये खंध खंधादिकनुं बदलावुं—खंधमांथी परमाणुओनुं खरवुं, अने मलवुं, स्कंध एक छतां पण केटलाक पुद्गलो खरे मले छे अने वर्णादिकनुं बदलावुं थाय छे ते एनो स्वजाति धर्म छे. तो ए आपणा राख्या नित्य रहेवाना नथी अने खरा सुखने आपनार पण नथी, ए तो केवल ऊपाधिने वधारवा वाली समाधिने हरवा वाली पर-परिणति छे. ते परपरिणतिने मूर्ख जीव राखवाने चाहे पण सम्यक् ज्ञानी तो देह अने विषयोथी निवृत्ति चाहे छे. अने तेनुं स्मरण पण करता नथी, केमके शुद्ध नये आत्मा सिद्ध समान छे, तो ए पुद्-गल शक्ति कया दुःखने टालशे ? शुद्ध नये आत्मा त्रणेकाल एकरुप चिदानंद घन, स्वतंत्र ज्ञान उद्योतमयी, परम समाधिमयी छे. तिहां कालकर्मनुं जोर शुद्धात्म अंगमांहे प्रवेश करी शकतुं नथी. दिन, घडी, रात, पक्ष, मास, ते पुद्गलना पर्यायना भेद छे, जेम सूर्य उग्यो, आथम्यो, सूर्य मेषमां आव्यो, चंद्रमा धननो थयो, अमुक वखते अमुक हतुं, जेम केरीनो मरवो हतो ते मोटी केरी थइ हवे एना दींटा उपर पीलाश आवी, पहेलां रंगे लीली हती सर्वांगे राती थशे, हवे मीठी सोरुाय छे. (वासे छे) ए सर्वे काल-धर्म ते पुद्गलना पर्याय छे, ते पुद्गलना पर्याय आत्म तत्त्व मांहे प्रवेश करी शकता नथी, तो कालथी शुं थशे ? मात्र पोतेज पोताने विपर्यास वासना वडे जोइ शकतो नथी, पण ज्यारे शुद्ध उपयोगे निज स्वरुपने जुए, विचारे, आस्वादे, अनुभवे, त्यारे अनंत आनंद रुप एक रस चेतना छे. बीजुं कांइ नथी, तेमज जे कर्म ते कर्मनी सत्तानुमि पुद्गल क्षेत्र, कार्मण, औदारिकादिक शरीर, पुद्गल वर्गणा रुप छे; ते पण आत्म क्षेत्रे नास्तित्वभावे छे. माटे निज आ-

नंद थोडी परजावनुं जे रमण करवुं ते फक्त मिथ्यावासनाए थाय छे. शुद्ध उपयोगे ज्यारे जूए त्यारे आत्म आनंद अखंड धारा प्रवाह-रुपे टंकोत्किर्ण न्याये छे. केवल ज्ञानीए संयम क्रिया तथा अध्यात्म क्रिया अने त्रण योगनी के ऊपकरण आदिकनी जे जे आज्ञाओ फरमावी छे ते फक्त शुद्ध उपयोगने माटे छे, एटले शुद्ध उपयोगने विरुद्ध हिंसादिक क्रिया वर्जवी, अने जेथी शुद्ध उपयोग प्रगट थाय ते निमित्त क्रिया आदरवी, अने ज्यारे शुद्ध ऊपयोग रुप कार्य स्वक्षेत्रे प्रगट थाय, त्यारे कांइ पण क्रिया आदरवानी नथी अने थोभवानी पण नथी. कारणके आत्मा स्व द्रव्यादिके सदाए अस्ति-त्व छे. तो केवलीनी देशनानो अभिप्राय जाणयाविना जे कंइ शुभ कार्य पण आदरवुं, ते पुण्यबंध रुप संसार हेतु छे. परंपराए संसार वधारनार थाय चौदे पूर्वनो तथा सर्व धर्म ऊपदेशनो सार एज छे के शुद्ध नये आत्म अनुभव करवो, अने ते तो शुद्ध उपयोगेज बने माटे सर्वे आलपंपाल थोडी सुखार्थी जीवोए एहीज आदरवो शुद्ध उपयोगीने आ संसारमां करुवा विपाक भोगववा पडता नथी, शा माटे के सम्यक् ज्ञान थया पछी कदापि पूर्वनां अशुभ निबिड कर्म ऊदय आवे, तो पण शुद्ध उपयोगे स्वरुपना रमणथी ते किंहां आव्या अने किंहां गया ते तेना खबरमां पण रहेशे नहि ए माटे शुद्ध उपयोग तेज एक मुक्तिनो मार्ग छे ज्यारे चेतना शुद्ध उपयो-गमां वर्त्ते, पोतानी परिणामिकताने संभाले, अनुभव करे, त्यारे सर्वे पर भाव ऊपर विरक्त भाव थाय, एटले ऊदासिन्न वृत्ति थाय ते ऊदासिन्नता शेरी मुमुक्षुने (मुक्ति जनारने) धोक मार्ग छे जो ऊदासिन्नता रुप शेरीने चूके नहि तो छेव मुक्तिसुधी वचमां मोहा-दिक चोरटानो भय रहेतो नथी, अने निर्विघ्न पणे कार्य सिद्धि थाय छे आगल जतां कोइने कांइ पूछवुं पडे तेवुं नथी ते ऊदासि-न्नता देख्या पछी कोण छोडे ? अर्थात् कोइए नहि. कोइ कहेशे जे

पहेलेथी उदासिन्नता आदरीने शुं करीए; पगथीए पगथीए चढाय, तेने कहीए जे पगथीऊं शानें कहेवाय ? पगथीऊं तो तेने कहीए के जे उपर पग मूकी ऊंचुं चढाय, अहींआं पहेलुं गुणठाणुं केवल मिथ्यात्व रुप छे, तेने तो कोइ मार्ग कहेशे नहि. बीजुं गुणठाणुं सास्वादन रुप, त्यांतो चोथानो पमेलो आवे ते पण पगथीऊं केम कहेवाय ? अने त्रीजुं मिश्र ते पण मिश्र एटले परन्नावनी मिश्रता छे, हवे जे चोथुं गुणठाणुं छे ते सम्यक्त रुप छे तेना निश्चय अने व्यवहार बे नेद छे, तेमां कोइ एम कहेशे जे देव गुरु धर्मनी सद्दहणा ते समकित छे, ते खरुं पण देव गुरु धर्मए त्रणे तत्त्वने चार निक्षेपेथी जाणे तो व्यवहार समकित थाय. ते निक्षेपाना अधिकारथी समजजो पण अहींआं लेश मात्र लखुं छुं.

देव श्री अरिहंत एम कहेवाथी कांइ देवनुं स्वरुप यथार्थ जणाय नहि वली मात्र नाम निक्षेपेथी पण अरिहंतपदनो बोध थाय नहि पण अरि कहेतां रागादिक शत्रु अने हंत कहेतां ते शत्रुने जेणे हण्या छे तेने अरिहंत कहिये. अहींआं हणनार कोण ? अने शी वस्तुने हणी ? हवे हणनार ते शुद्ध आत्मा छे, अने रागादिक अशुध्ध उपयोगनो नाश कर्यो, तेने अरिहंत कहीए.

गुरु निर्ग्रंथ एम कहेवाथी कांइ गुरुनुं यथार्थ स्वरुप जणाय नहि, कूतरां, बिलाडां आदि कोनी मात्र पण पोतानी पासे राखतां नथी, तो शुं तेने निर्ग्रंथ कहीशुं ? एम तो बने नहि पण पुद्गल परिणाम रुप पर द्रव्यनुं ममत्व, अने पुद्गल द्रव्यरुप कोइ पण पुद्गलना ममत्वरुप गांठ, एटले राग द्वेषनी गांठ जेने रही नथी, सदाय आत्म सत्ताना रसी छे, अने स्याद्वाद नयप्रमाणे जिन वाणिना अभिप्रायना पारगामी छे, तेने गुरु कहीए पण एथी जे उलटा पुद्गल द्रव्य अने पुद्गल नावना कामी ते शी रीते धर्मने जणावशे ? ए तो विषयादि अनर्थमां अर्थ जाणी तेना अर्थी ममत्वी थइ जोलाजीवोने

जरमावे ने शी रीते तारशे ? माटे भव्य जीवोए गुरुने परखीने गुरुनी श्रद्धा करवी

धर्म ते वस्तुनो स्वभाव छे. नो जे वस्तुनो जे स्वभाव ते तेनो धर्म कहीए. आपणे चेतन वस्तु छीए, शुद्ध चेतना उपयोग लक्षण आपणो धर्म छे, ते भेद धर्मे ज्ञान, दर्शन, चारित्र आदि अनेक विशेषण-मयी, एक रस चेतना रूप शुद्ध स्फटिकमणि दृष्टाते आपणो धर्म छे एथी विपरित वर्ण, गंध, रस, स्पर्शादि अने धर्मादि पर द्रव्यना जे स्वभाव ते आत्माना धर्म नथी, एटले अधर्म छे एटले दुंकामां भेदधर्म, अभेद धर्म, जे जे आत्माना स्वस्वभाव, गुण, पर्याय, तेज आत्माना धर्म छे अने परगुण पर्याय ते मिथ्या दृष्टीए मिथ्यात्वी जीव आत्माना धर्म माने छे, पण ते अधर्म छे, हेय रूप छे, अनर्थ छे. अने निजधर्म अर्थे एटले शुद्ध उपयोग अर्थे उदये आवेली पुद्गल क्रियानी प्रवृत्ति करवी पडे, तेने कारण धर्म कहीए. ते कारण धर्ममां सर्वे पुद्गल प्रवृत्ति करवी पडे ते नैगमनयथी धर्म पण कहेवाय, जेम कारणमां कार्यनो आरोप एटले नैगम नयथी कारणने पण कार्य कहेवाय छे, ते कारण अने कार्यना भिन्न स्वरूपने जाण्या विना एकांते कारणनेज कार्य जाणेतो कुनयनी वासना मिथ्यात्व आवे, उक्तंच—एकांते होइ मिछत्तो. जेम घरेणुं करवाना निमित्त कारण, एरण, हथोडो, साडसी, आदि मेलवीने जाणेके मांहारे कार्य थयुं, तो तेथी कइ आभूषण तैयार थयु नहि, वली घडो करवानु निमित्त कारण, दंड, चक्र, चीवर, आदि मेलवीने जाणेके घट तैयार थयो तेथी कंइ घट थाय नहि, पण घरेणानु उपादान कारण जे सोनुं तेना पर्याय पलटावी तुसी, कंठीरूप पूर्ण पर्याय निपजावे तोज कार्य थयु कहेवाय, तेमज घटना उपादान रूप जे शुद्ध मृतिका तेना दंड, चक्र योगे पिंड, स्थास कोशादिक, पर्याय पलटावी पूर्ण पदे घट रूप कार्य निपजावे तोज कार्य थयुं कहिए,

तेमज सिद्धिना उपादान रूप भव्य आत्मा तेनो मिथ्यात्व पर्याय पलटावी सम्यक् पर्याय प्रगट करवो, राग पलटावी वीतरागतानो पर्याय प्रगट करवो, एम सर्वे परसत्ता रमण पलटावी स्वसत्ता रमण करवुं, इत्यादि पर्याय पलटावी संपूर्ण स्वपर्याय प्रगट करवे पूर्ण पदे कार्य थाय. पण कारण कार्यना स्वरूपने जाण्याविना एकांत नयनी वासना जाय नहि. धर्म कंइ नवो करवो नथी, ए तो अकृत्रिम शाश्वतो सदाए एकरूप कायम छे. पण ते मूढ आत्मानी दृष्टी विपर्यास वासनाए विषय कषायादिकने पोतानुं कार्य मानी तेनी दृष्टी रोकाणी, अवराणी, तेथीज ज्ञानावरणादि द्रव्य कर्म थयां, एटले प्रवृत्तिमां अशुध्ध उपयोगे कर्मनी संतती अनादिथी चाली आवी. ते अशुध्ध उपयोग न वधे ते माटे अव्रतनुं टालवुं अने विनयादिकनुं आदरवुं तथा वांचना, पृछना, पर्यट्टना, अनुप्रेक्षा, धर्मकथानी क्रिया करी शुध्ध उपयोग प्रगट करवो, एम शुध्ध देव, शुध्ध गुरु, शुध्ध धर्मनी श्रध्धा ते व्यवहार समकित कहिए, ते निश्चय समकितनुं कारण छे.

दर्शन गुणवंत मारो आत्मा एज देव, अने ज्ञान गुणमय मारो आत्मा तेज गुरु के जे हेय, उपादेयने जणावे छे, चरण गुणवंत मारो आत्मा तेज धर्म, के जे दुर्गति पमतां बचावे एम जे जाणवुं अने नय, निक्षेपे करी, स्याद्वादे करी पोतेज पोतानी आत्मसत्ताने सिद्ध समान जाणी श्रद्धा प्रतीति रुची करवी ते निश्चय समकित छे, अहिंआंथी चडवानुं पगथीउं शरु थयुं,

उक्तंच गाथा आर्यावृत्तम्.

जिण पण्णत्तं धम्मं, सद्दहमाणस्स होइ रयण मिणं;
सारंगुण रयणाणय, सोवाणं पढम मोरुक्खस्स.

चोथे गुणठाणे मिथ्यात्वना अंश गया एटली शुद्धता प्रगट थइ,

ते शुद्ध उपयोगनुं अने मोक्षमार्गनुं पहेलुं पगथीउ जाणवुं, पांचमे अविरतिना थोडा अंश गया ते अंशे शुद्धता प्रगटी, छठे अविरतिनां सर्वे कारणो तज्यां ते पण शुद्धताना अंश वध्या, सातमे प्रमाद गयो ते पण शुद्धताना अंश वध्या, आठमे अपूर्व स्थिरता आवी ते स्थिरता रूप शुद्धताना अंश वध्या, नवमे वेद, हास्यादिथी निवर्त्यो ते अधिक शुद्धता थइ, अने स्थूल कषाय पण निवर्त्या, दशमाना अंते उपशम श्रेणीए उपशम्या अने क्षपक श्रेणीए सूक्ष्म कषायो पण गया एटले मोहनीय कर्मनी सकल चपलता निवर्त्ति, ते पण शुद्धता वधी, अने बारमाना अंते ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, अने अंतराय कर्मनो नाश थयो एटले तेरमे परम शुद्ध उपयोग केवलज्ञान, दर्शन, अने दान, लाभ, भोग, उपभोग, वीर्य, शुद्ध, अचल, अबाधित प्रगट थयुं त्यारे पूर्ण शुद्ध उपयोग थयो, एम पगथीआं जाणवां. पण चोथेथी शुद्ध उपयोगने साध्य जाणी शुद्ध उपभोग सन्मुख थइ अने शुद्ध उपयोग तरफ दृष्टी राखी शुद्ध उपयोगने प्रशस्त हेय, उपादेयपणे वर्त्तवुं ते पगथीआं जाणवां. अने सर्वे पगथीए उदासिन्नता वधती जाय, ते उदासिन्नता रूप शेरी जाणवी उदासिन्नताने चूके तो पडे, पण न चूके तो जेम जेम उंचो चढे तेम तेम उदासिन्नता वर्द्धमान थइ पूर्ण वांछित स्थानके पहोचाडे उदासिन्नताने चूकवुं नहि एनुंज नाम शुद्धोपयोग छे ए शिवाय बीजां पगथीआं नथी. ते पगथीउं कइ शरीरथी चढवानुं नथी पण शुद्ध आत्म परिणामनी धाराए चढवुं तेनुं नाम पगथीउं छे. शुभाशुभ कर्म परिणाम धारा तजीने शुद्ध परिणामीक भावे वर्त्तवा अभ्यास करवो, जेमके हुं सिध्ध समान निर्मळ आत्मा छुं, तो मने पुद्गलना अनंत पर्यायोमांथी एकनी पण जरूर नथी, ज्यारे अंतरंगमां पुद्गल पर्यायनो खप न जाणीए, तो चित्त शामाटे चंचल थाय, ए अभ्यासनुनाम अनुभव योग कहिए अनुभव योग ते सर्व आचारमय परमात्माए कह्यो छे.

तप, तीर्थ आदि सर्वे धर्म कार्यनो समावेश अनुभव योगमां थाय छे. समयसारना सारमां कुंदकुंद आचार्य लखेछेके एक शुद्ध परमात्मानो अनुभव अभ्यास करवो, एज मोक्षमार्ग छे. माटे सर्व आलंपंपाल छोडी एक शुद्धनयने भजो अनादि अशुद्ध उपयोगथी परमां पोतापणुं मानी पुद्गल शक्ति राखवा इच्छेछे, तेथी अनादिनो पुद्गल अनुभवथी समय मात्र पण विराम पामतो नथी, तो कइ रीतथी सिद्धिने पामे ? माटे शुद्ध परिणामीक भावनो अनुभव अभ्यास करवो के लोकाकाशना सर्व पुद्गलना त्रणे कालना अनंता अनंत पर्यायथी ज्ञान दृष्टीए जोतां आत्माने पुद्गलथी सुख अथवा दुःख कंइ पण नथी, पुद्गलना ममत्वथी दुःख, अने तेज ममत्व तजे सुख, माटे मिथ्या भ्रांतिथी ते पुद्गल पर्यायमां कार्य मानेलुं छोडीए तो सहेजे अने निर्विघ्नपणे आत्म अनुभव थाय. माटे प्रमाद छोडी पोतेज पोताना सुखना कर्त्ता थाउं. हवे सर्वे प्राणीउं सुखने चाहे छे. यथार्थ सुखने जाण्याविना, अने पोतानी उन्मार्ग प्रवृत्ति छोड्या शिवाय, अने सन्मार्ग प्रवृत्ति आदर्याविना सुख थाय नहि, माटे सुखनुं यथार्थ स्वरुप जाणी, सन्मार्गनुं यथार्थ स्वरुप जाणी, असत्मार्ग तजी सन्मार्गे प्रवर्त्तवुं. हवे ते सन्मार्ग पामवानुं यथार्थ स्वरूप लखीये छिये. सुख शाथी थाय ? सुखमां हानि शाथी थाय छे ? ते जरूर जाणवुं जोइये आकुलता रहित स्थिर, संतोषमय, स्वतंत्र आत्मस्वभावने जाणवुं तथा सहज स्वभावे मग्न रहेवुं ते निवृत्ति रुप सुख छे. क्षुधा अने काम रोग आदि विषयनी आकुलता ज्यां नथी, अज्ञान, भय, शोकादि उपाधि ते पण ज्यां नथी, एवुं शरीरथी भिन्न निज आत्म स्वरुप ज्ञानथीज थाय. अने एथी उलटुं जेमां अनेक रोग, जन्म, जरा, मरण, व्याधि, अने अज्ञान, भय, शोकादिनुं स्थानक जे पुद्गल द्रव्य तेमां पोतापणुं जाण्याथी दुःख खडु थाय छे. ते पुद्गलमां पोतापणुं तजी आत्मामां आत्मापणुं जाण्याथी परमानंद सुख

प्रगट थाय छे. पर पुद्गलमां पोतापणुं जाणवाथी पोताना कर्त्ता, भोक्ता, ग्राहकता, व्यापकता, रमणता, आदि जे गुण ते सर्वे पर अनुयायी थइ पुद्गलना अथिर पर्यायने भोगवी स्थिर राखवा चाही अनंत प्रयास करी अनंतानंती उपाधिने भोगवी अनंता काल सुधी आत्मा स्वरूपरमणनो अवसर पामतो नथी पुद्गल द्रव्य पर्यायनुं लेवुं, तेने लाभ माने छे, पुद्गल द्रव्य पर्यायनुं देवुं तेने दान माने छे, पुद्गल द्रव्य पर्यायने भोगववुं तेने भोग माने छे, अने पुद्गल गुणने भोगववुं तेने उपभोग माने छे, अने वीर्य शक्ति पण सर्वे पुद्गलमां फोरवे छे, एवी मिथ्या मोहनी निदमां सूतेलाने जगाड वाने गुरुसिवाय बीजो कोइ समर्थ नथी पुद्गलना अनित्य पर्यायमां नित्यता क्यांथी होय ? चपल पर्यायमां स्थिरता क्यांथी होय ? जड अंधकार मांहे ज्ञान उद्योत क्यांथी होय ? अरम्यमां रम्यपणुं क्यांथी होय ? परभाव अटवीमां भमतां घणोज आक्रंद करे पण शरण कोण थाय ? एकलो आवे, एकलोज जाय, एक जीवथी बीजा सर्वे जीव, तथा सर्वे पुद्गल अन्य (जूदा) छे सुख दुःख एकलोज भोगवे, संसार भावने पामी वारंवार तेने तेज कृत्य, गति, योनि, प्राण, पर्याप्ति, वैर, हेत आदि कर्या करे, अने अनंता जीवनी एंठ एवी पुद्गल वर्गणाथी उत्पन्न थएलुं हाड, रुधिर, मांस, चर्म, विष्टा, मलमूत्रादिनुं स्थानक एवुं अपवित्र शरीर तेने पवित्र मानी अगर, चंदन, पुष्प, आभरणादिके शोभीत करी मोहमदे ठाकी सुख माने छे, पण ते अथिर क्षणमांहे विणसी जाय तेथी स्थिरतानो लेश पण पामतो नथी सर्वे समय कर्म परिणामने वधारनार दुःख समुद्रने भरी दुःख समुद्रमां झीले छे तेथी खरुं सुख रोकायुं, एटले सुखनी हाणि थइ दुःखना स्थानकमां सुख लेवा जाय ते जरुं नहि, एवा जीवने काल परिणति अने भव्यताना योगे कोइ समये सद्गुरुनु निमित्त मली आवे, त्यारे ते गुरुना उपदेशथी सिद्ध समान

पोताना स्वरूपने जाणी, गुरु आज्ञाए चाले, तोज कर्म रसनी आवक रोकाय, अने बाकीनो कर्म रस रहेलो तेनी पण निर्जरा करे. ते तो शुद्ध उपयोगथीज थाय, माटे शुद्ध उपयोग एज सुखनुं कारण छे. अने विषय कषायना कारणथी जे शुभाशुभ संकल्पनुं उपजवुं, तेज सुख रोकावानुं अने दुःख थवानुं कारण छे. उन्मार्गनी प्रवृत्ति एटले विषय कषायनुं सेववुं, ते मिथ्यात्वथीज थाय छे. जेम एक ऊंडी खाइनी अंदर अखूट निधान भरेलुं हतुं, पण ते खाइ चिरकालथी अंधकारे भरेली हती, ते अंधकार टालवाने माटे विपर्यास वासनावालाए घणा कोश, कोदाला, पावडाथी अंधकारने ऊखेडी फेंकवानो उद्यम कर्यो, वली ते अंधकार नसाडवा माटे घणा बाणो अने तोपोना गोला चलाव्या, घणी जातना तप, तीर्थ, यज्ञ, होमादि कर्या, वली बहु उदासिन्न रही संसारी भोग त्याग कर्या, घणुं रुदन कर्युं, शिर फूटणादि क्रिया करी, श्राप अने गालो विगेरे अनेक प्रयत्न कर्या, पण तल मात्र अंधकार नाश थयो नहि. एटलामां कोइ सुजाण पुरुष मल्यो तेने कह्युं के एम अंधकार जाय नहि, पण ते खाइने एक बाजुथी फोरी सूरजनुं किर्ण अंदर पडे तेम करो, अथवा एक मसाल करी अंदर लेइ जाउं एटले अंधकार तरतज नाश पामशे. त्यारे मिथ्या वासनावालो बोल्यो, के अमे घणा कालथी भारे भारे उद्यम कर्या तोपण अंधकार नाश थयो नहि, तो ताहरुं कहेलुं एटलुंज सहेज कृत्य करवाथी कांइ अंधकार नाश पामे नहि एवुं कह्युं, त्यारे सुज्ञ पुरुष बोल्यो, जरा धैर्य राखी मारुं कहेलुं कृत्य करी जो, पछी ते पुरुषने कांइक श्रद्धा, प्रतिति, रुचीथइ एटले ते सुज्ञ पुरुषना कह्या प्रमाणे वर्त्ततांज अंधकार नाश थयो तेम आत्मसत्ता भूमी रुप खाइमां अनंत कालनुं ज्ञान, दर्शनादि अखूट निधान भरेलुं छे, पण मिथ्या अंधकारे ढंकाएलुं छे, ते मिथ्या अंधकार सम्यग् ज्ञान रुपी सूर्यनुं किरण अंदर प्रवेश कर्याविना क्रोडो उपाये

पण जाय नहि, अने धन नजरे पडे नहि, तो हाथ आवतुं तो क्यांथीज होय? ज्यारे तीर्थंकरो अगर गुरुना वचनोमां कहेला तत्त्वोनी प्रतीतरुप सम्यक् सूर्यनुं किरण सत्तानूमी रुप खाइमां प्रवेश कराय, अने ते सम्यक् ज्ञान वडे जोइए, तो ते धन हाथ आवे मिथ्यात्वरुपी अंधकार क्षणमात्र पण रहे नहि, जेम घणा कालथी खाइमां रहेलो अंधकार सूर्यनां किरण सामो थतो नथी, एम नथी कहेतो के हुं घणा कालथी अहिंआंहुं, माटे मारो मुकाम नहि ठोकुं, पण तरतज नाशी जाय छे तेम सम्यक् ज्ञान रुपी सूर्यना किरण वमे मिथ्यात्व अने अज्ञान रूपी अंधकार तरत नाश थाय छे जेम जेम अजवाळुं सत्तानूमीमां उंडुं प्रवेश थतुं जाय, तेम तेम सत्तानूमीमां रहेलुं ज्ञानादि अखूट धन दृष्टीगोचर थइ पोताने स्वतंत्र पणे कराय छे पण जे कार्य करवुं होय, ते कारक प्रवृत्ति विना बने नहि जगत्नां सर्वे कार्य कारक प्रवृत्तिथी थाय छे, तो आत्मिक कार्य पण यथार्थ कारक प्रवृत्तियीज बने कोइ कहेशेके आत्मिक सुख माटे यथार्थ प्रवृत्ति ते शुं? ते अमारा समजवामां आवती नथी, तेने कहिएके चित्तमां धैर्य राखी सांभलो ज्यारे कारक प्रवृत्तिनो बोध थाय त्यारे यथार्थ प्रवृत्ति तरत समजाशे ते कारकप्रवृत्ति वावत सामायक सिध्ध्युपायमां खुलासो आपेलो छे. त्यांथी जोइ लेजो त्यां ए साथे अस्ति नास्ति वावत पण कहेलुं छे. तेथी यथार्थ स्वरुप समजाशे सप्तभंगीनुं स्वरुप जाणवुं ते स्याद्वाद कहीए. वली वस्तु मांहे एक पणुं, अनेक पणुं, नित्यपणुं, अनित्यपणुं, सतुपणुं, असतुपणुं, वक्तव्यपणुं, अवक्तव्यपणु एम अनंत धर्म छे अने ए सर्वे धर्म वस्तुमां सर्वे समय रह्या छे, पण एकज वारे एकेवचने कह्या जाय नहि ते स्यात् पद सहित बोलीए तो मिथ्यात्व आवे नहि, माटे परमेश्वरनी वाणि स्याद्वादमयी छे हवे एक पणुं ते जेम आत्मामां चैतन्य लक्षणे करी एक पणुं छे, अने ज्ञान, दर्शन, चारित्र, सुख वीर्यादि अनेक धर्म ते

अनेक स्वभाव छे, पण ए अनेक स्वभाव मांहे चैतन्य पणुं एकज छे, अने एक चैतन्य मांहे ज्ञान दर्शनादि अनेक पणुं छे. जेम पुद्गल मांहि पूरण, गलन स्वभाव ते एकज छे, तेमज वर्ण गंध रस स्पर्श संघयण, संठाणादि, अनेक पणुं ते पण एकज पुद्गलमां छे, एवी रीते वर्ण गंध आदि अनेक पणा मांहे पूरण गलन पणुं ते एकज छे, अने एक पुद्गलमांहि वर्णादि संस्थानादि अनेक पणुं पण छे. तेमज सर्वे द्रव्यमध्ये एकपणुं अनेकपणुं जाणी लेवुं. सर्वे द्रव्य द्रव्यथी नित्य छे अने पर्यायथी अनित्य छे ते नित्यानित्य स्वभाव कहिए. जेम सोनुं ते सुवर्ण द्रव्ये नित्य छे अने पर्याय एटले सोनानां जे कार्य मुकुट कुंडलादिके अनित्य छे, तेम जीव द्रव्य पोते द्रव्यथी नित्य छे, अने जीव द्रव्यनुं अशुद्ध कार्य जे नर नरकादि पर्याय तेथी जीव द्रव्य अनित्य छे, पुद्गल द्रव्य पूरण गलन स्वभावे नित्य छे, अने वर्ण, गंध, रस, स्पर्शादि पर्याये अनित्य छे, एम सर्वे द्रव्योमां नित्यानित्य स्वभाव जाणवो. सर्वे द्रव्य स्वद्रव्यादिके सत् छे, अने परद्रव्यादिके असत् छे, जेम सोनुं सुवर्ण द्रव्यथी सत् छे पण लोह द्रव्यथी असत् छे, जेम जीव द्रव्य पोताना चैतन्य द्रव्ये सत् छे, पण अचेतन द्रव्य जे पुद्गल तेथी असत् छे, जीव द्रव्य स्वक्षेत्र एटले पोताना स्वप्रदेशे सत् छे पण पुद्गल क्षेत्रे असत् छे, जीव द्रव्य स्वभाव वर्त्तनाए सत् छे परभाव एटले पुद्गलादि वर्त्तनाए असत् छे, जीव द्रव्य पोताना ज्ञान दर्शनादि स्वभावे सत् छे पण पर जे पुद्गलना वर्ण, गंधादि स्वभावे असत् छे सर्वे द्रव्यनुं स्वरुप पूर्ण पदे वचनथी कही शकातुं नथी माटे अवक्तव्य छे, केमके वस्तुमां अनंत धर्म सर्वे समये समकाले रह्या छे पण ते एकज वचने एकज साथे कही शकाय नहि तेथी अवक्तव्य कहिए, अने केटलाक धर्म नय द्वाराए वचन गोचर थाय माटे कोइक रीते वक्तव्य कहिए. ए आठ पक्षथी बोलवुं तेने स्याद्वाद कहिए, हवे नय कहिए छिये.

वस्तुमां अनंता धर्म एक समये रह्या छे, ते एके वचने समकाले कह्या जाय नहि, माटे नये करि कहीए. वस्तु अनंत धर्मात्मक छे, तेमां मुख्य द्रव्यार्थक अने पर्यायार्थक वे नय छे. जे वचन द्रव्यार्थकपणाने आगल करी पर्यायास्तिकपणाने गौण राखी बोलवु ते द्रव्यार्थक नय कहिए, अने जे वचन पर्यायास्तिकने मुख्य पणे करी अने द्रव्यास्तिकने गौणपणे अपेक्षा राखीने बोलवुं ते पर्यायार्थक नय कहिए, ते द्रव्यार्थकना चार भेद छे, तेनां नाम—नैगम, संग्रह, व्यवहार, रुजुसूत्र. अने पर्यायार्थना त्रण भेद ते शब्द, समभिरूढ, अने एवंभूत. एवं सात नय जाणवा, एनो विशेष भेद आगमथी जाणवो, पण एक नयनी मुख्यताए वस्तु धर्म उच्चार करतां अन्य नयना विषयने गौणपणे जाणतो नथी, तो ते कुनय कहिए जेम सोनुं जारे, पीलाश, चीकाश विगेरे धर्मे करी सहित छे, अने वचनथी सोनुं जारे कहेतां छतां बाकीना धर्मनी अपेक्षा राखतो नथी, तो ते कुनय कहिए तेमज जीवादि वस्तुमां अनंत धर्म सर्वे समये समकाले छता छे, ते मांहेथी नित्यता आदि एक धर्मने मुख्य पणे उच्चार करतां बाकीना धर्मनी गौणताए अपेक्षा न होय तो, ते कुनय समजवो एम वस्तुना धर्मनो उच्चार करता अने जाणतां नयोना भिन्न विषयनी अपेक्षा होय तो कुनय थाय नहि, अने ज्ञान यथार्थ थाय. माटे परद्रव्य गुण पर्यायनो लक्ष अने रमण छोडी आत्म द्रव्य गुण पर्यायमां लक्ष रमावी स्थिर रहेवुं आत्माना ज्ञान, दर्शन, वीर्यादि अव्याबाध गुणनो अनुभव आस्वाद लइए, तो अरिहंतादि नव पद आत्माना आत्मा मांहेज छे नवपदमां आत्मा, अने आत्मामां अरिहंतादिक नवपद, एम एक अनेक स्वभाव जाणी रमण करवुं मिथ्यादृष्टीए ज्यां सुधी आत्म स्वरूपमां लक्ष न देइए, त्यां सुधी आत्मानां नवपद ते आत्मामां जासे नहि जेम एक नगरनुं तलीयुं स्फटिक रत्ननुं हतुं ते उपर घास, कांकरा आदि अनेक पदार्थो पकेला हता, ते स्फ-

टिकनी फलकीमां पण उपरना पमेला पदार्थ जेवुं भासन थतुं हतुं. स्फटिकना स्वरुपथी अजाणने स्फटिकना स्वरुपनो जाण पुरुष स्फटिकनुं स्वरुप बतावबा लाग्यो, के उपरना घास, कांकरा विगेरे जेनी अंदर भासे छे ते निर्मल स्फटिक मणि छे, पण ते अजाण पुरुषनी दृष्टि शुद्ध स्फटिक उपर पमी नहि, अने उपरनी चीजो जे अंदर भासती हती ते चीजो उपर नजर पमी, तेथी उपरनी चीजो करतां स्फटिकनुं स्वरुप भिन्न जाण्युं नहि, उपरनी चीजोना प्रतिभास उपरज दृष्टी रोकाइ, ज्यारे त्यांथी दृष्टी बुटी स्फटिकनी फलकी उपर ऊष्टी पडे, के जेनी अंदर घास, कांकरा विगेरे भासे छे ते स्फटिक छे पण जे पदार्थ भासे छे ते स्फटिक नहि. एम आत्मानी ज्ञायकतामां अनेक ज्ञेय पदार्थ भासे छे ते आत्मा करतां भिन्न छे, तेम ज्ञायकता सत्तावंत आत्मा ज्ञेय पदार्थोथी भिन्न छे. ज्यारे ज्ञेय पदार्थोने पोतापणे जाणे त्यारे ऊष्टी ज्ञेयोमां मुंझाइ, रागादि अनेक विकार खरा थाय छे. अने ज्ञेयोथी भिन्न पोतानी ज्ञायकता शक्तिने जूवे, जाणे, त्यारे ज्ञेयोनुं ममत्व अने रागादिक मटी आत्मा अरिहंत पदने पामे छे. माटे मन, वचन, कायाना योग अत्यंत स्थिर करी चित्तमां धैर्य अने श्रद्धा राखी सद्गुरु वचने कान अने ध्यान राखी सांभलो, अने विचारोके नवपद आत्मा मांहे केवी रीते छे ?

१ प्रथम अरिहंत पद, ते ज्ञेयोना ममत्वरुप मिथ्यात्वनो नाश करी, ए ज्ञेयो माराथी भिन्न, मारा कामना नथी एम जाणी तेना रागनो अंत करवो तेज अरिहंत पद कहिए.

२ अने अनंत ज्ञायकतामयी जे पोतानुं स्वरुप ज्ञान, दर्शनादि अनंत पर्याय शक्ति, व्यक्ति, अनंत वीर्यवंत, ते ऊष्टी गोचर सिद्ध करी सकल पर्यायना अखंड रमणने भोगववुं, ते सिद्धपद कहिए.

३ आत्माना ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप, वीर्यनुं आचरण करवुं, करावबुं, ते आचार्यपद कहिए.

४ ऊपाध्याय पद, ते द्वादशांगना अध्ययननुं करवुं, करावबुं, ते आत्माज करे, जे आत्मा करे ते ऊपाध्याय जाणवो.

५ सम परिणामे रही शुद्ध सिद्धरुप आत्म स्वरुपने साधे ते साधु पद कहिए

६ स्वपर स्वरुपने निर्धार करे, ज्ञेय पद जे परवस्तु अने ज्ञानपद ते आत्म वस्तुतेने जिन्न निर्धारे, ते दर्शनवंत आत्मा.

७ स्वपर पर्यायनो पर परिछेदक विशेष बोध ते ज्ञान कहिए अने ज्ञानवंत तेज आत्मा छे.

८ ज्ञेय पदार्थनो राग द्वेष छोडी ज्ञानादिक स्वपर्यायमां आचरण, रमण, करे ते चारित्रवंत आत्मा

९ ज्ञेय पदार्थने जोगववानी इछा छोमी स्वगुण पर्यायमां तृप्तीवत रहे ते तपवंत आत्मा.

एम नवेपद आत्मामांज छे, अने नवेपद मांहे एक आत्मपणुंज छे ते सद्गुरु मुखे विस्तारे समजी अनित्य संसारथी ऊदासिन्न वृत्ति करी नवपदमयी आत्माने शुद्ध उपयोगे ध्यावबो एकज वस्तु जेमां बीजानो द्रव्य गुण पर्याय जव्यो नथी, तेने शुद्ध कहिए जे द्रव्य तेना गुण पर्याय तेना मांहीज जले, कोइ द्रव्यना गुणपर्याय कोइ द्रव्यमां जले नहि, जेम चेतन द्रव्य अरुपी, चेतन गुण ज्ञानादिक ते पण अरुपी, अने पर्याय ते नवा नवा ज्ञेयनुं जाणवुं ते पण अरुपी

पुद्गल द्रव्य रुपी, एना गुण वर्ण, गंध, रस, स्पर्श, संस्थानादि ते पण रुपी, अने एना पर्याय श्वेत, श्याम, रक्तादिक, लंब, गोल, त्रिखुणादिक ते सर्वे रुपी छे. माटे कोइ द्रव्यना गुण पर्याय कोइथी जलता नथी. हवे द्रव्य, गुण, पर्याय शेने कहिए?

द्रव्य ते वस्तु छे के जे मांहेथी कार्य एटले गुण अने क्रिया एटले पर्याय उत्पन्न थाय छे अने विनाश थाय छे, द्रव्य सत्ता सहित ध्रुवपणे रहे छे, पर्यायने उपजते अने विणसते सदा काल एक रुपे रहे

तेने द्रव्य कहिए. अनंत पर्यायनो एक पिंड त्रिकाले द्रव्यरुपे नित्य होय तेने द्रव्य कहीए. अने एक पर्यायथी बीजो पर्याय भिन्न, तो पूर्व पर्याय विणसे, नौतन पर्याये उपजे, जेम सोनाना अनेक घाट करतां सोनुं सुवर्ण भाव छोडतुं नथी, अने सुवर्ण भावे कायम रहे छे. घरेणुं ए सोनाना कार्य रुप गुण, अने मुकुट, कुंडलादि ते पर्याय, ए गुण पर्यायनी शक्ति सुवर्ण मांहे सर्वे काले छती छे. एम जीवादि द्रव्यना द्रव्य गुण पर्याय जाणी, परद्रव्य गुण पर्यायने भिन्न जाणी, तिहां दृष्टी नहि रोकतां शुद्ध स्वगुण पर्याय मांहे लावी स्वद्रव्य मांही स्थिर उपयोग करी अखंड, अचल भावे रहेवुं एज सार छे.

कोइ कहेशे जे सुंदर स्त्री साथे रति क्रिया करवी तेज सुख छे, पण ए कांइ सुख नथी, कारणके रति क्रियामां सुख होततो, तेनो अभाव तथा थाक लागतो नहि माटे मोहनी घेलछाए मिथ्यादृष्टी जीवने सुख जणाय छे अने एना काम वीर्यनी गरमीनी आतुरतानो प्रतिकार छे, जो एमां सुख होततो, कामथी तपेलो पुरुष अंध सरखो थइ मोटा मोटा अनर्थ पण करे छे, ने कामनी शांतिना अर्थे स्त्री आदिकथी पराधिन थाय छे, अने ज्यां सुधी काम वीर्यनी शांति नथी थइ त्यां सुधी अत्यंत आतुर बनी रहे छे अने जो एमां सुख होय तो कामनी शांति थया पछी काम भोगनो अभाव केम थाय छे? अने मननाा वेगे चडी अतिशय कामने सेवे तो श्वास, दम, क्षय, विगेरे अनेक रोगो उपजे छे, तो एने सुख शी रीते कहिए? ए तो एक जातनो असाध्य रोग छे. जेने सुख जाणी घणा जीवो परम दुःखी थया छे. जो कदापि सरस आहार खावामां सुख होयतो ते पण खावाथी थाकी जाय छे अने आखरे अभाव थाय छे, अने ते पण मननाा वेगथी रोगथी एटले क्षुधा करतां वधारे आहार ले तो अनेक प्रकारना भयंकर रोगो उत्पन्न थाय छे. तेमज सुगंधी मांहे पण सुख होय तेम जणातुं नथी, पण एतो मगजनी गरमी अगर

पित्तना विकारथी सुगंधी नली लागे छे, पण ते विकार मट्या पछीथी कांइ नली लागती नथी, अत्यंत सुगध लेवाथी पण मगजमां केटलीक जातना रोग उपजे छे, अने अत्यन सुगंधी लेनारो पण सहेज दुर्गंधीथी हेरान थाय छे, (वमन) अरुची विगेरे रोगो खडा थाय छे. तेमज आंखथी मन गमतां रुप देखवाथी जे सुख मानवुं ते फक्त मननीज माननीयता छे, अने मन गमतां रुप देखवावाळाने अणगमतां रुप देखवाथी घणी तरेहना रोग खडा थाय छे तेमज मनगमता राग रंग सांभलवाथी जे सुख मानी लेवुं, ते पण मिथ्या मोह विकार छे. राग सांभलवामां अने मनगमतां रुप जोवामां घणा लोको पोतानां राज्य खोइ बेठा, अने जारे संकटमां आवी पड्या, माटे ए कंइ सुख नथी पण विकार छे. कोइ धनथी सुख जाणे तो ते विषय अने माननी नजरथी सुख मानी ले छे, पण विषयोमां सुख नथी, ते तो ऊपर जणावी दीधुं अने मानवाळो घणा अपमानना दुःखने जोगवे छे, धनवाळाने हमेशां जयनुं दुःख वन्युं रहे छे, चोर, लुंटारा प्राणघात करे छे, अन्यायी राजा विना गुन्हे पण दंडे छे, ते धनने अर्थे दरिया, डुंगर, नदि, राक्षसो, रींछो अने फामी खानारां जनावरोवाळी धरतीमां अथडाइ घणा दुःखने जोगवे छे. एटले ऊपर लख्या शिवाय अनेक जातनां ऊपचरित सुख मिथ्याऽदृष्टीथी सुख मनाय छे, पण ते जाते दुःख अने दुःखनां कारण छे, सुख तो ऊपाधि रहित ज्ञान समाधि मांही छे. जीहां ऊपाधि नहि ते समाधि जाणवी ते तो आत्म तत्त्व मांहेज होय. अनंत पुद्गल परमाणु वर्गणाथी उपजेलु आ शरीर तेमांहे समाधि होय नहि, माटे परमा आपापणुं तजी शुद्ध उपयोग करी सहजानद समाधिमां रहीए तो इहां कोइनो दावो नथी परतंत्रतानुं दुःख नथी, अने स्वतंत्रतानु सुख छे, सकल्पागनुं दुःख नथी अने मोकलाशनुं सुख छे, नाश थवानुं दुःख नथी अने अविनाशी

पणानुं सुख छे, अज्ञाननुं दुःख नथी अने ज्ञाननुं सुख छे, चपलतानुं दुःख नथी अने स्थिरतानुं सुख छे, उपाधिपणानुं दुःख नथी अने निरुपाधिक पणानुं सुख छे, भयनुं दुःख नथी अने निर्भयतानुं सुख छे, खंभित थवानुं दुःख नथी अने अखंभित पणानुं सुख छे, जन्म मरणनुं दुःख नथी अमर अजन्म पणानुं सुख छे, संकल्प विकल्पनुं दुःख नथी अने निर्विकल्पतानुं सुख छे, बाधा पीडानुं दुःख नथी अव्याबाधनुं सुख छे, वीर्य हाणीनुं दुःख नथी अखंड अचल वीर्यनुं सुख छे, एम अनंत दुःख रहित अने अनंत सुख सहित पोते आत्म तत्त्व छे. हवे आत्माए ज्यांसुधी पोतानुं स्वरुप जाण्युं नथी त्यांसुधी पोतानी अन्वय तथा अनन्य रिद्धिने भोगवी शकतो नथी, अने पोताना कर्त्ता भोक्तादि गुणो परानुयायी थइ परभावने करे छे, भोगवे छे, ते ज्यारे शुद्ध स्वगुण कार्य रुचे थके कारक भाव विभावथी ऊलटे एटले सर्वे स्वगुण शुद्ध कारक भावे प्रवर्त्ते ते सर्वे शुद्ध उपयोगनुं फल छे, माटे शुद्ध उपयोग पामवा प्रयत्न करवुं. ते शुद्ध उपयोगना निमित्त कारण सद्गुरु छे. ते सद्गुरु केवा होय ? सिद्धांतना रहस्यना जाण, अगर स्वसमय पर समयना जाण, निर्ग्रंथ, एटले द्रव्यथी नवविध परिग्रह रहित अने भावथी राग द्वेष रहित, निरपेक्ष, निस्पृह, राग, द्वेष अने विषय विकारथी छोडाववावाला, स्वपर स्वरुपने देखाडवावाला होय, बाहिरनी धामधुम अज्ञान कष्ट न करावे पण शुद्ध साध्य सापेक्ष जे उत्सर्ग अने अपवाद मार्ग एवी प्रशस्त क्रियाना जणावनार होय. एथी जे ऊलटा आत्म स्वरुपथी अजाण बाहिरनी क्रियाना आडंबर देखामी भोला लोकोने भरमावे ते सद्गुरु नथी, अगर कोइ भोलो बाहिरथी वैराग्य पामीने आत्म स्वरुपनो अजाण ऊग्रविहार करनारो वावीसे परिसह सहेवा वालो होय, तोपण गुरु न जाणवो. कारण के कारण कार्यनी भिन्नता जाण्या विना मोक्षमार्ग साधी

शकाय नहि, जोला लोको कारण कार्यने एकज जाणे छे, अथवा कारणनेज कार्य माने छे, ते कारण कार्यना अजाण वेशधारीथी सम्यक्त शी रीते पमाय ? अने समकित वीना सर्वे क्रिया निष्फल छे.

आर्यावृत्तम्

उक्तंच–विरया सावज्जाउं, कसायहीणा महव्वय धरावी।
सम्मद्दिठि विढूणा, कयावि मुक्कं न पावंति ॥

द्रव्यथी सर्वे सावद्य व्यापार छोड्या छे, वहारथी कषाय पण करतो नथी, अने व्यवहारथी पंचमहाव्रत पण पाले छे एटले वाह्यरथी सुधर्मास्वामी सरखी क्रिया पाले छे पण अंतर समऽष्टी एटले सम्यक् ऽष्टीए सर्वे ऊपर समभाव नथी, तो कदापि मुक्तिने पामे नहि. माटे श्रुडे प्रकारे समभाव आदरवो एज सार छे.

गाथा–॥ नयभंग पमाणेहि, जो अप्पा सायवाय भावेण;॥
॥ जाणइ मोख्खसरुवं, सम दिठीयो सो नेउं ॥

अर्थः–नये करिने, सप्त भंगादिने भांगे करिने, प्रत्यक्षादि प्रमाणे करीने, आत्मानी स्याद्वाद सत्ताने अने मोक्ष स्वरुपने जे जाणे, तेने समकिति समऽष्टी कहिए. वली पोताना स्वरुपने सिद्ध समान अखंड जाणे के पोतानी रिद्धिनो कोईथी नाश थइ शके तेवो नथी तो क्रोध शी वावत ? अने कोना उपर करवो ? अने सर्वे आत्माने सिद्धसमान जाणे तो कोण नीचो ? अर्थात् कोइ नीचो अगर कोइ उंचो पण नथी तो मान शी वावत ? अने कोना उपर करवो ? सर्वे जीवमांहे ज्ञानादिक रिद्धि समान छे तो हुं केने, अने शुं ठगु ? सर्वे पोताना ज्ञानानदने भोगवीने सदाय मग्न रहो, मारे भोगववाने माटे माहरी ज्ञानादिक रिद्धि मारे पासे छे, तो ए शिवाय मारे शुं मेलववुं? अने लाववु अने संग्रह करवो, माटी, भूमी आदिक एटले धातु, रत्न आदिक मारे काम आवतां नथी, ए रोगीना कामनां छे पण हुं

उपाधि अने रोग रहित शुद्धात्मा हुं मारे मारे स्वपनां नथी. मोर अन्यनी शास्त्र शी वातन ? अहीतन अज्ञानमां हुंज पोते पुद्गल क्रिया करी अनंतीवार जांगीनो पाप पण्यो. तो कर्मने वशे सर्व जीवोनी एज दशा छे. हवे कर्मथी जिन्न में मारी न्यारी सत्ता जाणीनो जांगी शी वातनी शोध ?

धन, धान्य, परिवार, शरिर आदिमां मारे रति नथी. केमके ए जड, विनाशिक पदार्थ छे. ते धन धान्यादिक पुद्गल भोग न थके तनी मारे अरति नथी. मारे मारा ज्ञानादिक स्वतंत्र स्वभावमां रति छे.

मारे ज्ञानादिक धन अने चेतना पोते मारा आत्मथी अनन्य, अनंग निरवाश छे तो मारे शुन शानो ?

अनंत संसार भ्रमण करतां पण मारा आत्मप्रदेशमांथी एक प्रदेश के गुण गयो, के नूटयो, के नूटतो नथी तो मारे शोक शानो ?

सत्र मूत्रना पिंडरूप एवी पुरुषनां अंग तेथी न्यारो हुं शुद्ध चेतन अंग शुद्ध पिंड, तो कामनी चेतना मारामां नथी.

आणगमता स्पर्श, रस, गंध, रूप, अने शब्द मारा आत्म अंगने स्पर्शन करी शकता नथी. तेने देहमां ममत्व होय तेने स्पर्शन करे. देहना ममत्व रहित हुं शुद्धात्मा छुं. मारे स्पर्शेन्द्रीना शानी ? एम कषायनी प्रकृतिमांथी मन, वचन, कायाना योगोनी प्रवृत्ति रोकी पोताना शुद्ध स्वभावमां स्थिर थवुं. देहना ममत्व रूप वलना घरमां प्रवेश करी कोण मूर्ख कषाय रूप अग्निने जोगवे ? असार परपदमां व्यापकता मने न घटे. पुद्गलना अनंत पर्यायमां अज्ञानथी सुख अने जोग मानी आशक्तपणुं, रागरिंकपणुं मने न घटे. फोगट प्रवृत्ति करी देवनी वेल करवी ते हवे कोण करे ? हुं सर्व पुद्गल कार्यथी विराम पामी सच्चिदानंदमांहि तृप्त रहीश. अज्ञानपणे क्रियानो ममत्व करी अनंत काल फोगट खोयो हवे सद्गुरुना वचनामृत रस चाखवाथी कांइक चेतना सचेत थइ, तो जाणुं हुं के मारी सत्ता-

जूमी मारे स्वतंत्र छे, पण परमां व्यापकता करी तेथी आजसुधी स्वरूप रमणनो अवकाश मल्यो नहि, बहिरातम जावे धन, कुटुंब परिवार, गाम, नगर आदि पोतानां जाणी सदाए व्यापी रह्यो, आ मारो शत्रु, आ मारो मित्र, हुं स्त्री, हुं पुरुष, हुं बाल, हुं युवान, हु वृद्धो, हुं गोरो, रातो एम जूठा विकल्प करी, क्रिया रसे रिंझी, अनंतां नवीन कर्म बांध्यां हवे जिनेश्वरनी वाणीनुं रहस्य शुरू नयने पामीने मारुं स्वरूप देहादिकथी जिन्न ज्ञानानंदमय जाणुं हुं, पूर्वना वेगे उदयना मरोरथी जो कदापि उदयनी वेदना सहुं हुं, तथापि सत्ता गुणे सिद्ध समान, अरुपी, अकलंक, निर्द्वंद, निरामय हुं. हवे मोह शत्रुने तावे थइ स्वरूपने न जूलुं एम अतरआत्मामां परमात्माना स्वरूपने जावतां सदाए शुरू नयने जजु शुरू नये आत्म सन्मुख थइ जिन आणा प्रमाणे आपणा गुणठाणा माफक क्रिया कर्ये ज्ञान क्रियाथी मोक्ष कह्यो छे. ते ज्ञान तो आत्मानो गुण छे, ते ज्ञान आत्माथी जिन्न नथी, माटे आत्माज आत्म जावे रमे, तेज अध्यात्म क्रिया आदरवी. वली आगममांहे विष, गरल, अन्योअन्य, तद्हेतु अने अमृत, एम पांच क्रिया कही छे. तेमांहे आ जवना सुखने अर्थे जे क्रिया करवी ते विष क्रिया छे, बहिरातम जाव छे परजव अर्थे एटले इंद्रचक्रवर्त्ती आदिनी पदवी अगर पचेंद्रियजोग अर्थे जे क्रिया करवी ते गरल क्रिया बहिरातमजाव छे वली अपमान टालवा अथवा मान शोजा वधारवा माटे जे अन्योअन्य अनुष्टानादिकनु करवुं ते पण बहिरातम जावछे ए त्रणे क्रिया परमात्मा तजवी कहीछे अने तद्हेतु तथा अमृत ते आदरवी कहीछे ते तो भेदज्ञान अगर धर्मध्यान अने शुक्लध्यान, ते आत्मपरिणामे आत्मभेद मांहेज बने, माटे स्थिर उपयोगे स्वसत्तामां रमण करवुं. सर्वे ससारी जीवने चार ध्यान मांहेनु एक ध्यान सदाए काल होय, ते मांहेथी आर्त्त, रौद्र ए बे ध्यान तजवां कह्यां छे ते मांहे इष्ट वस्तुनो वियोग,

अनिष्ट वस्तुनो संयोग, तथा पीडानुं चिंतववुं, अने आवता कालनी चिंता, ए सर्वे आर्त्तध्यान वहिरात्म नाव ठे, माटे तजवो. अने हिंसा, असत्य, परधन हरण अने परिग्रह संचयनुं चिंतवन, ते रौद्रध्यान वहिरात्म नाव ठे, अशुद्ध उपयोग ठे, माटे ठोमो. अने जे धर्मध्यान ते परमेश्वरनी आज्ञानो विचार, कर्मबंधनो विचार, कर्मना शुनाशुन फलनो विचार, अने संस्थान विचार, ए चार प्रकारनुं चिंतवन ते धर्मध्यान कहीए, परमेश्वरनी आणा स्वरुप रमण करवानी ठे अने शुनाशुन कर्म तेना विकारथी अने सर्व संस्थानथी हुं निन्न शुद्ध चेतना ठुं, एम स्वपर विवेके नेदज्ञानमांहे चित्त रमावी पर त्यागी, निजगुणमांही मग्न थवुं; ते तो वाहिर क्रिया नथी पण अंतरदृष्टिए आत्महदमांहे वने माटे अध्यात्म क्रिया आदरवी. शुक्लध्यान ते तो वस्तुना यथार्थ स्वरुपने जाणी शुनाशुन सर्वे विकल्प तजी आत्म स्वनावे स्थिरथोन थवुं, ते तो पूर्ण शुद्ध उपयोग ठे. माटे जीहांथी तिहांथी चित्तने वाली स्वरुपमां लावी स्थिर उपयोगे स्वरुप रमण करवुं, वर्णादिक पर पदार्थ मांहे चित्त रोकाय ठे, ते तो विषयोमां सुख वासनाथी अनादिनुं वेगे चरेलुं चित्त त्यां जइ व्यापे ठे, ते चित्त स्वगुण पर्याये ज्ञान वासित करी परथी पाछुं वालो, जेथी सर्वे कारक चक्र सुलटे, अने आत्म सत्तामांहे लीन थइ मग्न थइ रहे, ते अन्यास करवो. जेम जेम वाहिर दृष्टीए देखीए तेम तेम मन वाहेरला पदार्थमां जाय अने अंतर दृष्टीए देखीए तो मन स्थिर थाय, अने विश्रामने पामे. माटे जे जे कारणोथी चित्त चलायमान थाय ते ते कारणोथी वेगला रही एक शुद्ध चेतनाने अनुनवो तो अक्षय पद तमारा पोतानाज हाथमां ठे. जीहां सुधी वहिरात्म नाव ठे, तीहां सुधी चित्त स्थिर थवुं कठण ठे, माटे वहिरात्म नाव ठांमवाने निचे लखेलो विचार दर समये करवो.

के आ सात धातु अने मलथी वंधायलुं शरीर ते हुं नथी, जो ए हुं

होततो मांस, रुधिर, हाड, मेद, मज्जा, वीर्य, रस, ए सात धातुमांथी अने सात मेलमांथी हुं एक कोण हुं? अथवा ए सर्वे हुं हुं, तो हुं अनेक हुं के एक हुं? हुं अनेक होऊं एम तो संज्ञवे नहि हुंतो एकज हुं, तो शुं हुं रुधिर हुं? जो कदापि हुं रुधिर होऊं तो रुधिरना अनेक वींछुवा थाय छे, वली ते रुधिरना एक वींछुमां वायु, पित्त, कफ आदि अनेक पदार्थ छे, अने ते दरेक पदार्थ अनंत पुद्गल परमाणुना संयोगथी वनेला छे, तो ते मांहेलो कयो परमाणु हुं? एम साते धातुनो विचार करतां स्पष्ट मालूम पडे छे के ते मांहेलो तो हुं नथी; पण एने जाणनारो चेतना लक्षणे लक्षित आत्मा हुं वली पांच इंद्रिय अने अंगोपांग मांहे हुं कइ इंद्रिय हुं? अथवा कयुं अंग के ऊपांग हुं? ए सर्वेने हुं जाणुं हुं, देखुं हुं, ए मने जाणतां नथी, देखतां नथी, हुं मने ज्ञाता अने दृष्टापणे तन्मयपणे जाणुं हुं. जे वीजा पदार्थने जाणुं हुं ते माराथी निन्न जणाय छे, पण तन्मय पणे तो ते पदार्थ नथी, केवल ज्ञायकता तेज मारो मूल स्वज्ञाव छे, तो वहु पुद्गल संयोगे ऊपजेलुं शरीर अने ते मांहे ऊपजता विषय कषायादि विकारने मारा केम मानुं? मारे एने शो संवंध छे? मारी जाती नथी, अनंत पुद्गल संयोगी छे, माटे विखरी जवाना ते तो निर्धार छे. तो एवा मिथ्याज्ञावे करी चपलताना कुःखने केम जोगवुं? ए मांहे लक्ष देवानी मारे कांइ जरुर नथी. ए पुद्गल पोतानी स्थिति प्रमाणे मले, विखरे, पोतानो सरुण पडण विध्वंसण धर्म छे ते कदापि नहि छोडे, तो हुं जूगोज एना पाठल पडी पुद्गल शक्ति राखवानी ऊमेद करुं ते केवी जूल छे? हवे एवो पूर्व अन्यास तजी मारी केवल ज्ञायकता शक्ति सजाली अचल अकंप जावे रहुं ते परमानद छे. अहिंआं चोरनुं जोर नथी, राजानो हूकम नथी, मरणादिकनो जय नथी, पारकी तावेदारी नथी, रोग नथी, शोक नथी, जीख नथी, श्रम नथी, कांइ सकलाश नथी, काइ खावुं नथी,

कांइ बोड्युं नथी, माटे जिनेश्वरना वचन रुप अमृत आदरी सर्व क्लेशथी मुक्त थवुं. केवल ज्ञान गुण शिवाय जे अन्य अन्य भाव भासे छे ते पुद्गल संगे राग द्वेषथी मिथ्याभाव भासे छे. पण जे समय मारी सत्ता तरफ लक्ष आपुं तो केवल शुध्ध चेतना जेम छे तेमनी तेम कायम छे. द्रव्यनी सत्ता द्रव्य मांहे द्रव्यथी अनादि अनंत काल सुधी रहे कोइ काले नाश पामे नहि, पर्याय धर्मे अथवा भेद धर्मे द्रव्यनी अंदर जे अनेकता भासे ते अनेकता एकताथी भिन्न नथी, जेम चेतनामां ज्ञान गुण कह्यो ते ज्ञानज छे. अने ज्ञाननी निःशंकता निर्धारता ते दर्शन छे. अने ज्ञाननी ध्रुवता, अचलता, अकंपता, तिक्षणता, ते चारित्र छे. एम सुख, वीर्य आदि भेद धर्मे अनेक कहेवाय पण एकज छे. पण परगुण ते स्वगुण मांहे एकता पणे थाय नहि. जे द्रव्यनो जे गुण पर्याय होय ते गुण पर्याय ते द्रव्य मांहीज समाय पण बीजा द्रव्य मांही समाय नहि. माटे हुं स्वगुण संतोषना सुखने केम छोडुं ? शा माटे प्रमाद करुं ? आ वात चूक्या पछी कोण मने चेतवणी आपशे ? माटे आ अवसर पामी सर्व संकल्प विकल्प तजी शुध्ध उपयोग करी अनंत सुखनो भोगी थाऊं. विषय रुप रोग तेने भोग जाणी आज सुधी में खोटा मनोरथ कर्या, बहु शुभाशुभ बंध कर्या, आत्म गुणनी घात करी, न कही शकाय एवां दुःखोने भोगव्यां, हवे ए विषयोथी विराम पामी स्वतंत्र आत्मानंद भोगी थाउं. पूर्वना अभ्यासथी मोह पामी न चूकुं सावधान रहुं. धन्य छे ! तेने के जे विषय कषायथी विराम पाम्या. धन्य ! मने के विषयथी विराम आपनार जिनेश्वरना वचननो रहस्य हुं पाम्यो. वली धिक्कार ! मने एवो रहस्य पाम्या छतां पण हुं मारी शुध्ध चेतना परिणति संभालतो आदरतो नथी, ए महा मोह जाल मिथ्याचार भव वासना छे. हवे शुं हुं पोताना सुख माटे प्रयत्न न करुं ? शुं हजी हुं मोह वश थाउं ? शुं हजी हुं रांकडुं ? मारीज भूलथी पारके तावे थइ दीन बनी रहुं

एम तो मने न घटे. परमेश्वरे आत्मानी अनंत सत्ता अनंत महीमा परम उंच पद वर्णव्युं छे.

तेज मारा परम पदने समय पण न चूकुं. जिहां चेतना लक्षण शिवाय अन्यभाव छे ते मारा नथी तो तेनुं मारे कांइ पण प्रयोजन नथी. जे वखते मारी शुध्ध चेतनामां अचल अकंप रहीश त्यारे हुं स्वतंत्र परमानंदनो अधिकारी थइश.

॥ दोहरा ॥

चेतन चेतन भावमां, रहेशे जेह अडोल
मनसुख शिव त्रिय संगशुं, करशे सहज कलोल (१)
वरणादि रागादि विन, थिर ज्ञायक उपयोग,
चले न वीरज अन्यथी, सहजानंदसुं जोग (२)
एम अनुभवतां आतमा, ऽढ करी मन वच काय,
मनसुख नरभव पाश्के, कीजे सिध्धि सदाय. (३)

संपूर्ण इति श्री स्तुत.



॥ ॐ श्री वीतरागायनमः ॥

॥ अथ श्री अनुभव प्रवेशिका ग्रंथः प्रारभ्यते ॥

॥ मालिनी वृत्तम् ॥

॥ कृपज्ञ अजित वंदो, मोक्ष मार्गाधिकारी ॥
॥ करम भरम हारी, निर्मलानंद धारी ॥
॥ विमल सुनय वाणी, वस्तु सत्ता वखाणी ॥
॥ सुर नर पति वंदे, सिद्धिना हेतु जाणी ॥ १ ॥
॥ भवि दरशन पावे, आतमा आत्म भावे ॥
॥ गुण रमण रमावे, एकमां एक भावे ॥
॥ सवि कुरित खपावे, भावना शुद्ध भावे ॥
॥ जय पडह वजावे, शीव संपत्ति पावे ॥ २ ॥

॥ मंदाक्रांता वृत्तम्. ॥

॥ आत्मा जोने अखिल जगमां, सर्व वस्तु विचारी ॥
॥ आपा आपे निज निज द्रव्ये, आपणां कार्य कारी ॥
॥ कोई केना गुण न प्रणमे, नास्तिता अन्य धारी ॥
॥ सिद्धा सिद्धे सहज थिरमां, लक्षणे लक्ष धारी ॥ १ ॥

॥ दोहरा ॥

दर्पणमां मुख जिम लखे, ज्ञायकतामां आप;
उपयोगी उपयोगथी, प्रगटे पूर्ण प्रताप. ॥ १ ॥
कुमत तिमिर टाली करे, हृदय सरोज विकास;
दिनकर किरण समो सदा, पुरुषादानी पास. ॥ २ ॥

अथ भाषा लिख्यते.

ॐ श्री वीतरागायनमः

गाथा ॥ दप्पण दंसणेणय ॥ ससरुवं जह पस्सदि कोवि णरो ॥
तह वीयरायायारं ॥
गाथा ॥ दर्पण दर्शने न च, स्वस्वरुपं पश्यति कोपि नर ॥
तथा वीतरागाकारं, दृष्ट्वा स्वयं रागे तत अहंदि ॥

अर्थ—जेम कोइ पुरुष दर्पण लेइ तेमां पोतानुं स्वरुप देखे तेम वीतरागाकार प्रतिबिंब देखी पोते पुद्गलमां रह्यो थको पण पुद्गलना राग रहित पोताने देखे तो पोताने वीतराग रुप जूए, एटले जो हुं शरीर रुप पर द्रव्यने अहंपणे न जोऊं तो अनंत ज्ञायकतामय वीतराग रुपे हुं पोतेज छुं, एटले पर द्रव्यमां अहंपणुं अने राग तजी पोते पोताने ज्ञायकतावंत जोतां सर्वे दुःख विलय जाय, शाश्वतो आनंद स्वतंत्र प्रगटे, पर रहित निजपद संभालतां परमपदनी प्राप्ती थाय. एज उपाय देखाडीए छीए.

पोतानीज ज्ञायकता शक्ति वमे पोताने न जोतां उलटो परमां आपो मानी पोताने भूली रह्यो छे, तेज ज्ञायकता परथी पाछी वाली पोताने ज्ञान रुपे जूए तो मुक्ति स्त्रीनो कंत थाय. निजरुप परिणाम करवामां कांइ क्लेश नथी, तो ए परिणाम जीव केम करतो नथी ? अनादि कालथी परमां अहंपणा रुप निविड गांठ पडी छे, आपा परनुं एकत्व संधान थइ रह्युं छे जेम कोइ पुरुषने अफीण खावानी टेव पडी तेथी परवश थइ दुःखी थाय छे, अफीणनी टेव छोडवाथी सुखी थाय पण बहावड आववाथी टेव छोडी शकतो नथी. तेवी रीते पर संबंधे मोह बंधायो छे ते छोडे सुख छे पण भेदज्ञान विना परमां अहं ममत्व करी जूठुं सुख मानी ते विनाशी पदार्थने स्थिर राखवा चाहे अने पोतानी मरजी प्रमाणे प्रवर्त्तावा चाहे, पण पर द्रव्य

कोइनो संगी नथी, ने कोइ द्रव्यनी परिणति अन्य द्रव्यनी इछा अनुसारे परिणमे नहि, तो पण तेने राखवा यत्न करतो अढार पाप स्थानक सेवी चोराशीलाख जीवायोनिमां भ्रमण करी महा विपत्तिनो जोगी थाय छे अनादि अविद्या वृटेज सुख छे ए अविद्या नाश करवाने अर्थे प्रज्ञारुप छीणी आत्मा तथा परना एकत्व संधानमा मूके, स्वपर अश द्रव्य गुण पर्यायवडे न्यारा न्यारा करे, परना परमां समावी पोताना पोतामां राखी स्थिर उपयोगे तन्मयी थइ मग्न थाय, पछी जरू परिणामनो प्रवेश नथी, परथी पोताने जिन्न केवी रीते जाणे ? के परमां अहंपणुं जाणनार माननार एज मारा ज्ञान स्वरुपनी वांनगी छे, एज ज्ञान वांनगीने जाणी जाणी अनेक संतो पोतानुं पूर्ण स्वरुप पामी अजर अमर पदने पाम्या चित्तने चेतनामां लीन करे स्वरुप अनुभवनो विलास सुख निवास छे, तो अनुभव केवी रीते करे ते कहीए छीए.

निरंतर पोताना शुद्धात्म स्वरुपनी भावनामां मग्न रहे; दर्शन ज्ञान चेतनामय उपयोग दृढ भावे. हुं उपयोगवंत हुं, ज्ञान पुंज, अखंड, एक, अज, अविनाशी, स्वतंत्र, अनंत चेतनवीर्यवंत हु, एथी जे अन्य ते हुं अने माहरूं नहि, पोताना द्रव्य गुण पर्याय पोतामां यथार्थ अनुभवे; एटले पोतानी अनंत शक्तिनो आनंद रस ले. निज आनंद अनुभवथी पंच परमेष्टी थया छे, थाय छे, अने थशे, ए प्रताप अनुभवनो छे. अनुभवना आचरणने अरिहंत सिद्ध सेवे छे. अनुभवमां शुद्ध आत्मिक सिद्धताना सकल रस आवे छे. ने कहीए छीए— ज्ञाननो प्रगट प्रकाश अनंत गुणने जाणे, ज्ञान विशेष गुणनी परिणति परिणमे ज्ञान परिणतिने जोगवे, आस्वाद ले, तिहां अनुपम आनंद फल निपजे. तेमज दर्शन गुण परिणति परिणमे, वेदे, आस्वाद ले, अखंड आनंद अनुपम रस ले, तेथी सर्वे रस परिणति झारे आव्यो, एवी रीतेज द्रव्यने पर्णिमे त्यारे परिणति झारे द्रव्यनो अनुभव थयो,

अनुभवनो रस गुण परिणति एक रस थये थाय छे. आत्म वस्तु अनंत गुण चेतनानो पुंज छे, ते गुण चेतनानुं संक्षेपथी वर्णन करीए छीए,--

सकल गुणमांहे ज्ञान परम प्रधान गुण छे. ज्ञान विशेष चेतना छे सर्वनो ज्ञाता छे, ज्ञान इंद्रिय ग्राह्य नथी, वली ज्ञान सदाए उत्पाद, व्यय, ध्रुवयुक्त शाश्वतो निज गुण छे, ते अनंत वीर्य सहित छे, अगुरुलघुमयी छे, जो अगुरुलघुमय न होत तो हलको भारी थइ जडता पामतो, ते ज्ञानादि गुण सर्वे सकल समय प्रमेय रूप छे. आपणी मर्यादा छोडे नहि, प्रमेयविना प्रमाण रहे नहि वस्तुविना प्रमाण शानुं थाय ? अस्तित्वविना वस्तुत्व कोना आधारे रहे ? प्रदेशत्व विना अस्तित्व कोनुं कहीए ? प्रभुत्वविना प्रदेश प्रभुता शेनी रहे ? द्रव्यत्व विना पर्यायनो आविर्भाव तीरोभाव कोने आधारे रहे ? सत्त्व विना सत्ता असत्ता रुप थाय, विभुत्व विना प्रभुत्व सर्व मांहे केम थाए ? जीवत्व विना विभुत्व अजीव थाय, चेतना विना जीवत्व क्यां वर्त्ते ? ज्ञान विना चेतनानुं विशेष ज्ञान न थाय, दर्शन विना सामान्य विशेष ज्ञान न थाय, ज्ञान सर्व ज्ञाता छे ते विना दर्शन सामान्यने कोण जाणे ? सर्व दर्शित्व विना ज्ञानने कोण देखे ?

चारित्र चेतना विना दर्शन ज्ञाननी स्थिरता क्यां रहे ? परिणामीकत्वविना चिद्विलास क्यां रहे ? अकारण कार्यत्व विना पर कारण थाय तेथी निज कारण कार्यनो अभाव थाय, अस्खलित गुणविना अविनाशी चेतना विलास स्खलना पामे, ग्रहण त्याग शून्यत्व विना ग्रहण त्याग बन्यो रहे, पर अकर्तृत्वविना पुद्गल कर्मनो कर्त्ता थाय, पर अभोक्तृत्व विना परभोगी रहे, असाधारण विना स्वपर द्रव्यनो भेद न पडे शंकरपणुं आवे, साधारण विना सामान्य स्वभाव न रहे, तत्वविना वस्तु स्वभाव न धरे, अतत्वविना परतत्त्व आवे, भावविना परभाव आवे, सद्भावविना अतितभाव

अनागतमां न रहे, भाव अभावविना परिणाम समय मात्र न संभवे, अभाव भावविना गतागत परिणाम वन्यो रहे, अभावविना कर्मनो सद्भाव जाणे, अभाव अभावविना अतीतमां कर्म अभाव हतो ते अनागत अभावमां एवुं न थतुं, कर्त्ताविना निजकर्मनो कर्त्ता न थाय, कार्यविना स्वभाव कार्य न थाय, कारणविना परिणामे करी स्वरुपनुं साधन हतुं ते न थतुं, संप्रदानविना आत्मा आत्म परिणामे करी आत्म संपदानो दाता न थाय, अपादानविना पर संपदानोज दातार रहे, अधिकरणविना सकल कार्य पर्यायनो आधार न थाय, स्वयंसिद्धविना पराधिनता आवे, अज विना ऊपजे, अखंडित्व विना खडन पामे, विमलविना समल रहे, एकविना अनेक थाय पिंडनुं एकत्वपणुं न रहे, अनेकविना गुण पर्यायनी अनंतता न रहे, नित्यविना नाश पामे, अनित्यता विना पद् गुण हानि वृद्धि न थाय अर्थक्रियाकारित्व न रहे, भेदविना द्रव्य गुण पर्यायनो भेद न रहे, अभेदविना प्रदेश अभेदपणे एकाधारे न रहे, अस्तिविना असत् थाय, नास्तिविना पर द्रव्यादिक पणुं पामे (परद्रुपे थाय), अचल स्वभावविना स्वभावथी चलायमान थाय, ऊर्ध्वगमन स्वभावविना उंचत्व पद न पामतो इत्यादिक अनंत विशेषणो जाणी जे जे द्रव्यना जे जे विशेषणो ते ते तेनां तेनामां समावी परद्रव्य, उपर उदासिन्न वृत्ति करी पोतानां विशेषणो पोतामां अभेदपणे समावी निर्मल, निःकंप उपयोगे, समयानंतर आनंदमां मग्न रहेवुं.

प्रथम अनादि परमां अहंभाव रुप मिथ्या परिणामरुप अविद्यानो, भेदज्ञानवडे स्वपर गुण पर्याय भिन्न भिन्न विचारी नाश करे. शुद्ध नये स्वरुपना जाण सद्ज्ञानंदी गुरु पासे स्वपर द्रव्यनी भिन्नता जाणी, मिथ्यात्वनो अंश मात्र राखे नहि, निःशंकितादि अष्ट गुण प्रगट करे, पढी परगुण पर्याय उपरथी राग उठावे. परना अहंपणावडे मोहनिय कर्मनी अठावीश प्रकृति अने तेना असं-

ख्याता अध्यवसायथी मुंझाइ अज्ञान, मिथ्यात्व, अने पराचरण रुपे वर्तें छे. शुद्ध नये पोताने पोतापणे जाणतां सकल अध्यवसाय रुप विभाव तथा परने पोतापणे जाणवाथी थएला सर्वे शुभाशुभ संकल्पोनी तरंगोना कल्लोल नाश पामे, परमस्थिरता आवे, निर्मल शुक्लध्यान पामे, वीतरागता पामे, पर प्रवेशनो अभाव थाय, तेवारे निज ज्ञाने निज अनंत गुणनो ज्ञाता, अने पोताना रम्य स्वरुपमां रमण करवावालो परम स्थिरतावंत थाय. स्वद्रव्य गुण पर्यायमय तथा ज्ञान दर्शन उपयोगमय अभेद निज पद जाणी निर्विकल्प समाधिमां मग्न थाय. अनंत महिमा भंडार निर्विकार, सार, अपार शक्ति मंडित, मारूं स्वरूप छे एम ध्यान धरी निश्चल थाय. पोतानुं सर्वस्व जाणे, एम निज स्वरुपने जाण्याविना परगुण पर्यायने पोतापणे जाणी जाणी संसारी जीव दुःखी थया. ते परने अहंपणे जाणवुं केम मटे ? ते कहिए छिये.—

हुं उपयोगवंत छुं, मारा उपयोगने परमेश्वरनी वाणी पोकारे छे, पुद्गलना स्पर्शादिक वीश गुण अने संस्थानादि अनंत पर्याय अने मारा शिवाय अन्य द्रव्यना जे जे गुण पर्याय ते रुपे हुं नथी, सदा निज प्रमेयमय छुं, एम दृढ निर्धार करे, परपरिणति अज्ञान वशथी में मारी जाणी ते उपर राग रींझें रींझी विविध प्रकारे रींझ खीज करतो निज सत्ता स्थलमां स्थिर न रह्यो, हवे परपरिणतिनो राग न करूं तो न थाय. मारा सद्भावमांहे स्थिर रहुं तो मुक्तिप्रियाथी सगपण अवश्य पामुं. कर्मना भर्मनो नाश निज शर्म पामे थाय छे. ते निज शर्म केवी रीते पामीए ? ते कहे छे—

हुं चिदानंद जाति छुं, मारी आत्म जाति मांहेला अनंत पुरुषो आनंदपुरीमां निज प्रिया साथे अनंत स्वतंत्र आनंदेविलसे छे. हुं जगत् जीवनी एंठ चाखतो चोराशी लाख जीवायोनिमांहे भटकतो फरुं छुं ते मने न घटे. आहा ! केवी शरमनी वात छे के

एकवार वमन करेलुं कोइ चाखतुं नथी तो अनंत जीवोए अनंतीवार वमन करेली एंठने चाखवुं अने ते उपर ललचावुं अने ते मांहे मग्न रहेवुं ए मने न घटे. पर अथिर जडमां सुख क्यांथी होय? मारुं सुख मारा उपयोगमां छे ते मारो उपयोग सदा मारामां छे हुं उपयोगने भूली अनुपयोगी जरू द्रव्यमांहे अनादिथी रक्त थयो, सुख स्थानक चेतना उपयोग भूल्यो, सुख क्यांथी थाय? हवे में साक्षात् उपयोग थावो (प्रगट) कर्यो के अहं नर एवुं मानवुं ते नर, देवादिक शरीर जरूमां तो होय नहि. परमां अहंपणुं मानवुं मारा अशुद्ध उपयोगथी थयु, जेम कोइ नट वलदनो स्वांगधरी पोताना मूल स्वरूपने भूल्यो कोइने पूछे छे हु मनुष्यपणुं क्यारे पामीश? एटले पोतानुं स्वरूप भूलवाथी ए रीत थइ छे तेमज चिदानंद पोताना स्वरूपने भूली नर, देहादिक पुद्गल पर्यायने पोतापणे मानी पोताना अनंत ज्ञान वीर्यने अने अवाधितपणाने भूल्यो छे ज्यारे पोते पोताने पोतापणे जाणे त्यारे पोते शुद्ध सिद्ध स्वभावने पामे. पोते यत्नविना पोताने जाणयो नहि. कार्य एज छे के आत्म श्रद्धाए आत्म सुख अवलोकन थाय छे ए श्रद्धा शाथी थाय? ते कहिए छीए—के प्रथम सर्वे लौकीक रीतथी विमुख थइ पोतानी शुद्धताना विचार सन्मुख थाय. कर्म गुफाविषे तुप्यो निज स्वरूपमय चिदानंद राजा रहे छे ते गुफा त्रण छे. तेनां नाम. प्रथम नोकर्म गुफा, बीजी द्रव्यकर्म गुफा, त्रीजी भावकर्म गुफा. प्रथम नोकर्म गुफामां परिणति प्रवेश करी पोताना चिदानंद राजाने देखवा लागी तिहां न मल्यो त्यारे चकित थइ रही, पाठी फरवा लागी, त्यारे श्रीगुरुए कह्युं के "तुं शुं ढुंढुं तुं" त्यारे ते बोली मारा चिदानंद स्वामीने शोधुं हुं. ते अहिंआं न मल्यो. त्यारे श्रीगुरु बोल्या "तारो राजा हुं बतावुं" अहिआंथी त्रीजी भावकर्म नामनी गुफा छे त्या ते वसे छे. तेना हायनी चलावेली क्रिया दोरी नोकर्म गुफासुधी

आवे छे, जो ते न होयतो क्रिया दोरी पोतानी मेले हाले नहि, माटे विचार. अने ए दोरीना अनुसंधाने चाली जा. द्रव्यकर्म गुफामां प्रकृति, प्रदेश, स्थिति, अणुभाग, तारा स्वामीना निमित्तथी नाम पाम्या छे. ज्ञानावरणादिक जे जे प्रकृति बंधाइ ते तारा चिदानंद राजाना अशुद्ध भाव निमित्तथी छे. त्रीजी भावकर्म गुफामां राग, द्वेष, मोहना विकासमां स्वरुप ढूपी रहे छे. ते राग, द्वेष रुप विकास तारा नाथनो अशुद्ध स्वांग छे. तेमां तुं शोध. भय न करीश निःशंक जाण. ए राग, द्वेष, मोहनी दोरी साथे जा, शोध, जे प्रदेशथी राग, द्वेष, मोह रुप क्रिया दोरी ऊठे छे ते प्रदेशवंत तारो नाथ छे. क्रिया दोरीने तथा अशुद्ध स्वांगने न देखीश, पण अशुद्ध स्वांग धरनार, अने क्रिया दोरी प्रेरनार, अनंत चेतना चिन्ह परम आनंदमय तारा चिदानंद स्वामीने भेटी सुखी था. पोतानो ज्ञान महिमा ढुपावी बेठो छे तुं पिछानी लेजे. ए गुप्त ज्ञान थतां तारा नाथने प्रगट जोइश, ए निजशर्म प्राप्तिनो ऊपाय कह्यो. निज सुखतो निज उपयोगमां छे. ते दुर्लभ केम थयुं छे ते कहिए छिये—ए परिणामभूमिकामांहे मोहमदिरा वशे अविवेकमल्ल उन्मत्त थयो छे, विवेकमल्लने जीती रणथंभ रोपी खडो थयो छे. जोरावरीथी चेतनाने चेतनानी सुख निधिनो विलास करवा देतो नथी. ज्यारे विवेकमल्लनुं जोर प्रगटे त्यारे अविवेकने पछाडे, त्यारे निज निधि विलासने पामे. पर रुची खोटो आहार सेववाथी मिथ्यात्व ज्वर ऊपन्यो छे, तेथी विवेक निर्बल थयो छे, माटे स्वआचरण पारो, श्रद्धा बुट्टिना रसवडे सुधारी सेवन करे तो मिथ्यात्व ज्वर मटी विवेकमल्ल सबल थाय, अने अविवेकने नाश करे, त्यारे आनंद निधिनो विलास थाय. स्वआचरण अने श्रद्धा शुं, ते कहिए छिये.

अनादिथी संसारमां जीव आत्मभावने न जोतां आत्माथी बाहिरनी वस्तुमां कर्मचेतना, कर्मफलचेतनापणे सकल समय

वर्त्यो. ज्ञानचेतनापणे निज निधि विलासनो अवसर न पाम्यो. हवे जिनवचन अमृत अंतर दृष्टिमांहे अंजन करी ज्ञान, दर्शन, चरण, निज स्वभाव आचरण रूप पारो सेवीए तो आत्मवीर्य वृद्धि पामी विवेकमल्ल प्रबल पराक्रमवंत थाय. हुं कोण हुं ? माहुं स्वरूप शुं ? हुं केम जूल्यो ? एम परतरफथी दृष्टीवाली दर्शन, ज्ञान, चरण, रूप निज आत्मगुणमां परिणति रमावे दर्शन गुणे देखुं हुं, ज्ञान गुणे स्वपर विशेष स्वभावने जाणुं हुं, चरण परिणामे करी आचरण करुं हुं, ए त्रणे गुणो में अन्य ज्ञेयोमां ज्ञेयार्थपरिणमनपणे प्रवर्त्ताव्या, जो निजमांहे एकत्वपणे रमावुं तो अनंत चेतना निधान माहु मारे स्वतत्र छे में ममत्वपणे अनादिथी परज्ञेयोमां आचरण कर्युं, में मारा निर्मल पदमां उपयोग न दीधो, अतींद्रिय सुख लाभथी रीतो रह्यो. अनंत केवली थया तेउए स्वरूप शुरू कर्युं, अनंत सुखी थया. मारे पण स्वरूप शुरू करवुं एज माहुं कार्य छे. मुनिश्वरो निरंतर प्रमाद छोडी स्वस्वरूप शुरू करे छे, माटे माहु त्रिलोकपूज्यपद शुरू प्रगट करी सहजानंदी थाऊं. कर्म घन घटामां मारा स्वरूप रूप सूर्य छूप्यो छे, मारा स्वरूपनो प्रकाश कर्म घटाए करी हणायो नथी, पण पर्याय अवराया छे, वली वली कर्म घटानुं जोर छे पण मारा स्वरूपने हणि शके तेम नथी चेतनाने अचेतन करी शके नहि पण मारीज भूल थइ, हुं स्वपद भूल्यो हुं जागीने जोऊंतो मारुं पद अखंड चेतनामय जेमनुं तेम कायम छे. जेम कोइ रत्नद्विपनो रहेवाशी मनुष्य हतो, रत्न समूहमां रहेतो हतो, रत्नना मंदिरमां रहेतो हतो, रत्ननी परखनो अजाण हतो, रत्ननी परखवाला देशमां आव्यो. एना पासे कोइ जागमां लीली मणी चोंटी आवी हती. एकदिन सरोवरे स्नान माटे गयो फरीए सरोवरनुं पाणी लीलुं थयेलुं देखी जाएयु के आ पुरुष पासेनी मणीना प्रभावथी पाणी लीलु थयु छे. ते पुरुषने चेताव्युं के आ ताहारी मणी

महा मूल्यवंत छे, ते बोल्यो में न जाएयुं. एम पोतानुं निधान पोतानी पासे जाणतां सुखी थाय. तेम हुं चिदानंद छुं, अनंत चैतन्य चिन्मंडित अनंत गुणमय छुं, मारा उपयोगने आधीन छे, हुं मारो परिणाम स्वरूप उपयोगमांथी नहि चलावुं तो अनादि दुःख नाश थशे. सहेल रस्तो निज स्वरुप पामवानो छे. दृष्टीगोचर करवुंज दुर्लभ छे, पण संत पुरुषोए सुगम करी आप्युं छे, तेमना पसायथी हुं पाम्यो छुं; ते मारो अखंड विलास सुख निवास आ अनुभव प्रवेशिकामां छे; वचन गोचर नथी, भावना गम्य छे, ए मारो स्वरूप ज्योतिनो प्रकाश निज घरमां प्रकाशी रह्यो छे, तुप्यो नथी, गुप्त केम मानुं ? छती वस्तुने अछती केम कहुं ? पहेलां छतीने छती न जाणी हती, तेथीज दुःख फल थयुं हतुं. हवे शरीरने मारा पणे केम मानुं? ए तो रुधिर वीर्यथी उपन्युं छे, सात धातु, सात मल, अनेक रोगनुं उपादान जरू अथिर छे. ते हुं नहि, एनुं मने कांइ नहि, में कर्युं नथी, मारे माटे नथी, मारा कारणथी परिणम्युं छे पण माराथी नथी, मारुं नथी, मारामां नथी. ज्ञानावरणादिक वर्गणा विजाती, अचेतन, बाधक, वर्णादि रुपी, विनस्वर, बिभत्स, दुगंछित भाव छे. एज स्वभाव मलिन करे. ते कर्म उदयथी थयुं छे. एथी भिन्न चेतनावंत मारुं पद हुं पाम्यो. ज्ञान लक्षणथी लक्ष उलखी स्वरुप श्रद्धावके आनंदकंदमां केली करी सुखी थाउं. स्वरुप श्रद्धावके आनंदकंदमां केली केवी रीते थाय ते कहिए छिये.

अनंत चेतनाचिन्ह सहित अखंडित गुणनो पुंज अनंत पर्याय धारी द्रव्य ज्ञानादि गुण परिणति पर्याय अवस्था रुप वस्तुनो निश्चय थयो. ज्ञान जाणवा मात्र, दर्शन देखवा मात्र सत्ता अस्ति मात्र, वीर्य सामर्थ्य मात्र, केवल एवी प्रतिति अने रुची भावने श्रद्धा कहिए. तेथी उपनी आनंदकंद केली करी सुखी थाउं. स्वरुप ज्ञानानंद, स्वरूप दर्शनानंद, स्वभावाचरणानंद, अनंत वीर्यानंद, स्वगुण तृप्तिआनंद, एम अनंत-

गुण स्वतंत्र अव्याबाधानंद तेज स्वरूपानंद छे. ए मांहेज परिणति रमावती एथी अन्य जे पुद्गल सत्तानूमि त्यां प्रवेश करवो नहिं; तेमांहे ज्ञानावरणादिक आठ कर्म अने मोहादिक कर्म शत्रुनुं कुटुंब वसे छे; ते तरफ जवुं नहि, ने जोवुं पण नहि, तेथी सुख समूह थाय, एथी बीजो चढतो अने सुगम उपाय नथी. जवी जीवोने भगवंते शिव मार्ग सोहलो ए रीते बताव्यो छे. एवी भगवंतनी आणा सेवतां संत महंतो थया में पण ए आज्ञानी भावनानो गाढो वर्ज रोप्यो छे. सम्यक् दृष्टीने एवो अभ्यास निरंतर रहे, कर्म परिणाम अभावथी ज्ञान स्वरस मंडित सुखराशि प्रगटे त्यारे कृत कृत्य थाय. आत्मानुं स्वरूप गुप्त थइ रह्युं छे; ते ज्ञाता शी रीते थाय ? भावना परोक्ष ज्ञान करी करी वधारीए ते केवी रीते सिद्धि थाय ते कहिए छिये— जेम कोइ दीवाने पांच पडदा छे तेमांथी एक पडदो दुर करवाथी कांइक उद्योत थाय, बीजो पडदो दुर करवाथी विशेष अंश प्रकाश खुले, त्रीजो गये चढतो प्रकाश थाय, वली पूर्ण प्रकाशनी दृढ प्रतिति वधे, चोथो गये अधिक प्रकाश थाय, पांचमो पडदो गये पूर्ण परम स्वतंत्र अक्षय प्रकाश थाय. एम ज्ञान आवरणना पांच पडदा छे. मति श्रुतज्ञान आवरण गये पोतानुं स्वरूप पोतापणे भासयं, पर स्वरूप उपरथी अहंममत्व उठे तो अंतरंग एवी प्रतीति आवे के हुं शुद्ध सिद्ध परमात्मा रूप छुं. अन्यरूप माहुं नथी, जेम कोइ पुरुष दरिद्री छे, करजनो थोक छे, तेना घरमां चिंतामणि छे, पोते जाणतो नथी. कोइ दयालु पुरुषे कह्युं " हे भाइ ! तारा घरने विषे चिंतामणि छे. ए चिंतामणि पसाये तारे निधि विस्तरी रही छे तुं चिंतामणि ने जाण. ते वचननी प्रतिति थतांज पोते दुःख दारिद्रथी मुक्त थाय, तेम शुद्धात्म भावनी प्रतिति आवे, अनादि दुःख दारिद्र दूर थाय, निज निधिनो अधिकारी थाय, एम मति श्रुतखंडे अंशे अंश निर्मलता वधतां वधतां परम अवधि मांहे सकल पुद्गल

परमाणु आदि रूपी द्रव्य प्रत्यक्ष देखे, अने पुद्गल द्रव्यना केटलाक अनंत भावने प्रत्यक्ष जाणे. वली मनःपर्यव आवरण गये अढीद्वीप मांहेला संज्ञी पंचेंद्रिय जीवोना मनोगत भाव जाणे. एम ज्ञाननी निर्मलता वधते वधते क्षय उपशम ज्ञानवडे केवलज्ञानावरण पट तोडी पूर्ण परम प्रकाश पामे. एम हुं ज्ञानरुप छुं, अन्यरुप मारूं नहि, एवी जे दृढ प्रतिति, ने निज रुपे रहेवानी रुचि, तेने समकित कहिए. अने प्रत्यक्ष केवल स्वरुप तो सर्वे आवरण क्षय थये प्रगटे, पण सम्यक्त गर्जित शुद्ध सिद्ध स्वरुपनी प्रतिति ते परोक्ष ज्ञान कहिए. एम परोक्ष ज्ञान वधारते वधारते क्षय उपशम गुण वृद्धि पामी पूर्ण क्षायक भावने पामे. थोडा ज्ञानवाला केवी रीते प्रतिति करे ते कहिए छिये.

मारो दर्शन ज्ञाननो प्रकाश मारा प्रदेशथी उठे छे, जाणपणुं मारूं हुं पोते छुं, एवी रीते करतां आनंद वधे ते निर्विकल्प सुख छे. ज्ञान उपयोग आवरणमां गुप्त छे. ज्ञानीमां आवरण नथी. जेम सूर्यमां वादलां नथी. किरणो अने वादलां एक क्षेत्रे थयां छे, ते प्रकाशने रोके छे. तेम जेटला अंशे आवरण गयुं, तेटला अंशे ज्ञान पर्याय निर्मळ थया. एम ज्ञान, आवरणथी न्यारूं छे, तेज पोतानो स्वभाव छे. जेटलुं ज्ञान प्रगट थयुं, तेटलो आत्म स्वभाव खुल्यो, तेज आपापणुं छे. विशेष एटलुं जाणवुं के एक आवरण जवाथी जे ज्ञान खुले अने बीजा आवरणमां जइ अवराय; तेटलुं मेलुं रहे. पण जे आवरण मटे ज्ञानना अंश खुल्या अने ते खुलेला अंशो स्वरुपमां आवे तेटला निर्मल रहे; ते गुप्त केवल शुद्धता छे, पण प्रतितिमां शुद्ध परमात्म भावनी प्रतिति करी करी आनंद वधारीए. आत्मा शुद्ध भावनाथी निर्मल थाय ए निश्चय छे— (या मति सागति) एटले अशुद्धताने भोगवतां अशुद्धता वधे

अने शुद्धता जोगवतां शुद्धता प्रगटे. निज स्वरुप साक्षात् केवी रीते थाय ते कहीए ठीए

प्रथम निर्मळ भावनावडे संसार भावना छोडे. केवी रीते करे ते कहीए ठीए.—दृश्यमान रुपी जड पदार्थमां ममत्व अने राग द्वेष न करवो, अनित्यादि बार भावना भावबी वली मैत्री आदि चार भावना पण भावबी जरु पदार्थमां आपोपु माने सुख क्यांथी ? शरीरादिकमां आपोपु माने उलटी सुखनी हाणि थाय छे. राग, द्वेष, मोहभाव, भवभाव, अशाताभाव, तृष्णाभाव, अविश्रामभाव, अस्थिरभाव, दुःखभाव, आकुलताभाव, खेदभाव, अज्ञानभाव विगेरे परना अहंममत्वबके थाय छे. मात्र निज शुद्ध स्वभाव ज्ञानथी शांतभाव, विश्रामभाव, स्थिरताभाव, अनाकुलभाव, स्वतंत्र आनंदभाव, तृप्तिभाव, निर्वृत्तिभाव, निष्कामभाव, अकंपभाव, उदासिन्नभाव, समताभाव आदि निजात्मभाव उपादेय छे. शुद्धात्म परिणतिमां आत्म भाव छे निज परिणतिमयी हुं हुं, ए भावे आत्मता प्रगटे हुं परिणामी, परिणाम माहरा, परम क्षमामय, परम मार्दवमय, आर्जवमय, मुक्तिमय, तृप्तिमय, सयममय, शुद्धतामय, आकिंचनमय, सत्यमय, अढार हजार भेदे अब्रह्मभाव टाली शुद्ध ब्रह्ममय हुं हुं, एम निज पदनी अस्तिता यथार्थ भावी निज पद परिणामी रहेवुं. स्वपरिणामी थये स्वपद प्रगटे अहिंआं काय चेष्टा नथी वचन उच्चारनुं काम नथी, मनना शुभाशुभ संकल्प नथी, आत्म स्वभावमां मग्न थइ आत्म परिणाम परभाव मलिनताए मलिन थवा देवो नहि, एम चित् परिणतिनो विवेक राखवो. निज परिणति निज रुपे रमाववी. मन छुराए विवेक होय पण पारणति चित् स्वरुपमां रमे तिहां मन वाजू रहे; केमके मन ते पर छे ज्ञान परिणति निज वस्तु छे. पोतानुं शुद्ध परमात्म स्वरुप भावतां परमात्मपद प्रगट थाय छे, तिहां मन प्रथमथीज

निर्वृत्ति पामे छे. ज्ञान परिणति शुरू थये अनात्म परिणति मटी आत्मा शुरू थाय छे. आत्माए निज आत्म परिणाम करवो एज कृत कृत्यपणुं छे. योगीश्वरो पण एटलुंज करे छे. प्राणायाम, ध्यान, धारणा, प्रत्याहार, समाधि आत्म शुरूता करवानेज माटे छे. परिणाम स्वरूपवाला करवामां अनंत सुख थाय. अनुपम पदमां सरस एकता थइ उपयोग शुरू थयो, सहजानंद पदनो स्वाद लीधो शब्द, रुप, रस, गंध, स्पर्शादिकनी जोगववानी इच्छा, तृष्णा कामना मटी. निज परिणाम निर्मळ कर्या विना पोते परमेश्वर संसारचक्रमां भव भमरी भमे छे पोताना परिणाम स्वरूपानंदी थये परमेश्वर कहेवाय, एवो प्रभाव सहज स्वरूपानंद परिणामनो छे. अपूर्व लाभ थयो, ते परिणाम सहेजानंद स्वरुपमां केवी रीते लागे ते कहे छे.

वर्णादिकनी ग्राहकता, व्यापकता, रमणता, कर्तृता, भोक्तृता आदिमां जता परिणाम वारी सहज ज्ञान, दर्शन, चरणानंदी करी स्थिर राखवा. वार वार स्वरूप निर्धार दृष्टी गोचर करी मग्न रहे, ज्ञान बाहिर परिणाम न करे, अखंड चेतना तरंगमां परिणाम लीन राखे, अमरपुरी निवास निज बोध प्रकाशथी निश्चल, अचल, अतुल, अमित, अखंडित, अनंत गुण रत्न मंडित, ब्रह्मंडनो प्रकाशी थइ रहे. त्रिलोक भूप परमात्म पद पामी पावन रहे. यथार्थ ज्ञान परमार्थ निदान आराधीए, एम निर्वाण पद आराधीए, अलख, अविकारी, कर्म रोग अपहारी, बाधा रहित, महंत, भव्यनो आधार, भव पारनो करणहार, जगत् सार एवो शुद्धात्म बोध आराधीए. सर्वे तीर्थंकरोए शुद्ध बोध आराधवो कह्यो छे माटे क्यां सुधी कहीए? शुद्ध बोध एज परम सार छे. जेमां विपरीत करणी भव दुःखनी भरवावाली नथी, एवो बोध आराधीने अनंत जीव शिव रसी थइ आनंदपुरीमां अनंत आनंदनो विलास करे छे. फरी स्वपद

छोडी कदापि बाहेर जता नथी. निज पद निवास निजमां छे. मृग मृगमदस्थान जूली बाहिर ढुंढवाथी दुःख पामे छे, तेम चेतना सुखस्थान जूली बाहिर भटकवाथी सुख विलास न पामतां दुःख दोहीलां पामे छे. परम गुरु कृपाथी चेतना सुखस्थान पामी निजानंद विलासी थइ शाश्वत विलास करे छे. ज्यांसुधी परपदमां आपो जाण्यो, त्यांसुधी रागी थइ अनंत आकुलता भोगवे छे. निर्मळ ज्ञान, दर्शन, चारित्रथी निज पद अभेद जाणी तुरत परमत्वनी हाणि थाय छे एटले अनंत क्लेशथी निर्वृत्ति अने परमानंदनी प्राप्ति थाय छे जेम कोइ राजा मद्यपान करी निंद्य स्थानमां रति मानी रह्यो छे मद उतरे राजपदनो विवेक आवे, आपणो राज्य अधिकार संभाळे तेम आत्मा पर पदना अहंपणा रुप मद पीने निज राज्याधिकार भूल्यो छे. पोताना अधिकारना ज्ञान रुप अमृत पान कर्ये पर अहंपणा रुप मद उतरे, विवेक आवे, आपणो राज्याधिकार संभाली स्वतंत्र सहजानंद विलासी थाय. कोइ प्रश्न करे के " ज्ञानतो जाणपणा मात्र छे, तो पोताने कोण जाणे ? तेने कहिए जेम सूर्य पोताना अंगने अने पृथ्वीने प्रकाश आपे छे, तेम ज्ञाननी स्वपर प्रकाशक शक्ति छे पोते पोताने अने परने जाणे छे. माटे हुं ज्ञान छुं, मारा ज्ञानवडे हु मारी अनंत शक्तिने अने स्वपर प्रमेयने प्रमाण करवावालो पोतेज ज्ञान रुप छुं, एवो ऊटजाव तेज समकित छे आपणो चेतना प्रकाश मोह विकार पामी मलिन थयो छे, पर वर्णादिकनी लेश्याये लेसाणो छे. ते स्वपर द्रव्य, गुण, पर्याय, लक्षण भेदविज्ञाने भिन्न भिन्न जाणी पर गुण पर्याय लक्षणथी उदासिन वृत्ति करी, स्वद्रव्य गुण पर्याय लक्षण अभेदपणे आपणा जाणी स्थिर उपयोगे निर्विकल्प ध्यान करे एज मोक्ष मार्ग छे. आत्मानी शक्ति पर ममत्व वडे मेली थयेली छे, पण नाश थइ नथी जेम कोइनो पुत्र बजारमां गयो छे कोइए तेनी माने पुछयुं के " तमारे

पुत्र छे?" तो तेणे कह्युं "हा मारे पुत्र छे." बजारमां गयो माटे नथी एम न कहेवाय. तेम आत्मानी शक्ति लेश्यावडे मलीन थयेली छे, पण नाश थयेली नथी. पोताने पोताना रूपे जाणवाथी पर द्रव्यनुं ममत्व अने लेश्या नाश पामी निर्मळ गुण पर्याय विलास प्रगट थाय छे. हे चिदानंद! तहारूं चरित्र आश्चर्यकारी लागे छे पोतानी दर्शन ज्ञान शक्ति हती अहति करी राखी छे. जेम लोटन जमी (जटामांकी) देखी बिलाडी लोटे छे, तेम निज पद भुलेलो जीव पुद्गल वर्णादिक देखी मोह पामी भवचक्रमां लोटे छे. अंतर-मुहूर्त्त अखंड समये शुद्ध नये शुद्ध स्वरुपमां स्थिर थइ अनुभव आस्वाद ले, तो भव भ्रमण मटे, त्रणलोकनुं राज्य पामे. आत्माए चोराशी लाख जीवायोनिमां अनेक स्वांग लीधा पण पोते चेतना रुप छे. स्वांग रूपे थयो नथी. जेम कोइ काष्ट पाषाणनी पुतलीने साची स्त्री मानीने तेने बोलावे, चाहना करे, तेनी सेवा करे, पढी जाणे ए निर्जीव छे त्यारे पसताय. ए प्रमाणे पोतानुं स्वरुप अण-जाणतो जड शरीरादिकने सेवी, तेना संजोग विजोगादि दुःख भोगवे छे. एमज निज स्वभावनो साचो बोध थये विभाव छूटे, दोरडीमां सर्प नथी, अंधकार वशे सर्प मनाय छे. तेम पुद्गल वस्तुमां आपणुं कांइ नथी. आखा समुद्रना पाणी वडे धोवाथी पण देह पवित्र थाय नहि, तेने पवित्र राखवा चाहे छे, ते जूठोज खेद करे छे. ठीकरी पकडी रुपीउं मानी तेने वापरी सुखी थवा चाहे छे पण ठीकरीथी वस्तु कांइ आवे नहि. तेम पुद्गल वडे सुख वस्तु आवे नहि. पोतानी भूल तज्याविना पोतेज पोतानी हांसी दुनीआमां देखाडे छे. अनंत ज्ञाननो धणी भूलथीज दुःख पामे छे. जे हांसीथी शरम पामे ते फरी हांसी जेवुं काम करे नाह. आत्मा परम पूज्य परम पवित्र छे. जेनी वात करतां अनुपम आनंद आवे एवुं निज पद छोडी, जे वडे अनंत पुद्गल परावर्त्तन करवां पडे एवुं परपद

बहु रुचिथी सेवे छे. एवी हठीली टेव न छोमवी ए केवी मूर्खाइ छे ? जेम कोइ सापने हार जाणी गळामां नांखे तो दुःख पामे, एमां कांइ आश्चर्य नथी. तेम परपद सेववाथी दुःख थायज थाय ! ! जेम एक नगरमां ऽष्टीबंधवालो पुरुष आव्यो, राजाना नजीकमां रह्यो. कोइ वखत राजा मरण पाम्यो ए वात कोइने जाणवा न देतां राजाने ठेकाणे काष्टनो राजा बनावी बेसाड्यो. अने मुएला राजाने घणो लांडो दाटी बेमालुम जग्या करी. हवे कोइ राजाने राजकाज संबंधी कांइ वात करे, त्यारे पेलो ऽष्टीबंध नर जुवाव दे काष्टना राजाने लोक साचो जाणे. राज्य उपज ऽष्टी बांधनार नर जोगवे. एटलामां वननी वुट्टी माथे राखेली छे एवो कोइ नर त्यां आव्यो, तेने देख्युके लोको अज्ञानथी निर्जीव काष्टना राजानी सेवा करे छे, उपज धूतारो खाय छे, एम जाणी लोकोने कह्युं के "हे मूर्खाओ ! निर्जीव राजानी सेवा करे तमोने शो फायदो छे ? ए राजा तमारूं रखोपुं करी शके एवो नथी." ते लोकोए समजी काष्टना राजानी सेवा छोडी तेम समकित वुद्दि जेनी पासे छे, एवा श्री गुरु भवि जीवोने चेतावे छे के " जडनी सेवा छोडी चिदानंद राजाने सेवो, एटले परम सुखी थशो." ते गुरुना वचनना पसाये चिदानंद राजाने जाणे, ते जम सेवाथी वृटी सुखी थाय एटले गुरुनां वचन विनय सहित आदरे ते सुख पामे छे जेम कोइने घेरे बालक अवतर्युं, ते बालकने जन्मथी आंख उपर चर्म पमल हतुं कोइ सुज्ञ वैद्ये देखी तेने कह्युं तारी आंख अदरथी निर्मल प्रकाशवान छे, जो तारी मरजी होय तो पमल दूर करी आंखनो प्रकाश खुल्लो करीए त्यारे ते बालक बोल्यो के " तमारी महेरवानी " पछी ते वैद्ये मूल्यवान दवा अंजन करी, चर्म पडल दूर कर्युं, आंखनो प्रकाश खुल्यो स्वपर रुपने देखवा लाग्यो. तेम आत्मा अनादिथी ज्ञान दर्शन ऽष्टीवत छे. कर्म पमल पण अनादिनुं छे. अदर देखवा जाणवा रुप निर्मल शक्ति छे. गुरु

महामूल्य प्रवचन अंजन करी, अज्ञान पडल दूर करे छे. शीपमां रुपुं नथी, मृगजलमां जल नथी, काच मंदिरमां बीजो श्वान नथी. मृगनी डुंटीथी वेगली कस्तुरी नथी, नलिनीनो सूडो कोइए पकड्यो नथी, वानरनी मूठी कोइए पकडी नथी, कूवामां बीजो सिंह नथी, पडछायामां पुरुष नथी, मात्र मिथ्या भ्रमवडे दुःख उपजे छे. तेम पर अहं ममत्व वडे जीव अनादि दुःखी थइ रह्यो छे, स्वरुप जाणी आदरे सुखी थाय. आत्मा पोतानुं शुद्ध स्वरुप जाण्या विना सुख माटे धन संचय करे छे, देशावर भटके छे, विषय भोगना पदार्थ वसावे छे, देवादिक सुखने चाही अनेक श्रम करे छे, पण साचुं स्वतंत्र सुखतो निज स्वरुप जाणे थाय. मोह ठगारे संसारी जीवने पर द्रव्यमां अहं ममत्व रुप अविद्या फेलावी छे. श्री गुरु ठगाई नाश थवाने माटे शुद्ध मंत्र बतावे छे के " (नो अहंममेति.) " ए मंत्र जे हमेश जपशे ते पोतानी निधि चूकशे नहि. वली श्री गुरु जगत् जनने पोतानुं सत्तानूमिनुं घर बतावे छे के " तुं पोताना निर्मल उपयोग वडे आपणा घरमां रही निज निधिनो विलास कर, ताहारी हरामजादी वडे तुं पोतानुं राज्य भूली कोडी कोडी जाची कंगाल थइ रह्यो छुं, ताहारूं निधान ताहरा पासे छे, तुं संभालतो नथी, तेथी दुःखी थयो छुं. जेम कोइ चंपो गोवाळ धतुरानुं पाणी पीने पोताने भूल्यो पोताना घरनी आजुबाजु फरतो पोताने शोधे छे, घर पाछल रही पोकार कर्यो के चंपो घरमां छे? त्यारे तेनी स्त्रीए कह्युं " तुं कोण छे ? त्यारे तेने शुद्धी आवी के हुं पोते चंपो छुं " तेम श्री गुरु आतमता बतावे अज्ञानता रुप धतुरानुं विष उतरे सुखी थाय. श्री गुरु वचन सुधारस पीधा विना विभाव दुःख फंदमां सुख मानी, दुःख भोगवी रह्यो छे. गुरु वचनामृत पीधे मोह मद उतरे, सुखी थाय, पछी परतरफ देखे पण नहि. निज स्वरुप देखतांज त्रण लोकनी ठकुराई पामे. निज स्वरुपमां अनुभव दृष्टि अमृत

धारा वरसे छे. अहिंआं पर स्वरूप अविद्यानो अवकाश नथी; पण अनादि विभाव वशथी जेम सोनानी खाणमां सोना साथे अनादि उपल संयोग छे, ते अग्नि संयोगे उपल भिन्न पडे पछी सोनामां मलिनतानो संयोग नथी. तेम निर्मळ ध्यानाग्निमां मोहमल भस्म थाय, आत्मा कंचन समान निर्मळ थाय, शरीरना ममत्व वडे क्रोधादिक सर्वे कर्म प्रकृति, मन, वचन, इंद्रिय अने कुटुंब परिवार विगेरे सर्वेने पोताना मानी, तेना रक्षण अर्थे अनेक प्रयत्न करे छे सुवर्ण, हीरा, मणि, माणेक, मंत्र, जंत्र, कला, विज्ञान, रिद्धि, सिद्धि जे जे चौदराज लोकमांहे मनोज्ञ भोगना पदार्थो ते सर्वेनुं ममत्व करी कर्मपरिणाम साथे बंधाइ रह्यो छे, मन वचन कायानी क्रिया पोतानी जाणी ए माहरां, हुं एहनो, ए हुं, एवे परिणामे त्रिकालवर्त्ती सर्वे ज्ञेय जाणवा देखवानी पोतानी शक्ति आवरी राखी छे. ज्ञानादि शक्ति उलटी परिणमावी राखी छे. तेज अज्ञानादि विकार थयो, ते वडे परने आप रूपे देखे छे. पोताने पर रूपे देखे छे, चेतनने अचेतन, अचेतनने चेतन, विभावने स्वभाव, स्वभावने विभाव शत्रुने मित्र, मित्रने शत्रु, अहितने हित, हितने अहित, ज्ञेयने ज्ञान, ज्ञानने ज्ञेय, अकारणने कारण, कारणने अकारण, कारणने कार्य, कुगुरुने गुरु, गुरुने कुगुरु, देवने अदेव, अदेवने देव, धर्मने अधर्म अधर्मने धर्म, एम अनेक विपरितता तथा बंने पक्षने समान जाणवापणुं थयुं छे; अने जेटली चौदराजलोकमां सजीव अजीव मिश्र वस्तु छे ते पोताने आदरवा लायक जाणी तेनो आचरण परिणामी थइ रह्यो छे. काय चेष्टा पण ते विषे करे, वचन आलाप पण तेने माटे करे, शुभाशुभ संकल्प पण तेज माटे करे, समय मात्र पण सहजानंद समाधिनो अवकाश राख्यो नथी. सुख क्यांथी होय? पोतानी सर्व शक्ति परमांहे वापरी आत्मवीर्य उलटुं परिणमावे छे. स्वरूपाचरण करवा वीर्य छेक निर्बल थयुं तेथी आत्माना अनंत

गुणो सर्वे निर्बल थइ परिणम्या छे. स्वस्वरूपे परिणमवानुं बल निर्बल थइ रह्युं छे, एम सर्वे गुण विकार भावी थया छे. सहजानंद समाधि रूप सुख गुण छे ते पुण्य पाप रुप विकारी थयो ते विकारने भोगव्यां करे छे. एम गुण गुणनी अनंत शक्ति सिद्धांतमां कही छे ते सर्वे विकारी थइ रही छे; ते ग्रंथांतरथी जाणी लेजो. पण सत्ता वडे सर्वे गुण अविनाशी ढत्तीमां रह्या छे. सत्ताए सर्वे गुणने शाश्वता राख्या छे. शुद्ध स्वरूप जाण्याविना परने पोतापणे मानी कारक परिणति उलटी परिणमावी छे. जिन वचन हृदये धारी पर कारकता छोडी कारक चक्र सुलटुं परिणमावे परिणति सुलटी परिणमे. मिथ्यात्व, अविरक्तता, कषाय, योग, प्रमाद रूप परकारणता तजी सम्यक् ज्ञान, दर्शन, चरण, निज कारणता ग्रहे, सकल दुःख मटे, स्वतंत्र समाधि पामे. चेतन शक्ति प्रकाश अनादिनो छे एवो उपयोग-धारी आत्मा कर्मे करी स्वरूप आवरी संकोच विस्तार धरे छे.

आत्मा आकाशवत् केवी रीते संकोच विस्तार धरे? पुद्गलमां संकोच विस्तार शक्ति छे, पुद्गलमां व्यापकता करी ते संकोच विस्तार-ने पामे छे. "सम्यक् दर्शन ज्ञान चारित्राणि मोक्ष मार्गः" एम सिद्धांतमां कह्युं छे. एटले सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान, सम्यक् चारित्र, ए मोक्ष मार्ग छे. जेटली जेटली दर्शन, ज्ञान, चारित्रनी निर्मलता वधे तेटलो तेटलो मोक्ष मार्ग आगल वध्यो. पूर्ण निर्मल-ताए पूर्ण पद पामे. ते मोक्ष मार्ग बे प्रकारथी कह्यो छे. एक सविकल्प मोक्ष मार्ग, बीजो निर्विकल्प मोक्षमार्ग, भेद ज्ञान वडे स्वपर स्वरूपने भिन्न विचारी परस्वरूपथी उदासिन्न रही निज स्वरूपमां मग्न थवुं ते सविकल्प मोक्ष मार्ग कहिए. अहं ब्रह्मास्मि एटले हुं पूर्ण ब्रह्म सिद्ध स्वरूप छुं, एवो निर्विकल्प आनंद आवे ते निर्विकल्प मोक्ष मार्ग कहिए. निज ज्ञाने निज ज्ञायकता शक्ति जेम जेम जाणे तेम तेम ज्ञान शक्ति खुली वर्द्धमान धारा थइ पूर्ण

लोकालोक ज्ञायक शक्ति प्रगटे निज ज्ञाने निज अखंड ज्ञाकयता शक्ति वेदे (भोगवे). पर विभाव रस उतरे. स्वतंत्र निज निर्मलानंद-मांहे स्थिर रहे अनादि जीवनो ज्ञानगुण आवरणना क्षयउपशम थकी क्षयउपशमी ज्ञानगुण प्रगट छे. क्षयउपशमीवीर्य पण प्रगट छे. ए ज्ञानवीर्यवडे पोते पोताना सम्यक् स्वरूपने जाणे, अने सम्यक् स्वभावाचरण करे तो एज गुण मोक्षमार्ग रूप अने एज क्षयउपशम वीर्यवडे परभाव आचरण करे तो एज ज्ञानवीर्य कर्मबंध अवस्थाने पामे, एज गुण सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान, सम्यक् चारित्र रूप थइ स्वस्वरूप आचरण करे तो सकल कर्म क्षय करी सदा मोक्षरूप रहे. जेम जेम दर्शन, ज्ञान, चरणगुण निर्मल थता जाय तेम तेम मोक्षमार्ग वधे. माटे प्रमाद छोमी एज आदरवुं जेम जेम आत्मगुणनी निर्मलता, दृढता वधती जाय तेम तेम मोक्ष मार्गनी सिद्धि थाय. पोतानी परिणतिथी पोते भवसमुद्रना पारने पामे. पोतेज विभाव ग्रहणथी संसार दुस्तर करी राख्योछे, संसार अने मोक्षनी करवावाली परिणतिज छे पर परिणति एज संसार, निज परिणति एज मोक्ष. सद्गुरू संगे निज परिणति पामीए, विषम भव-भ्रमण भयमटे, परमानंद प्रगटे. माटे आर्त्त रौद्रादि अन्य कुध्यान निवारी धर्म, शुक्लध्यान अभ्यासी निज शुद्ध परमात्मपद संभाळी स्थिर थाय. परमानंदपद ताहरूं ताहरी ज्ञानज्योतिमां छे संभाळी सुखी था जग पदमां आपो माने तने सुख नथी तुं ताहरूं पद संभाषुं तो जड वस्तु ताहरो पक्षो पकडती नथी. अनादि पर वस्तुमां ममेद करूं तुं एथीज नाशमेद थवुं पडे छे. जेम इंद्रजाल जेवी वस्तु इंद्रजालना हाथी, घोमा, स्त्री, स्त्रीना हावभाव विगेरे देखी कोई खुशी थाय, पण एमां रंच मात्र साचुं नथी. मात्र ते वखे निज निधि भूले, भव भ्रमण करे. एवा जूठ भ्रम भावमां झाताए, मग्न थवुं ठीक नथी. मनुष्यादि पुद्गल पर्याय अथिर अशुचिने

खान, पान, चूआ, चंदन, वस्त्र, आभरणे करी शोभावबा यत्न करे, जूठमां मग्न थई थई सुवाथी जीवतो सगाई करे तो कार्य केम सुधरे? जेम कुतरां सूकां हाडकां चावे, पोताना गाल तालवुं मसोडानुं मांस फाटी रुधिर निकले तेनो स्वाद लई मग्न थाय. एम मूर्ख जेमां दुःख हाणी, खेद, प्रत्यक्ष ग्लानि छे एवी कामरति रीत आदरी दुःखी थाय छे. कर्म बंधमां सुखकंद मानी दुःखी थाय छे. एवा जड़ भोगथी छोडाववा कोई सत् पुरुष प्रेरणा करे ते अनिष्ट लागे. चोराशी लाख जीवायोनिमां भटकतो अनेक रूपने पोतापणे मानी परवस्तु ग्रहण करतो, चोर बनी दुःख दंड सहेतो, आक्रंद करतो रहे छे; पण ज्ञायकता रूप निज अंग जाणे सुखी थाय. दुःख दंड सहेतां पण परग्रहणता छोडतो नथी. पोते परम पुरुष त्रिजगनाथ पोतानुं ज्ञानानंद सुख भूली दुःखी थायछे. चेतना निधान पोतानुं पोतानी पासे छे तेने जाणतां सुखी थाय. कोइ पुरुषे कोइने पूछ्युं तुं कोणछे? ते बोल्यो "हुं मडदुं छुं" पेले पुरुषे कह्युं बोलेछे ते कोण? तो कहे के "हुं नथी जाणतो" तो नथी जाणतो एवुं कोणे जाण्युं? जे जाणनार तेज पोते जीवतो छे, तेम शरीरने पोतापणे जाणनारो पोते पोतानी ज्ञायकता सहित त्रिकाल जीवतो छे. जड़ पदमां आपो मानवो प्रत्यक्ष मिथ्यात्व अने पोताने दुःखदाई छे जेम कोइ पुरुष मदिरा पी उन्मत थई पुरुषाकारे पथ्थरना स्थंभने देखी कहेके आव मारी साथे लड, पछी ते पुरुषे ते स्थंभ साथे बाथ भीडी तेने पाडवा चाह्यो. ते पोताज उपर आवी पडयो. पछी कहे तुं जीत्यो हुं हार्यो. हवे मने छोड. एवी पोतानी असत्य भावना पोताने दुःखदाई थई. तेमज पर द्रव्यमां ममत्व करवाथी ज्ञानावरणादिक आठ कर्मनो बोजो पोतापर आववाथी पोतेज दुःखी थाय छे. भेदज्ञाननी शक्तिवडे विवेक ग्रही स्वपरना अंश अंश भिन्न भिन्न करी निज सर्वांश ज्ञानानंदमय जाणी अचल अकंप रहेवाथी शाश्वत आनंद विलसे. तें पोतेज

पोतानुं स्वरूप अणजाणतां परद्रव्यमां अहं ममत्वरूप असत्यभावना करी नाहक खेद पेदा कर्यो. तें पोतानुं स्वरूप न संभाल्युं त्यांसुधी पोते पोतानो शत्रु थयो. जो शुद्ध नये स्वरूप संभाली स्थिर रहुंतो तुं पोते पोतानो मित्र तुं. तुं अचेतनने पोता सरखो करवा चाहुं तुं; ए जरूर पोतानो स्वभाव ठोडी ताहरी इच्छाए न प्रवर्ते. कोई द्रव्य पोताना गुण पर्याय प्रमेय मर्यादा ठोडी अन्य द्रव्यना गुण पर्याय प्रमेयने न ग्रहे तो मिथ्या भावना करी, पोताने दुःख दाता केम थवुं? पोते पोताने सुखदानी था. तुं पोतानो अने षट्कायाना जीवोनो अनंत क्षेमंकर था. अनंत कालथी स्व अने पर जीवना द्रव्य भाव प्राणनी हाणी करी दुःख समुद्रमां दुःखी रह्यो; हवे दर्शन ज्ञान चरणमयी निज अभेद शुद्धात्म भावमां उपयोग अकंप राखी स्वपर जीवनो क्षेमंकर था. तुं पोते पोताने कर्म फंदमां न नाखीश. ए विना सुख सिद्धि न थाय, विना विचारथी अनंत चतुष्टय (ज्ञान, दर्शन, सुख अने वीर्य) अमृत न जाण्यां, न स्वाद लीधो, वारंवार मरण पाम्यो, हवे अनंत चतुष्टय जाणी अन्यासी स्वाद लेई सुखी था जडनी शक्ति नथी के तने कोई हरकत करी शके. ताहरी अविद्या वडे तुं दुःखी थयो. पोतानी शुद्ध शक्ति वडे अविद्यानो नाश करी सुखी था ते परमां अहंपणुं धार्युं एज अविद्या ताहरे गळे पडी. हवे ऊतावलो स्व पर भेद विज्ञान विद्या वडे अविद्याने तुरत नाश कर. आयुष्य चपल छे हाल श्री गुरुना परमअमृत समान वचन तुं पाम्यो पछी तने चेतावनार मलवो मुश्केल छे. ताहरा निज स्वरूपमां परम ऊंच पद छे ते संभाल. नीच अने नादानीपणु छोड, निज ज्ञायकता एज उपादेय छे; ए शिवाय सकल परभाव परद्रव्य गुण पर्यायनो आदर हेय छे. निज आनंदना एक अंशना तोल आगल सर्वे इंद्र चक्रवर्ती आदिनुं सुख तृण मात्र पण लेखे नथी. एकवार निज ज्ञानानंद सुखमां मग्न थाय तो फरी

कदी परतरफ न देखे. स्वरूप समाधि एज संत पुरुषोनुं चिन्ह छे, ज्यां रागादि अंश रहेतो नथी. जेम आकाशमां फूल न होय, अनादिना देहभोगाभ्यासनो नाश निज अनुभव प्रकाशथी थायछे; वचन अने व्यवहारथी थतो नथी. माटे प्रमाद छोडी ज्ञानानंद अनुभवमां लीन थवुं. ए शिवाय सर्वे मोह विकार छे. अनादि आकुलता विशुद्ध बोध वगर मटे. नरभव वारंवार मलवो मुश्केल छे माटे बोध निर्मल करवो एज सार छे. सद्गुरुनो योग मलवो अने शिव मार्ग साधवो, मनुष्य भव शिवाय दुर्लभ्य छे. माटे वारंवार कहिये छीये एवुं तो बालकने पण वारंवार कहेवुं न पडे. तमे जाणता छतां पण पोताना हितने न विचारो ए मोहनुं महा प्रबलपणुं छे; जरूर स्वरूपमां आपो मानी पोतानुं जाणयुं छे. निज ज्ञायकता सुख समुद्रने पामी अमरपुरिनुं राज्य करो, चेतना राजधानीनो विलास करो. जेम कोई मडदाने वस्त्र, आभूषण, अत्तर, विलेपन करीने जाणे हुं सुख विलसुं छुं. तेम मूढ शरीरनी सेवा करी पोते जूठुं सुख माने छे. जेम साप कोईने मसे अने विष कोईने चढे तो आश्चर्य मानीये; तेम जड ऊपर जे जे विकारो थाय ते आत्मा पोताने माने ए मोटुं आश्चर्य छे. जडनी क्रियाने तमे पोतापणे मानी अने पोताना ज्ञानानंदने भूलो ए जेवी बीजी मोटी भूल नथी. देह विष्टा, मूत्र, सप्त धातु, सप्तमल, बहुरोगोनुं स्थानक, बहुदुःखदायी, तेने संभाली संभाली तेमां मूंझाई पोतानी सहजानंद राज्यधानीने न संभाली ए भूल हवे करवी लायक नहि. तमारा पाछल जन्म, जरा, मरणादि अनादिनां चाल्यां आवतां छे, तमे मोटा पुरुष सरखा बनवा चाहो छो के जे अमारी साथे थया तेने छोडवा नहि; पण ए देह तो पापरूप छे एने ग्रहण करी राखवाथी महंतपणुं न थाय. निज रिद्धि संभाले महंतपणुं थाय. माटे एवी अनीति छोडी निजनिधि संभाली सुखी थाउं. इंद्रिय चोरोने तमे सुख दाता जाणी पोषो छो पण ए तमारा

ज्ञानादिक रत्नने चोरी, वगाडी तमोने दरिद्र वनावी, जीखारी करी जवोजव जटकावेठे. तमे पोतानुं पुरुषत्व संजाली ज्ञान खड्ग हाथमां लई इंद्रिय चोरोने तमारी तरफ न पेसवा दो. गफलत न राखो ज्ञान, दर्शन, चरण रत्न अनंत, अपार तमारा सत्ता जंडारमां अखंड, अतूट जर्यां ठे. तमे पोतानो आत्मअधिकार संजालो, अन्य अधिकारी थवा न इच्छो. अन्य तरफथी तमारे कांई सुख लेवानुं नथी. पोतानी सत्तामूमिमां सुख समुद्रठे ते सुख समुद्रनी लहेरे सदा आनंदित रहो. श्री गुरुए परम कृपा करी तमने सुख अधिकार वताव्यो हवे शामाटे दरिद्र रहोठो? पोतानुं पुरुषत्व ना चूको. अचेतन, अपावन, अथिर, आपणी ईच्छा प्रमाणे न रहे एवी पुद्गल परिणतिनी संगत, ममत्व, प्रीति, आदर, आसंगो, मनोरथ, कामना, मूर्छा, दुःखदाइ जाणी वेगलेथी ठोको, चैतन्यदीपक सदा शाश्वतो ठे. अन्य अन्य पर्याय धरवाथी न विणसे. द्रव्यार्थिक नये सदा शाश्वतो ठे स्वगुण पर्याय अनेदपणे एकमां जाणी निर्मल ध्याने स्थिर रहो समुद्र तरंगेकरी हाणि वृद्धि करे तो पण समुद्रपणे एक अखंम ठे. तेम आत्मरुप पर्याये करी हाणि वृद्धि करे पण आत्मा एक अखंड ठे. स्फटिक मणि लीला राता रंगेकरी लीली राती जासे, पण निज स्वजावे उज्वल ठे तेम आत्मा शुजाशुज परिणामे कर्ममय थाय पण चेतना स्वजावे एक अवाधित शाश्वत ठे पाणीउपर सेवालनी पेठे हे चिदानंद! तुं अंतर शुद्ध तुं. ताहरी शुद्धता संजाल, पर रस तने केम मीठो लागे ठे? जेथी संसार चक्र ज्रमण करवुं पडे ठे जेम कोई पुरुषे एक सुना नगरमां प्रवेश कर्यो त्यां चोराशी लाख घर ठे ते मांहेला एक घरमां प्रवेश करी रह्यो ते घरनां जींत आदि पडे, खरे एक कांकरी पण पडे तेने श्रम करी करी सुधारे, तो पण आखर ते घर पुरुं पडे, वली बीजा घरमां जाय, त्यां तेने सजाले एम चोराशी लाख घर जमे. तेम चोराशी लाख जीवायोनिरुप घर ज्ञान अने सुख

शुन्य, वली दुःख भरेलामां भमतां हजी पण तने खेद, शरम आवती नथी ? सद्गुरुए चेताव्या छतां पण शुं एंठवाडनी लालच नथी छूटती ? हवे गफलत न राख. वाह ! ताहारी चतुराई ! के पोताना माटे दुःख संग्रह करी राखुं छुं, जेम ते चोराशी लाख घर फरवावालो ते घरमांथी कांइ भागे खरे तो रुवे, विलाप करे, दीन थई परतंत्र थई फरे. जो पोताना सहजानंदमय सत्ताभूमिरुप घरमां प्रवेश करी रहे तो एवी विपत्ति सहेवी न पडे अने शाश्वत परमानंद विलास भोगी थाय. सत्ताभूमि नगरमां अनंत चेतना वस्ती छे, अनंत सुख साम्राज्य छे, ए नगर कोई काले सूनुं अने सुख रहित न होय त्यां ताहरुं राज्य छे. ते तुं तारो राज्याधिकार संभाली स्वतंत्र सुखी रहे. अहिंआं ताहरी अखंड आणा फरे, सकल पर द्रव्य पण जे समये जेम तुं जाणुं तेम ते वर्ते, एटले कोइने त्रास न देतां पण सकल द्रव्य ताहारी ज्ञान आज्ञा प्रमाणे वर्ते. फरी जड पदार्थनुं काम न पडे. भव भ्रमण करवुं न पडे. आनंद समुदाय पामी सदा सुखी रहे. आत्मा पोते परमात्म पुरुष छे तेनी निज परिणति अनंत महिमारुप परमेश्वर पदनी रमवावाली तेज मूल पुरुष प्रकृतिना विवेकरुप कल्पवृक्ष तेनुं निजानंद फल तेनो तुं रस, स्वाद लेइ सुखी था. जेम कोई राजाने पारको गढ लेवो मुश्केल छे तेम आत्माने पर पद लेइ राखवुं मुश्केल छे, पण निज सत्ताभूमि संभाली राखवी मुश्केल नथी. केमके आत्म सत्ताभूमिमां अन्य परद्रव्यादि चोरोनो प्रवेश थई शकतो नथी तो पोताना राज्य वैभवनी कोण हाणि करे ? तो पण तुंज पोतानी राज्यनिधि भूली पर सत्ताभूमि मांहे सुख लेवा प्रवेश करुं छुं. त्यां तुं मोह राजाना केदखानामां बंदीखाने पडी दुःख दंड सहुं छुं. अने पोताना ज्ञानादिक अनंत निधान थकी रीतो (खाली) रहुं छुं. जेम कोई उज्वल स्फटिक रत्न उकरडामां पड्युं छे. उकरडाना अशुचिवर्णादिकनुं भासन रत्नमां

सर्व अंगे श्याम तथापि रत्न सर्वांगे निर्मल छे. ते रत्ननो एक अंश खुल्लो देखी झवेरी अखंड रत्ननी शुद्धता जाणे तेने उकरडाथी अलग करी लेई, धोई ते रत्नना अमूल्य मूल्यने पामे. तेम आत्मा पुद्गल अशुद्ध पर्यायमां रूंध्यो छतो पण अनादि ज्ञान वीर्य गुण क्षय उपशम वडे समकिती आत्म तत्वने सर्वांगे शुद्ध जाणी, ग्रही भेदज्ञान वडे कर्म मेल दूर करी अमूल्य आत्मानंद पामे. रत्ननी शुद्धता उपर जेनी दृष्टि पडी नथी ते रत्नने न पामे तेम जेनी दृष्टि शुद्धात्म भाव उपर पडी नथी ते आत्मानी शुद्धताने पामे नहि ज्यारे गुरु वचने शुद्धात्मता उपर दृष्टि पडे त्यारेज ते पोतानी शुद्धता संभाली शुद्ध परमात्म पद पामे जेवी दृष्टिए देखे तेवुं फल थाय. शुद्ध आत्म द्रव्यमांहे अनंत ज्ञेय भासे छे पण आत्म द्रव्यनी ज्ञायकतामां ज्ञेय नथी ज्ञेयमां ज्ञायकता नथी. ज्ञायकता ते पोतानुं रूप छे, ज्ञेय पर रूप छे. ज्ञेय विणशे ज्ञायकतानो विनाश नथी. ज्ञायकता अमर निज रूप छे ते जाणी सदा अमरपद भोगी रहो. रागादि पोतानुं मूल रूप नथी ज्यारे पोतानी ज्ञायकतामां भासता जे ज्ञेय रूप पर द्रव्य तेना उपर ममत्व करे त्यारे ए हुं, ए मने, हुं एह, ए मारामां, हु एनामां, हुं ए वडे, ए मारावडे, ए माराथी हु एनाथी, एम चिद्विकार थाय छे, एण ज्यारे पोताने ज्ञायकता रूपे देखे त्यारे पोतेज दर्शन, ज्ञान, चरण रूप, अगर पंच परमेष्टी रुप पोताने जाणी शिव राज्यनो अधिकारी थाय. एम प्रथम पोतानी शुद्धतानी श्रद्धा थई तेज साधक अने शुद्ध स्वरूप ते साध्य. एम साध्य साधकता जाणीने शिव मार्ग साधे ते पूर्ण शुद्धता पामे. माटे साध्य साधकनुं उदाहरण देखाडीए छिये.

चेतना अनादि पर ममत्व वडे कर्मवर्गणा पुद्गल क्षेत्रमां पोताना आत्म प्रदेश एक क्षेत्रावगाही करी लोलीभूतपणे एकमेक थइ रह्यो छे, त्यां बहिरात्मा साधक अने मिथ्याभाव साध्य छे,

क्षयउपशम ज्ञानवीर्य साधक त्यां सम्यक्त्वभाव साध्य छे, ज्यां सम्यक्त्वभाव साधक त्यां शुद्ध सिद्धता साध्य छे.ज्यां शुद्धोपयोग साधक त्यां परमात्मभाव साध्य, ज्यां व्यवहार रत्नत्रिक साधक त्यां निश्चय अभेद रत्नत्रयी साध्य छे, सम्यक्दृष्टिने देशविरति साधक त्यां सर्वविरति साध्य छे; ज्यां देव, गुरु, शास्त्र, विनय, भक्ति, साधकता त्यां विषय कषायादि निवृत्ति, उदासिनता, मन परिणति निवृत्ति, स्थिरता साध्य छे, ज्यां शुभउपयोग व्यवहार परिणति निजात्म तत्वार्थे साधकता छे त्यां परंपराए मोक्ष साध्य छे; ज्यां अंतरआत्मा साधक छे त्यां शुद्ध परमात्मभाव साध्य छे; ज्यां समकिती जीव साधक त्यां ज्ञान, दर्शन, चरण साध्य; ज्यां भाव मोक्ष साधक त्यां द्रव्य मोक्ष साध्य; ज्यां क्षपक श्रेणि चढवुं साधक त्यां केवल ज्ञान, दर्शन, चरण, वीर्य, साध्य छे; ज्यां द्रव्यभाव संयम साधक छे त्यां साक्षात् मोक्ष साध्य छे, ज्यां परमाणु मात्र परिग्रह प्रपंच साधक तिहां ममता भाव साध्य; ज्यां मिथ्याविध्वंश करवो साधक छे त्यां मोक्ष करवो साध्य छे. एम साध्य साधक जाणी साधवाथी सहेजे शुद्ध साध्य सिद्ध थाय.

हवे साध्य साधकनुं विशेष लखीए छिए के ज्यां हुं नर, नपुंसक, नारी, देव, नरक, तिर्यंच, ए शरीर मारुं, एवो परमां अहं ममत्वभाव, निज आत्मस्वभावथी बाहिरना अन्य भावने पोतापणे जाणवुं, मानवुं, पर परिणति मांहे राग रींझ करी तन्मय थवुं एवा मिथ्याभावनेज साधे छे. एटले अज्ञानथी अज्ञान सधे, मिथ्यात्ववडे मिथ्यात्व सधे, रागादिक कषायथी रागादिक कषाय सधे, वधे, एम अशुद्धताथी अशुद्धता सधे. शुद्धताथी परम शुद्धता सधे. देश शुद्धताथी पूर्ण शुद्धता सधे. मिथ्या देव गुरु धर्म सेवे मिथ्यात्व सधे. सम्यक् देव, गुरु, धर्म, सम्यक्दर्शन, ज्ञान, चरण सेवे शुद्ध तत्व सधे. अंश दर्शन ज्ञान चरणरूप शुद्ध उपयोग परम दर्शन ज्ञान चरण उपयोगनो साधक छे. अंशवडे सर्वांश प्रगट थाय. आत्म शुद्ध-

तानो निश्चय परम प्रगट शुरूतानुं कारण छे. सम्यक् ज्ञानमां पूर्ण आत्मज्ञान अप्रगट छते श्रद्धा रुचिमां आश्रव बंध अजीव भाव हेय, संवर निर्जरा मोक्ष आत्मज्ञान उपादेय जाण्या, निज आत्म शुरू सिद्ध स्वरुप उपादेय प्रतीतिमां आणी अंतरंग शुरूतामां परिणति प्रवेश करे ते वखे प्रगट समवेत (समुदाय) समवाय (अभेद) शुरूता प्रगटे. प्रथम शुरू स्वरुपनुं श्रद्धान करी विषयो कषायो मन वचन कायानी योग प्रवृत्ति, धन, कुटुंब, परिवार, देवादिक ऋद्धि आदिमांथी रति उठे निवृत्ति पामी, परिणति ज्ञान दर्शन चरणादि रुप निज स्वरुपमां स्थिरता पामे, एम यथाख्यात् चारित्ररूप स्वभावाचरण पामी केवल ज्ञानादिक गुण प्रगटी अबाधित रहे. प्रथम समकितनां निःशंकितादि आठ अंग प्रगटे, समकितनी निर्मलता वधे. भेदज्ञान स्वपर विवेक वखे जिन वचनमां शंका न रहे. (१) कुप्रावचनिक मिथ्या वचनमां रुचि प्रतिति न थाय. (२) सिद्धांतमां प्ररुपेला एक पण वचननी अप्रीति दुगंछा न आवे वली साधु मुनिराजना मलादिकनी के कोईपण अमनोज्ञ वर्णादिकनी दुगंछा न आवे (३) शुद्धा शुरू देव, गुरु, धर्म परिक्षामां मूढता न रहे. (४) गुरुना गुणोने न गोपवे, वली पोतानी असमजथी जणाएला अवगुणने न प्रकाशे, पोताना गुरुने न तुपावे, वली अन्यना अवगुण अने पोताना गुण न प्रकाशे (५) पोताने अने परने सम्यक्त सजम आदिथी पमताने द्रव्यना गुणपर्याय लक्षण लक्षामां अभेदपणे जणावी बतावी स्थिर करे (६) देव, गुरु, साधर्मी उपर वात्सल्यताभाव राखे (७) शुरू नये सिद्धांतना रहस्यने जाणी, जणी जणावी प्रतिबोध आपी काव्यसुधारस आदिथी भवी जीवोने शासन रसी करे (८) एम आठ अंगवडे सम्यक्तभाव निर्मल करे देव, गुरु, धर्म, शास्त्र भक्ति सन्मान शुद्धातमभाव पामवानुं कारण जाणी करे. गुरु परम कृपाल शुरू नये आत्मस्वरुप जणावी कषाय कलुषतायी छोडावे गुरु, गमसहित शास्त्र (आप्त परम गुरुनां वचन यतः

तित्थयर समो सूरी, सम्मं जो जिणमयं पयासेई
आणाइ अइक्कंतो, सो कापुरिसो न सप्पुरिसो

अर्थ—जे सम्यक् प्रकारे जिनमतने प्रकाशे छे, ते आचार्य तीर्थंकर जेवा छे. पण जे जिन आज्ञा ओलंघी उपदेश देछे, ते सत्पुरुष नथी निंदनीय छे. अन्यासे भेदज्ञान रुप स्वपर विवेक पामीश्रे; माटे गुरु अने शास्त्रनी सेवा घणीज जरुरनी जाणी प्रमाद छोढी आदरे. नव नोगथी ऊदासिन्न वृत्ति करी शुद्धात्म नावमां मन स्थिर करे. शुन्न उपयोगना त्रण नेद छे. नक्तिरूप, क्रियारूप, गुण गुणी नेद विचार रुप. तेना सातिशय अने निरतिशय वडे ब नेद थाय. तेमां समकित सहित नक्ति, क्रिया अने गुण गुणी नेद विचार तेतो सातिशय छे, अने सम्यक्त रहित श्रे त्रणे नेद निरतिशय जाणवा. सम्यक्त सहित तो परंपरा नियमा मोक्षनुं कारण छे. अने सम्यक्त विना संसार सुख आपे; मोक्ष मार्गनी नजना छे. एटले परंपराए मोक्ष पामे अथवा न पण पामे; श्रेज शुन्नयोगवडे फरी सद्गुरु यागे सम्यक्त पामे तो मोक्षनुं कारण थाय.

सम्यक्त ज्ञान, दर्शन चरण साध्य छे तेमज समकिती जीव साधक छे. ज्यां क्षपक श्रेणि साधक त्यां यथाख्यात चारित्र साध्य, अने यथाख्यात चारित्र साधक त्यां अनंत चतुष्टय साध्य छे. ज्यां द्रव्यलिंग साधक त्यां नावलिंग साध्य. ज्यां मनोविकारविलय साधक त्यां परमस्थिरता साध्य छे. ज्यां शब्द साधक छे त्यां अर्थ साध्य छे. ज्यां अर्थ साधक त्यां ज्ञानानंद रस साध्य छे. ज्यां शुद्ध ध्यान साधक त्यां परमस्थिरता साध्य छे. स्थिरता साधक त्यां कर्मक्षय साध्य छे. स्याद्वाद साधक त्यां वस्तुस्वरूप ज्ञान साध्य छे. द्वादश नावना साधक त्यां परम वैराग्य साध्य छे. निर्मल ज्ञान कला साधक त्यां शुध्ध परमात्म नाव साध्य छे. विवेक साधक

त्यां परम नीति साध्य छे. धर्मध्यान साधक त्यां शुक्लध्यान साध्य छे. वीतरागभाव साधक त्यां मोक्षभाव साध्य छे. संवर साधक तिहां कर्मबंध अभाव साध्यछे. निर्जरा साधक शुद्धात्म गुण प्रगट साध्य, शुद्ध उपयोग साधक त्यां चेतनामां चित्त लीन थवुं साध्य. नयभंग साधक त्यां प्रमाण साध्य. ज्यां प्रमाण भंग साधक त्यां वस्तु सिद्ध साध्य. सम्यक् शास्त्रावलोकन साधक त्यां शुद्ध श्रद्धा साध्य, शुद्ध श्रद्धा साधक प्रगट परमार्थ पामवो साध्य, गुरुसेवा साधक आत्महित साध्य. विनय साधना ज्ञानसिद्धि साध्य. तत्वामृत पीवुं ए साधना संसार खेद मटवो साध्य, ध्यानाभ्यास साधना ध्यान सिद्धता साध्य, नयनिक्षेप प्रमाण सप्तभंगस्याद्वाद साधना शुद्ध द्रव्य ज्ञान साध्य, परदया साधना निजदया साध्य, द्रव्य दया साधना भाव दया साध्य, सम, संवेग, निर्वेद, अनुकंपा, आस्तिक्यता, साधना सम्यक्त गुण साध्य, शुध्ध चेतन भावना साधना सहज समाधि साध्य, प्राणायाम साधना मनोनिग्रह साध्य, धारणा साधना ध्यान साध्य, निज गुण रुचि साधना अखंड समाधि साध्य, विकथा साधना कर्म क्लेश साध्य, संवेगनी, निर्वेदनी, आक्षेपणी, निक्षेपणी श्रेम चार प्रकार धर्मकथा साधना शुध्ध धर्म साध्य, एम अनेक विध साध्य साधक जाणी शिव समाधि साधीए.

कोई कहेशेके आ समयमां मोक्ष मार्ग छे नहि, तो श्रेवुं जाणनारे मोक्ष मार्गनो अभाव कर्यो ते बहिरात्मा छे पण आ वर्तमान समये जे जीव मोक्ष मार्गनो अभिलाषी थई शुद्ध क्षायक समकित पामी अनुभव आनंदने वधारे ते श्रेक भव वैमानीकनो करी; उत्तम क्षेत्रे, उत्तम कुले, मनुष्यभव पामी, आठ वर्ष उम्मर थया बाद संयम लई, एक अंतरमुहूर्तमां घाती कर्मनो क्षय करी अनंत चतुष्टय प्रगट करी परम कल्याणने पामे, माटे मोक्ष मार्ग साधवा उद्यमवंत थई अनुभव अभ्यास निरंतर करवो. आहिंआं काल कर्मनुं जोर नथी.

आगलनी पेठे चक्रवर्ती आदि ऋद्धि अने गृहस्थोनी मणि माणेक आदि ऋद्धि आज नथी. ते लोकोने तो परिग्रहनो राग संसार तरफ वधारे खेंचनारो हतो; आ वखतमां एटलो परिग्रह नथी माटे स्वरूप साधवामां अटकावनार आगळ जेटलो परिग्रह पण नथी. प्रत्यक्ष आ संसारमां घणां विघ्न जणाय छे तो मुमुक्षुओए देहादि भोगथी विरक्त थइ स्वरूप साधवुं एज श्रेय छे. पर परिणामिकता करवी सुगम जाणे छे निज परिणामे रहेवुं कठण बतावे छे. संसारीक कार्योमां चतुर, निज स्वरुप साधवामां मूर्ख, ए केवी अचंबानी वात छे? एम शठ हठ पकरी कर्मछंदमां ध्यायो बहु भव ताप पाम्यो तो पण अंध धुंध थइ रही सद्गुरु वचनामृत पीतो नथी, मोहनिंद्रावशे गाफल थइ रह्यो छे. पोताना कृतकर्मना विपाको अन्य कोइ नहि भोगवे पोतेज भोगवे; माटे गुरु परमकृपा करी ढंढोली ढंढोली पचारी पचारी जगाडी कहे छे ते छतां जो निज दयाल न थाय तो भव अटवीमां भमतां फरी कोण वारवावालो छे? माटे एक क्षणमात्र पण प्रमाद न करतां जिन आज्ञा परमगुरु मुखे जाणी शुरू नये सेवो. सुखी थाओ. सुज्ञ जागृतता पामे निज चैतन्यता वधारे. निज परिणति वधारे. अध्यात्म महिमामां लय लगावे. सहज समाधिरस पामे. कर्मबंध मटावे. प्रधान चिद्गुण पर्यायमां ध्यावे त्यारे पूर्णानंद पामे. ए जिनवचननो सार जाणी ग्रही अनंतकाल जीवीए. निज द्रोही न थइए. निज स्वभाव अवलोकनथी पर परिणति नाश पामे निज अनुरागवशे वीतराग पद पामे. हमणां दाव पाम्यो छुं फरी योग मलवो दुर्लभ छे. जेथी भवफंद मटे; माटे मान मोडी, माया जाल उखेडी, क्रोध अग्नि बुझावी, लोभ लहेर मटावी, विषय विष तजी, चिदानंद राज्य देखो. ज्ञानामृत धारा पीओ. निज परिणति नारि संगे रमण करी ममता कुमतिने घरथी कहाडी एकांतिक, आत्यंतिक आनंद विलासी थाओ. निर्वृत्ति त्रियाथी दूर रह्यो त्यां सुधी भवताप सह्यो; हवे निर्वृत्ति राणी

संगे सर्वे समय रही अखंड आनंद विलसो. परमां निजभाव कल्पी रह्यो तेथी साचुं सुख पाम्यो नहि, होंश पुरी थाय नहि. पण अस्थिरता, परतंत्रता, चपलता, सहज निधि वियोग विना बीजुं फल नथी. ब्रह्म समुद्र ज्ञानामृत रसे भर्यो छे ते रस पीतां अमर, अजरपणुं पामे. पुद्गल कर्मे करी पांच इंद्रिय ने छठ्ठुं मन थयां तेमां देह प्रमाणे आत्मा व्याप्यो तेथी एकेंद्रियादि तथा संज्ञी, असंज्ञी संज्ञा पाम्यो. भाव इंद्रिय भाव मन एम ७ प्रकारे उपयोगना भेद थाय छे. एक एक उपयोग वडे एक एक तरेहनो पुद्गलादि परिणाम देखे, जाणे. उपयोग मन द्वारे चिंता विकल्प देखे, जाणे, चेतना परिणाम, विकल्प चिंतारूप थाय ते परिणामने मन नाम कहेवाय. एम बीजी इंद्रियो द्वारे पुद्गल वर्णादि विषयोने देखे, जाणे, जेम कान वडे शब्द पर्याय, आंख वडे वर्णादि संस्थानादि पर्याय, नाकवडे गंध पर्याय, जीभवडे रस पर्याय, त्वचावडे स्पर्शादि पर्यायने जाणे ते अर्था, ईहा, अवाय, धारणा, अवग्रहे, एम एक एकना चार चार भेद करी चोवीश अने मन, आंख विना चार इंद्रिय व्यंजनने ग्रहे छे ते चारने व्यंजनावग्रह कहिये एम अठ्ठावीश भेद थाय ते मतिज्ञान नाम पामे छे. तेना उत्तर भेद करतां अनेक भेद पण थाय छे एज इंद्रियो अने मनवडे वस्तुनो सामान्ये बोध तेने दर्शन कहिये एम आत्मानो उपयोग परसंयोगे मति संज्ञा पामे छे. ज्ञानीओना अभिप्राय श्रुति एटले वाणिथी अने अक्षरादि अन्य चिन्होवडे अन्य जे जे भावो रूपी अरूपी त्रिकालना अने दूरवर्तिना मतिज्ञाने करीने जाणे, ए मिश्रनु नाम श्रुतज्ञान कहिये, ते मति श्रुत समकिती जीवने मतिश्रुत कहिये मिथ्यात्वी जीवने कुमति कुश्रुति रूप छे. परसंगे ज्ञान अनेक नामने पामे छे. ज्ञान एक निर्मल चैतन्य मात्र छे. मिथ्यात्वीना जाणवामां विपर्यास छे, केमके मिथ्यात्वी ज्ञेयोने ए हुं, मने, मारा कामना इत्यादि ममत्व सहित जाणे छे माटे मिथ्याज्ञान

कहिये. पर ममत्ववडे ज्ञान मिथ्यानामने पाम्युं पण ज्ञान आत्मानो निज स्वभाव छे. समकिती जीव ज्ञेयने ज्ञेय पोताथी भिन्न परपद जाणे छे. ज्ञेयो मांहे ग्राहकता, व्यापकता, रमणतादि करे नहि. ज्ञायकता एज पोतानुं स्वरूप जाणी निज ज्ञायकतामां, ग्राहकता, व्यापकता, रमणतादि भावे रहे तेथी सम्यक्त नामने पामे छे. मिथ्यात्वी परने निजरूप जाणी अवलंबे, आचरे माटे मिथ्या आचरण छे. समकिति जीव पर ज्ञेयथी भिन्न निज ज्ञायकता अवलंबे, रमण करे तेथी सम्यक् चारित्र नाम पामे. सम्यक्त सविकल्प निर्विकल्प बे प्रकारे छे. तेमां सविकल्प सम्यक्त जघन्य ज्ञानी परज्ञेयने पररूपे जाणी पोताने ज्ञायकता शक्तिमय ज्ञेयथी भिन्न पोताने निजरुपे जाणे, ते सविकल्प समकित; अने ज्ञानी ज्ञायकता व्याप्य व्यापक अभेदपणे समकाले पोते पोताने पोतापणे अने परने परपणे जाणे ते निर्विकल्प सम्यक्त कहिये. ते सम्यक्त केवल दशामां पामीओ, अने समकाले पर गुण पर्याय परपणे जाणी तेथी उदासिन्न पणे रही स्वगुण पर्याय स्वस्वरूपे अभेदपणे जाणी अनुभवे, रमण करे, अहिंआं परम शुद्ध चारित्र छे. अने जे वखते जे ज्ञेयने प्रयुंजे तेज ज्ञेयने जाणे, सकल ज्ञेयने न जाणे त्यां सुधी छद्मस्थ दशाछे. केवलीने तो अेक समये समकाले स्वपर सकल ज्ञेयना त्रिकालवर्त्तीना भावनुं ज्ञान होय छे. मिथ्यात्वी अने समकितीने ज्ञेय प्रयुंजना एक सरखी छे पण मिथ्यात्वीनुं जाणवुं अयथार्थ, अने समकितीनुं जाणवुं यथार्थ छे अेटलो विशेष जाणवो. समकितीनुं जाणवुं सम्यक् प्रकारे छे माटे अशुद्ध परिणाम करी बंध वधारतो नथी पण उपशमी क्षयउपशमीने ज्यारे मिथ्या उदय आवे त्यारे विविध बंध करे छे. सम्यक्त दशामां मिथ्यात्वनो बंध करतो नथी. सम्यक्त दशामां चारित्र मोहनीयनो उदय होय तो पण विशुद्धता छे माटे भव भ्रमण वधारतो नथी. सम्यक्त शक्तिवडे चारित्र मोहनीयनो नाश करी लघु कालमां संसार पार पामे छे. मिथ्यात्वी पोतानुं स्वरूप न जाणे तेथी

संसार वधारी जव अटवीमां रुले छे. जेम वादीगर मंत्रनी शक्तिवडे विषधरना विषनी शक्ति किली राखे छे एटले विषधरनो डंख विष रहित थाय छे, तेम समकिती आश्रव अने कर्मबंधनी शक्ति किली राखे छे एटले शुभाशुभ उदय थतां पण उदासिन वृत्तीए अबंध रहे छे. सकल पर द्रव्यथी राग तजी निज उपयोगमां स्थिर थई परमानंदमय स्वभावाचरण साधे छे एनुं नाम स्वानुभव कहीये. ए अभ्यासे निर्विकल्प समाधि पामे. ए स्वानुभवनां अनेक नाम छे. समकिनी चोथा गुणठाणावालाने स्वानुभव स्तोक काल रहे छे वली केटलेक काले पाछो आवे छे. देशविरती पांचमा गुणठाणावालाने चोथा करतां विशेष वखत अनुभव रहे छे वली चूकी थोडा कालमां पाछो आवे छे. एम जेम जेम गुणठाणानी वृद्धि थाय, तेम तेम अनुभवनी स्थिति वधे अने चूक्या पछी पण वहेलो वहेलो आवे; छेवट अखंड समय अनुभव रहे, पाछो जाय नहि. चोथे गुणठाणेथी ज्ञान धारा वर्द्धमान दशाने पामे शुभाशुभ कर्म धारा घटती जाय. आखर बारमा गुणठाणानां अंत पछी अखंड ज्ञानधारा निर्मल एकली शुक्लध्यान पामी केवळ-ज्ञान दर्शन नामने पामे. हे जव्य! एक मारी वात सांभळ. ए स्वानुभव दशा सुखरूप छे, कल्याणरूप छे, निर्वृत्तिरूप छे, समाधिरूप छे, समयरूप सुख छे, शांतिरूप छे, तृप्तिरूप छे, मोक्षमार्ग छे, जो कदापि चारित्रावरणनो उदय होय ते क्लेशरूप छे तो पण अनुभव अभ्यास सकल क्लेशनो नाश करी चारित्रावरणनो नाश करे, शुद्ध स्वभावाचरण प्रगट करे. गुणठाणानी हदने वधारनारो घनघातीने नाश करनारो शुद्ध स्वानुभव छे. जेम जेम अनुभव वधे तेम तेम स्थिरता वधे. ज्ञान दर्शन वीर्यलब्धि वृद्धि पामे तेम तेम ऊंचुं गुण-स्थानक आवे. दशमाने अंते सर्वे कषाय नाश थई बारमे गुणठाणे यथाख्यात चारित्र नाम पामे. जेम जेम स्वानुभवमां स्थिरता वधे

तेम तेम अनुभवनी निर्मळता अने स्थिरता वधे, वली अगारी विशेष स्थिरता वधे. अने अनुभव पूर्ण निर्मल थतो चाले. अनुभव कर्म धूलीने नाश करवा प्रचंम पवन समान मुनिजनोए कह्यो छे कषाय दावानल बुझाववाने अनुभव पुष्कलावर्त्त मेघ समान छे, अनुभव अमृत रसायण छे अनुभव अमृत सेवतां अनंत जीवो परम पूज्यपदने पाम्या. वेद, पूराण, क्रिया, कष्ट, निज आत्म अनुभव विना क्लेश मात्र छे, ए विना विद्या अविद्या रुप छे, स्मृति विस्मृति रुप छे, चतुराई मूर्खाइ रुप छे, पुरुषत्व अपुरुषत्व रुप छे, मनुष्य जन्म निष्फळ छे, शास्त्रार्थ करवो वृथा छे, बाह्य पूजा मोह नवन छे, अनुभवविना गाममां रहेलो पुरुष गाय, श्वान जेवो छे, मुनि वेषे पण वनमां रहेलो रोझ सरखो छे, अने अनुभव ए तो मोक्षनुं निदान छे. अनुभवी पुरुषोनां चरण देवेंद्र, नरेंद्र सेवे छे. अनुभवथीज साध्य, सिद्ध थाय छे, अनुभव चिंतामणि रत्न छे, ए समान ऊंचो धर्म बीजो नथी. मिथ्यात्व, रागादि, कषाय, योग, प्रमाद नावने परिणमवाथी जे कार्मण वर्गणा आवी ते आत्म प्रदेशे क्षीर नीर पेरे अेक क्षेत्रे थई, ते आठ कर्म परिणामे परिणमी, ज्ञानादिक आठ गुण मलीन थया. ज्ञान अज्ञान रुप, दर्शन अदर्शन रुप, चारित्र पराचरण रुप, वीर्य पराश्रित परानुयायी पणे, एम आठे गुण मलीन थया. कार्मण वर्गणा आठे कर्म पणे वेहेंचाई. ते चेतनानीज भूल छे के पोतानी परिणति मलिन करी नहितो वर्गणानुं जोर नहि; हवे पण चेतना मिथ्यात्वादिक कर्म बंधना कारणोनो परिणामि न थाय, मिथ्यात्वादिक कारणो तजे, ज्ञानादि करणे स्वनाव सिद्धि कार्यनो कर्त्ता थई अनुभव अभ्यास करे तो पूर्ण सिद्धता पामे. पुद्गल परिणति उपर रागादि करी चेतनाए निज परिणाम मलिन, अशुद्ध, वक्र कर्यो ते भूल चेतनानी छे पण अंतरंग सत्तामां कांई विकार नथी; जेम सूर्यनां किरण वादलांमां थई प्रकाश करे ते वादलां वडे विविध रुप थाय पण किरणे तो पोताना तेज प्रकाशने छोड्यो नथी पोताना

प्रकाश सहित छे, वली सोनीना संगे सोनुं विविध घाट आकारने धरे छे पण पोताना जारे, पीलाश, चिकाश, बहु मूल्य आदि गुणोने छोडतु नथी तेम आत्मा पर संगे पर्याय विकारी थयो पण पोतानां मूल द्रव्ये शुद्ध छे ज्यारे पर कारण तजे त्यारे पोताना स्वभावे प्रगट थाय शरीरनी चलन, हलन, वलन, शब्दादि क्रिया ए सर्वे पुद्गल खेल छे चैतन्यता शिवाय अन्य कांईपण ताहरुं नथी माटे पर परिणतिनुं ममत्व तजी चैतन्यता भावे स्थिर था द्रव्यकर्म, नोकर्म आदि सर्वे पुद्गल अखाडो छे ते मांहे ताहरे पोतानी ज्ञायकता छोडी प्रवेश करवो नहि. ताहरा स्वरुपमां ज्ञान, दर्शन आदिना पर्याय रुप पात्र (नाचनारी) नाची परम रस उपजावे छे तेने देखी मग्न रहे. सत्ता मृदंग, प्रमेय ताल वाजे एवा निज खेलमा रींझी सत्ताभूमीमां आनंदे राज्य कर तुं निज स्वरुप भूली कहुं तुं के ए कर्मादिक मने दुःख दे छे पण ताहरी पोतानी भूल शोधी रागादि न आदरुं तो ए पुद्गलो तने दुःख देवा समर्थ नथी. पोतानी भूल न काढतां परने दोष देवाथी दुःख केम मटे? पुद्गलो पोतानी मेले आत्माने दुःख देई शकता नथी मरेली स्त्रीथी सगपण करवा चाह्य तो लोकोमां पण हांसी थाय तेम जम पदार्थमां खेलवाथी पोते जमता आदरी जमवत् बने जडमां आपो मानवानी कुटेव तजो. फक्त परमां आपो मानी आचरण करवाथी बंध थयो छे. (उक्तंच)

॥ गाथा ॥ परदव्वादो दुग्गइ, विरउं मुंचेइ अट्ठ कम्मेहिं, ॥
एसो जिण उवएसो, समासउं बंध मोक्खस्स. ॥

देखवा जाणवाथी बंध थतो होय तो सिद्धने पण बंध थाय राग द्वेष मोहने करवावालो पण पोतानो परिणाम छे, अने रागादिकने तजवावालो पण पोतानो परिणाम छे माटे निज परिणामे करी रागादिक तजी निर्मल रहो. ज्ञान दर्शनमां राग द्वेष नथी ए

तो देखवा जाणवा मात्र छे. राग द्वेष आदि विकार भावे करी पोते विकारी थाय. राग, द्वेष, मोह सहित देखवुं, जाणवुं, आचरवुं करे तोज बंध थाय. सम्यक् ज्ञान दर्शन चरणमां बंध नथी.

॥ गाथा ॥ दर्शनमात्म विनिश्चित, रात्म परिज्ञानमिष्यते बोधः॥
स्थितिरात्मनि चारित्रं, कुत एतेभ्यो भवति बंधः ॥अर्थ॥

॥ दोहरो ॥ दर्शन आत्म विनिश्चित, बोध विशेष सुज्ञान ॥
आत्म स्थिरता चरण गुण, तिहां न बंध विधान ॥

अभवि जीवने स्वभावाचरण आवे नहि, अने भवि जीव समकित पामी स्वभावाचरण सेवी सकल कर्मनो नाश करे. कोई प्रश्न करे के स्वरुप देखीए नहि, जाणीए नहि, तो तेमां केवी रीते उपयोग स्थिर करीए ? तेने कहेवुं के परवस्तुनो देखनार जाणनार प्रत्यक्षपणे ताहरोज उपयोग छे, ए उपयोगथी देखवा जाणवानी अन्य वस्तु भिन्न छे, पण एज ताहरा उपयोगने राग, द्वेष, मोह पराचरणरुप न थवा दउं तो कर्मबंध आवी शके नहि, अने जेम जेम रागादि अशुद्धता विना उपयोग स्थिर रहे तेम तेम पूर्व कर्म रस निर्झरी, कर्मदलीयां खरी ज्ञान दर्शन लब्धि प्रगट थाय. ताहरो उपयोग ताहारी पासे छे, अन्य क्षेत्रे शोधवा जवुं नथी (उक्तंच) (उवउगमउजीवो)

॥ गाथा ॥ उवउगो खलु दुविहो, णाणेण य दंसणेण संजुत्तो ॥
जीवस्स सव्व कालं, अणण्णभूदं वियाणीहि ॥

एटले सर्वे जीव त्रणे काल उपयोग सहित छे. जीवपरिणाम, वस्तु वेदे छे तथा लाभ ले छे. स्वरुपनिवास परिणामज करे छे. परिणाम उत्पाद, व्यय, ध्रुव रुप छे. उत्पाद, व्यय, ध्रुवमां सत्ता, अने सत्तामां अस्तित्व. अस्तित्वमां वस्तुत्व, वस्तुत्वमां द्रव्यत्व, द्रव्य-

त्वमां प्रमेयत्व, प्रमेयत्वमां परिणामिकत्व, परिणामिकत्वमां अगुरु ल-घुत्व, एम सामान्य विशेष सर्व धर्म गुणगुणी अभेदपणे परिणाममां सिद्ध थया. माटे ज्ञान दृष्टिए जोइए तो वस्तु अगोचर नथी पण वस्तुना स्थानके जोतां जडे, अन्य स्थानके अने अन्यरुपे नास्ति छे माटे स्वद्रव्यादिके पोतानो अस्ति धर्म संभाली त्यां परिणाम स्थिर, अचल, अकंप, मग्नपणे निर्मलानंद अनुभवो.

॥ उक्तंच ॥ जीवो परिणाम डविहा, सुहेण असुहेण चासुहो असुहो, ॥ सुद्धेण तदा सुद्धो, परिणामो होई सइयो.

जीवना परिणाम बे प्रकारना. एक शुद्ध, बीजो अशुद्ध. अशुद्धना पण बे भेद एक शुभ बीजो अशुभ. ज्यारे जीव जेवा परिणामने परिणमे छे त्यारे ते परिणामथी तन्मयी छे. ज्यारे शुद्ध परिणामने परिणमे त्यारे पोतानी शुद्धताए तन्मयी छे ज्यारे शुभाशुभ अशुद्ध परिणामने करे त्यारे अशुद्धतामां तन्मयी छे. माटे परिणामने शुद्ध स्वरुपे करी तन्मयताए स्थिर राखवो, रागा-दिक अशुद्धता लागवा देवी नहि. परद्रव्यना ममत्वे आत्म अध्य-वसाय त्रिविध रुपे अशुद्ध थाय छे. आत्मस्वरुपने जाण्युं नहि माटे अज्ञान रुप अध्यवसाय थया, परने पोतापणे जाण्युं माटे मिथ्यात्व-रुप अध्यवसाय थया, अने परद्रव्य ऊपर रागादि थयेथी कषायरुप अध्यवसाय थया, एम त्रिविध अध्यवसाय थाय ते तिव्र, तिव्रतर, तिव्रतम, मंद, मंदतर, मंदतम वळे असंख्याता भेद थायछे माटे ज्ञान दर्शन चरणरुपे निज आत्म परिणाम स्थिर करी अबाधित रहेवुं. पराचरण बे प्रकारे छे एक द्रव्य पराचरण बीजुं भाव पराचरण. मन वचन कायानी क्रीया अथवा कर्मनुं कारण जे नोकर्म ते द्रव्य पराचरण छे. भाव पराचरण ममत्व राग द्वेष मोहरुप छे. कोइ कहे के "रागादिभाव जीवना छे, परभाव नथी अने रुप रसादि ते परना छे"

तेने कहिए रागादि भाव शुद्ध नये जीवना मूल स्वभाव नथी पण आत्मामां विभाव स्वभाव छे, ते वमे अनादि पोताना स्वरूपने अणजाणतो अशुद्ध निश्चय वमे परने पोतापणे जाणे तेथी राग ए प्रवाह अनादि छे पण पूर्वलो पूर्वलो राग नाशे अने नवो नवो उपजे तेथी ए पण सादिसांतछे, ज्यारे जीव शुद्ध नये पोताना स्वरूपने जाणे त्यारे राग थवानो अवकाश नथी, माटे ए पोतानो मूल स्वभाव नथी. अने रूप रसादिकतो प्रत्यक्ष जड विभाव छेज. ज्ञान, दर्शन, चारित्र एज पोतानो मूल स्वभावछे; पण ज्यांसुधी पोतानुं शुद्ध स्वरूप जाण्युं नथी त्यांसुधी परिणाम जेवा ध्येयमां व्यापे तेवा थाय; माटे जरू ध्येयमां परिणाम न जवा देतां शुद्ध सिद्ध स्वरूप ध्येयमां स्थिर करवा एटलेज पोते सिद्ध रूप थाय, उत्पाद, व्यय, अने खट गुण हानि वृद्धि अने अर्थक्रियाकारित्व परिणामथीज सिद्ध थाय छे. आगल देवाधिकार लखीए छिये.

चार घनघाती कर्म जेणे नाश कर्या, अनंत दोष रहित अनंत गुण सहित एवा देवाधिदेव त्रिभुवन तारण ते मुख्य अढार दोष रहित छे, मोहनी कर्मना क्षय थकी अग्यार, ज्ञानावरणना क्षय थकी एक, दर्शनावरणना क्षय थकी एक, अंतरायना क्षयथकी पांच, एम अढार दोष गया तेनी वीगत निचे प्रमाणे.

मोहनी कर्मना अग्यार दोष लखीये छिये. हास्य, रति, अरति, भय, शोक, दुगंछा, मिथ्यात्व, अविरति, राग, द्वेष, काम.

पंचास्तिकायना प्रमेय जाणवाथी सकल परिणामने पण यथार्थ जाण्या पुरुषो अने स्त्रीओना स्वभावने कर्म उदयागतने पण जाण्या तो तेने अचंबो न होय तो हास्य शानी ? (१) ज्ञानानंदमय निज-रुपथी न्यारो जे पुद्गलपर्याय अथिर, असार जाण्यो तो तेमां रति शानी ? (२) पुद्गलपर्याय अथिर, जड चल जीवनी अेंठरूप जे शरीर तेमां जन्म, जरा, मरण, भूख, तृषा, ताप, श्रम, रोग, चिंता

खेद आदि अनेक दोषण छे; तेथी न्यारुं ज्ञानदर्शनमय असंख्यात प्रदेशरूप अबाधित निज अंग जाण्युं, पुद्गल परिणति ए आपणी नथी, अने तेमां जोग धर्म पण नथी, सम्यक् प्रकारे निज ज्ञानानंदमां जोगधर्म जाण्यो. कलुषतारूप मोहनीनी अठावीशे प्रकृति अने तेना असंख्याता अध्यवसायनो नाश थयो तो शरीरनी अंदर गमे तेम होय तेनी अरति शानी ? (३) पोताना स्वप्रदेश अने ज्ञानादि निधान, क्षांत्यादि निज कुटुंब, स्वपर विवेकरूप मित्रने सदा अखंड अबाधित जाणे छे अने पोतानुं सर्वस्व अखंड जाणे छे तिहां जय शानो ? (४) वली पोताना द्रव्य प्रदेश, गुण, पर्याय, सुख हेतु सदा कायम छे. पूर्वे अनंतकाल जव भ्रमण करतां पोतानो एक प्रदेश पण घसायो नथी, गुण तो लेश मात्र पण विनाश पाम्यो नथी तो शोक शानो ? (५) पुद्गलना अमनोज्ञ स्पर्श, रस, गंध, रूप, शब्द आपणा निज आत्म अगने कंइ हरकत करी शकता नथी, अमनोज्ञ स्पर्शादिकनी हरकत तो शरीरने होय, शरीरथी न्यारो ज्ञानघन पोते पोताने जाण्यो तो दुगंछा शानी ? (६) सकल द्रव्यना गुणपर्याय अस्तित्वादिक सामान्यधर्म अने परिणामिकत्वादि विशेष धर्म लक्ष लक्षण अभेदपणे जे जेना ते तेनामां जाण्या. पोताना लक्ष लक्षण अभेदपणे पोतामां जाण्या तो परमां ममत्व क्यांथी होय अने ममत्व न होय तो मिथ्यात्व शानुं? (७) शरीरनी अंदर उपजता क्षुधा, तृषा, जरा, मरणादि मटाडवाने अने पंच इंद्रियना जोगो, अने धन आदि जोग उपजोगनी वस्तु मेलववाने मन, वचन, कायानी प्रवृत्तिरूप अविरति उपजे छे पण शरीरथी न्याइं निर्मल, निःकंप, निज आत्मअंग जाण्युं तो अविरति शानी ? (८) आत्मअंग अजग चेतना विलास पोतानो पोतामां जाण्यो पुद्गल क्रिया प्रयुंजी सुख लेवानुं नथी पण सहेजानंद निज आत्म अधिकार माहे छे तो परनो मोह पण नहि तो राग शी वस्तुनो होय ? (९) पोतानुं आत्मअंग अने

ज्ञानादि निधान अखंड, अभंग, अतुट छे अने कोइ अन्य द्रव्य हरकत करी शके एवुं नथी, लूंटी वगाडी शके एवुं नथी, कोइ बगाडवा समर्थ नथी, तो वैर अने द्वेष शानो ? (१०) शरीरनी अंदर वेदोदय तथा भूख, तरस, ताप, शीतादि विकारो होय छे, शरीरथी न्याइं निरोगी, निरामय, अविकारी, ज्ञानमय, सकल कामना रहित, निज आत्मअंग जाण्युं तो वेद उदयनो मद अने स्त्री आदि अंगना अभिलाष, अने पंचे इंद्रियोना विषयोनी कामना क्यांथी होय ? (११) ए अग्यार दोष मोहनी कर्म वडे हता ते सर्वांशे नाश पाम्या.

समकाले अनंत द्रव्यना सामान्य विशेष धर्म, गुण, पर्याय, वस्तु स्वभाव, भवितव्य, जीवादि सर्वे द्रव्यनी काल परिणति, सकल द्रव्यना क्रमवृत्तीपर्याय, शक्ति अने पुरुषत्व सर्वेना त्रिकालवर्तीना भावपर्याय, अन्य संबंध विभाव आदि सकल प्रमेयने मापनारी पर परिछेदक शक्ति वाली जळहळ ज्ञान ज्योती अखंड, अभंग प्रगटी. कोइ पण ज्ञेय एवो नथी के जे ज्ञानना जाणवामां आवे नहि; एवुं निर्मल, निःकंपज्ञान प्रगटयुं तो अहिंआं अज्ञान रहेवानो अवकाश नथी. (१२) शरीरना ममत्ववडे शरीरना थाकथी निंद्रा हती; साक्षात् चैतन्यअंग सकल समय अबाधितपणे दर्शुं. तुरीय अवस्था प्रगट थइ पुद्गल अंगमांथी इष्ट अनिष्ट वर्गणा खरे, मळे ते वमे खेद लागी निंद्रा थाय छे पण पुद्गल पर्यायथी न्याइं निज अखंड अंग दर्शुं; तेमांथी प्रदेश मात्र पण खरवानो के घसावानो नथी तो थाक अने निंद्रा क्यांथी होय ? (१३)

हवे अंतरायना पांच दोष गया ते लखीए छिये.

आत्मा पोताना वीर्य गुणे करी ज्ञान, दर्शन, चरणादि सुपात्रने स्वपर्याये परिणमवानी सर्वे समय शक्तिरुप अक्षय दान आपे छे; वळी अव्याबाधादि अनंत गुणोने कायम रहेवाने तथा अन्य जवी

जीवोने पण आत्मसत्ता शुद्ध नये उपदेशी अक्षय दान आपे छे एम अनंत दानलब्धि प्रगट थइ. (१४) ज्ञान, दर्शन, चरणादि आप आपणा लायक वीर्य तरफथी लाभ लेइ आप आपणा कार्यमां अखंड धाराए वर्त्तेछे ते लाभलब्धि प्रगट थइ. (१५) ज्ञान, दर्शन शुद्ध निर्मल अनंत पर्याय रम्य स्वरूपमां सदाए रमण भोग विलास करी अनत पर्यायने भोगवे ते भोगलब्धि जाणवी (१६) ज्ञान, दर्शन, चरण, अव्याबाधादि आत्मगुण शिव कमला सगे अखड अनत भोग भोगवे ते उपभोगलब्धि प्रगटी (१७) चेतना निज वीर्य गुणने निज सकल स्वकार्य मांहे अखंड प्रवर्तावे ते वीर्यलब्धि (१८) एम अढार दोष रहित होय तेने देव कहिए. कोइ निज कल्पना कल्पीत जन्म, मरण, क्षुधा, तृषादि दोष बतावेछे ते शुद्ध परंपराना, अजाण, बाल छे. तृषादि तो वेदनी कर्मना तावाना छे, जन्म, मरण, आयुष्य कर्मना तावाना छे, अहिंआं तो घाती कर्म जवाथी घाती कर्म वडे जे दोषो उपन्या हता ते गया, अने क्षुधा, तृषाने जो दोष कहीए तो आत्माने उंच गोत्र कहेवु अथवा कर्म प्रकृतिना नामें जे नाम कहेवुं ते अने शाता अशाता वेदनी आदि अनेक दोषो थरे तो तेणे अरिहंतनुं स्वरूप जाण्युं नथी.

ते लोको नीचे प्रमाणे अढार दोष बतावे छे ॥ कुंभस्तीयाः ॥ दूषन अठारह रहित, सो केवली संजोग, जन्म मरण जाके नहीं नहि निंद्रा जय रोग, नहि निंद्रा जय रोग, सोग विस्मय न मोह मति, जरा खेद परस्वेद, नाहिं मद वैर विषे रति, चिंता नांही सनेह, नाहिं जह प्यास न भूख न, थिर समाधि सुख सहित, रहित अठारह दूषन

पण तेमां प्रथमथी केटलाक नाश थएला ते केवलज्ञाने करते नाश बतावे छे तथा केटलाक अंतर जावित दोषोने जूदा गणी बतावे छे तथा केटलाक कायम रहेलाने नाश थएला कहेवे, तथा

केटलाक दोषो पुण्य अतिशय पसाये होता नथी. तेने घाती कर्म नाश थये गया बतावे छे, जेम जन्मतो जनमतीज वखते होयछे, पण सरवे काले कंई जन्म होतो नथी तो ए न्याये बीजाने पण जन्म दोष न कहेवाय, वली जन्म दोप ते नामकर्मना नाश थवाथी नाश थाय.

तथा जरा, खेद, रोग, परसेवो, ते पुण्य पसाये जन्मथी होता नथी कदापि सूक्ष्म होयतो वेदनीय कर्मना ऊदयथी छे, घाती कर्मना तावाना नथी, माटे ते वेदनीय कर्म नाश थये जाय.

मरण, भूख, तृषा, ए अघाती कर्मना उदयथी छे, माटे अघाती कर्मनो नाश थये जाय. पण मरण, भूख, तृपानी अरति नथी माटे ए दोष अरतिमां समाय छे, जो भूख, तृषानो उदय न होयतो नोकर्म वर्गणानो पण आहार लेवानी शी जरुर ?

वली विस्मय ते हास्यमां, मोह ते मिथ्यात्व तथा रागमां, मद तथा वैर ते द्वेषमां, विषय ते काममां, चिंता अरतिमां, स्नेह रागमां समाय छे, एम अंतर भावित दोषोने जूदा गणी जे मुख्य घाती कर्मना दोषोने न गणवा, ते केवी भूलनी वात छे ?

जेम ज्ञानावरण गयेथी अज्ञान दोष गयो तेने शुं हजु कायम कहीए ? अने हास्य, अरति, दुगंछा, काम अने मिथ्यात्व, ए दोषो मोहनीय कर्मना छे तेने बाकी रह्या केम गणाय ? अने अंतराय कर्म नाश थयेथी पंच लब्धि प्रगट थई ते तरफना दानांतरायादि पांच दोषो ते हजु कायम गणाय ?

माटे खोटी कल्पना करवी, भोलाने भरमाववा, ते परमेश्वरनी आणाथी विरुद्ध जाणी हठवाद छोडी शुद्ध परंपराने कबूल करवी ते सरवेने कल्याणकारी छे.

ए दोषो तो चौदमा गुणठाणाने अंते सकल निवर्त्ते. जेना आगेवानोए परमेश्वरनां वचन मरड्यां तेने ताबे रहेनारने खोटी कल्पना करवामां कांई विचार रहेतो नथी. जे भव भयथी बीहे

तेज पोतानी अने अन्य जीवोनी करुणाना पात्र छे. माटे उत्सूत्र बोलनारथी सावचेत रहेवु, घाती कर्म सहित ए दोषो क्षय थवाथी अनंत चतुष्टय प्रगट जोगी थया इंद्रियादिकनी सहाय विना निज ज्ञान गुणे करीने लोकालोक पंचास्तिकाय त्रिकालवर्त्तीना पर्याय एक समय समकाले द्रव्यथी, क्षेत्रथी, कालथी, भावथी, सकल द्रव्यना प्रमेयने जाणे एवुं अखंड, अविनाशी, अस्खलित, केवलज्ञान प्रगट थयुं छे सकल द्रव्यना सामान्य स्वभावने समकाले देखे एवुं केवलदर्शन प्रगट थयुं छे, पोतांना स्वभावमां ज्ञानना त्रिकालवर्तीना पर्याय ज्ञेयाकाररूपे भासे अने सकल द्रव्यना सामान्य स्वभाव दर्शन गुणमां भासे एवा ज्ञान दर्शनना अनंत पर्यायमय रम्य निज स्वरूपमां अखंड आनंदे रमण करे अने सकल परद्रव्य पर्यायथी उदासिन्न वृत्ति तो पहेला मोहनी कर्मना अंतथी थयेली छेज, अने निज स्वभावमां अखंड धाराए स्वतंत्रपणे, मग्नपणे जे रमण एवो परम चारित्र धर्म प्रगट्यो छे वली आत्मवीर्यवडे अनंत दान, अनंत लाभ, अनंत भोग, अनंत उपभोग, अचल, अनंत वीर्यशक्ति, स्वतंत्र प्रगट थइ छे, एम चार अनंत आत्मिक शक्ति जेने प्रगट थइ छे, वली तीर्थंकर नामकर्मने उदये करी अष्ट महा प्रातिहार्य, चोत्रीश अतिशय, निर्दोष, स्याद्वादमय पूर्वापर विरोध रहित वली अतिव्याप्ति अव्याप्ति, असंभवादि अनेक दोष रहित अने पांत्रीश गुण सहित जेनी वाणी छे जविजीवोने शुद्ध नये नवतत्वादि वस्तु स्वरुप प्ररुपि मोक्ष मार्गे पहोंचाडे एवा महागोप, महामाहण, महानिर्यामक, महासत्थवाह, महावैद्य, आधार, करुणासमुद्र, जावधर्मदातार आदि अनेक गुणो जेने कहेवाने पूर्ण श्रुतज्ञानी पण समर्थ नथी तो हुं अल्पमती शुं कही शकुं; मतलब के जेना उज्वल अपार गुणो छे एवा अरिहंत देवाधिदेव छे. वली सिद्ध परमेश्वर अष्टकर्म क्षय करी लोक शिखरे आनंदपुरीमां विराजमान थया ते अनंत ज्ञान, अनंतदर्शन, अनंत-

चरण, अनंत अचलवीर्यवंत, अटलअवगाहना, अक्षयस्थितिवंत, अगुरुलघु, निराबाध, समाधिमय एम अष्ट गुणातम सिद्ध परमात्मा कहिए.

हवे ज्ञान अधिकार लखीए छिए.—ज्ञान ए आत्मानो परम स्वभाव छे, आत्माथी अभेदपणे छे, पण आवर्ण वशे विविध प्रकारे नाम पामे छे तेना मुख्य पांच भेद छे. मति, श्रुत, अवधि, मनःपर्यव, ए चार ज्ञान आवर्णना क्षय उपशमथी अने केवलज्ञान शुद्ध निरावर्ण, अतींद्रिय, निर्मल, परम ज्ञान छे; तेमां प्रथम मतिज्ञान अधिकार आ ग्रंथमां कारण प्रसंगे पहेलो लखायो छे त्यांथी जाणवो. बीजुं श्रुतज्ञान चौद अने वीश भेदे अगर विविध प्रकारे छे तेना मुख्य भेद लखीए छीए.

॥ गाथा ॥ अक्खर सन्नी सम्मं, साईअं खलु सपज्जवसिअं च
गमिअं अंगपविठं, सत्तविए ए सपक्खिवका ॥

अर्थः—(अक्खर के०) अक्षरश्रुत (सन्नी के०) संज्ञीश्रुत (सम्मं के०) सम्यक्श्रुत (साईअं के०) सादिश्रुत (खलु के०) निश्चे (सपज्जवसिअंच के०) सपर्यवसितश्रुत अथवा सांत श्रुत (गमिअं के०) गमिकश्रुत ते पाठ, छंद, आलावा, सरखा होय (अंगपविठं के०) अंगप्रविष्टश्रुत, ते आचारांगादिक (ए के०) ए (सत्तविए के०) साते श्रुतना भेद ते (सपक्खिवका के ०) सप्रतिपक्ष करीए एटले ए सातेने पोताना प्रतिपक्ष सहित करीए; जेम अक्षर श्रुत, त्यां बीजुं अनक्षर श्रुत, संज्ञि श्रुत त्यां बीजुं असंज्ञि श्रुत. एवी रीते प्रतिपक्षी सात भेद मेलवतां चौद भेद श्रुत ज्ञानना थाय. ॥ इत्यक्षरार्थः ॥

हवे चौद भेदनुं विवरण लखीए छिये.

त्यां अक्षर त्रण भेदे छे. एक संज्ञाक्षर, बीजा व्यंजनाक्षर, त्रीजा

लब्ध्याक्षर. त्यां जे पत्रादिके लख्या ते संज्ञाक्षर, मुखे करी उच्चार करीए जे अकार ककारादिक ते व्यंजनाक्षर. ए बन्ने थकी (कारणथी) जाव श्रुत होय ते माटे ते श्रुतना कारणपणाने लीधे एने द्रव्य श्रुत कहीए, तथा शब्द सांभले थके तथा रूपादिक ग्रहे थके "अमुको ए अर्थ." एवुं जे अभिधेय पणे अर्थज्ञाननो हेतु, ईंद्रियावरण क्षयोपशम लब्धि जघन्य ज्ञान ते श्रुत एटले अनभिधेय पदार्थने अनंतमे भागे अभिधेय पदार्थ छे तेनुं जाणवुं ते लब्ध्यक्षर ए जावाक्षर एनुं नाम अक्षरश्रुत जाणवुं. (२) अने एनुं प्रतिपक्षी बीजुं अनक्षरश्रुत ते कहीए जे श्वासे-ओरुकारे, अने छींके, खांसीए करी पुरुषादिकनुं ज्ञान, ते अनक्षर शब्द श्रुत. ए बीजो भेद जाणवो.

३–त्रीजुं संज्ञा श्रुत ते संज्ञा त्रण छे एक हेतूपदेशिकी, बीजी दैर्घकालिकी, त्रीजी दृष्टीवादोपदेशिकी, ए त्रणमांहे अहीं दैर्घकालिकी संज्ञाए करी जे सन्नीया पंचेंद्रिय मनोज्ञानवंत जीव तेनुं श्रुत ते संज्ञि श्रुत एत्रीजो भेद जाणवो.

४–चोथुं तेनुं प्रतिपक्ष जे दैर्घकालिकी संज्ञा रहित जे जीवने मन विना ईंद्रियथी थयुं ते असंज्ञि श्रुत, ए चोथो भेद जाणवो.

५–पांचमुं सम्यक्दृष्टी जीवनुं श्रुत. ते असम्यक् श्रुत ग्रहण करे तो पण सम्यक्श्रुत थाय, कारणके ते खोटाने खोटुं जाणे तेथी ए पांचमुं सम्यक्श्रुत

६–छठुं मिथ्यादृष्टि जीवने जे परिणमे, ते मिथ्या श्रुत जे जणी मिथ्यात्व दृष्टि जीव खोटाने खरुं अने खराने खोटुं जाणे तेथी ए मिथ्यात्वश्रुत छठुं जाणवुं.

७–आदि सहित ते सादि श्रुत. ते आदि द्रव्य, क्षेत्र, काल अने जावनी अपेक्षाए चार प्रकारे छे, तेमज सपर्यवसान कहेतां अंत तेणे सहित ते सपर्यवसित श्रुत, ते पण तेमज चार भेदे छे, त्यां द्रव्यथी एक जीवनी अपेक्षाए श्रुतज्ञान ते सादि अने सपर्य-

वसित छे; केमके भव्यजीव सम्यक्त्व पामे ते वारे श्रुत पामे ते सादि श्रुत; अने वली सम्यक्त्व वमे तिहां, अथवा केवलज्ञान पामे ते वारे भाव श्रुत टली जाय, एटले श्रुतनो अंत थाय, तेथी सपर्यवसित एटले सादि अने सपर्यवसित, ए बे भेद द्रव्यथी कह्या. अने सर्व जीवनी अपेक्षाये श्रुत, अनादि तथा अपर्यवसित छे. जे भणी एम कह्युं न जाय, जे आ संसारमां सर्वथी पहेलुं अमुकने श्रुतज्ञान प्राप्त थयुं अथवा अमुकथी श्रुतज्ञाननो अंत थशे एम अनादि अनंत काल भणी प्रवाह रुपे श्रुतपण अनादि अनंत छे; एटले अनादि अने अपर्यवसित ए बे भेद द्रव्यथी कह्या; ए रीते चारे प्रकार श्रुतना द्रव्यथी कहेवाणा. हवे क्षेत्रथी कहे छे. त्यां भरत ऐरवते जेवारे प्रथम तीर्थ प्रवर्त्ते तेवारे द्वादशांगरुप श्रुत होय ते दिवसथी सादि कहेवाय. तेवार पछी जेवारे तीर्थ विछेद थाय तेवारे श्रुतविछेद होय ते माटे सांत कहेवाय. तथा महाविदेह मांहे तीर्थविछेद न थाय तेथी श्रुतनो पण विछेद न थाय; तेथी अनादि, अनंत, तथा कालनी अपेक्षाये उत्सर्प्पिणी, अवसर्प्पिणीकाले त्रीजा आराने प्रांते, चोथे अने पांचमे होय; अने छठा आरामां विछेद थाय तेथी सादि सांत कहिए; तथा उत्सर्प्पिणी अवसर्प्पिणीकाले महाविदेहे अनादि अने अनंत जाणवुं, अने भावथी भव्यनी अपेक्षाये सम्यक्त्व पामे तेवारे सादि, अने केवलज्ञान पामे तेवारे सांत, तथा अभव्यनी अपेक्षाये कुश्रुत अनादि अनंत छे ए रीते सादिश्रुत, अनादिश्रुत तथा सपर्यवसित श्रुत अने अपर्यवसित श्रुत ए चार भेद पूर्वोक्त ७ भेद साथे मेलवतां बधा मली दश भेद श्रुतज्ञानना थया.

११–तथा अगीआरमुं गमिक एटले सरखा पाठ आलावा, तेणे करी बांध्युं, जे श्रुत दृष्टिवाद प्रमुख ते गमिकश्रुत.

१२–बारमुं एनुं प्रतिपक्षी अगमिकश्रुत. ते जिहां पाठ सरखा न होय कालिक श्रुतनी पेरे, ते बारमुं अगमिकश्रुत जाणवुं.

१३–तेरमुं अंगप्रविष्टश्रुत. ते आचारांगादिक द्वादशांगीनुं ज्ञान, ते तेरमो जेद.

१४–चौदमुं ते अंगथी बाहेर उपांग, दशवैकालिक, उत्तराध्ययनादिक तथा प्रकरणादिकनुं ज्ञान ते अंग बाह्यश्रुत ए चौदमो जेद जाणवो

ए रीते अक्षरश्रुत, संज्ञीश्रुत, सम्यक्श्रुत, सादिश्रुत, सपर्यवसितश्रुत, गमिकश्रुत, अंगप्रविष्टश्रुत ए सात श्रुतना प्रतिपाक्षिक विरोधी सात जेद, जे अनक्षरश्रुत, असज्ञिश्रुत, मिथ्याश्रुत, अनादिश्रुत, अपर्यवसितश्रुत, अगमिकश्रुत, अंगबाह्यश्रुत, ए सात जेद मेलवतां चौद जेद श्रुतना कह्या

तथा द्रव्य, क्षेत्र, काल, अने जाव. ए चार प्रकारे श्रुतना जेद कहे छे, त्यां द्रव्यथी पूर्ण श्रुतज्ञानी, आदेशे जिनवचनथी सर्व द्रव्य जाणे, क्षेत्रथी सर्व क्षेत्र आदेशे जाणे, कालथी आदेशे सर्वकाल जाणे, जावथी श्रुत ज्ञानी, आदेशे सर्व द्रव्यना अभिधेय पर्याय जाणे, एम चार प्रकारे श्रुतज्ञान छे अने आवरण क्षयोपशम विचित्रतायें अनेक जेद थाय. जे जणी चौद पूर्वधर मांहे एक एकथी अनंत गुण वृद्धि हानीए करी, चढता पडता ठगण वडिया होय.

हवे वीश जेद, श्रुतना कहे छे

" पज्जाय अक्कर पय सं, घाय पडिवत्ति तहय अणुउंगो॥
पाहुमपाहुड पाहुम, वत्थु पुवाय ससमासा "

अर्थ'–(पज्जाय के०) पर्यायश्रुत,(अक्कर के०) अक्षरश्रुत, (पय के०) पदश्रुत, (संघाय के०) संघातश्रुत, (पम्विवत्ति के०) प्रतिपत्ति श्रुत, (तहय के०) तेमज वली, (अणुउंगो के०) अनुयोगश्रुत, (पाहुमपाहुम के०) प्राभृतप्राभृतश्रुत, (पाहुम के०) प्राभृतश्रुत, (वत्थू के०) वस्तुश्रुत; (पुवाय के०) पूर्वश्रुत ए दशने वली आगल - (स-

समासा के०) समास सहित करीए एटले पर्यायसमासश्रुत, अक्षरसमासश्रुत, पदसमासश्रुत, संघातसमासश्रुत, प्रतिपत्तिसमासश्रुत, अनुयोगसमासश्रुत, प्राभृतप्राभृतसमासश्रुत, प्राभृतसमासश्रुत, वस्तुसमासश्रुत पूर्वसमासश्रुत, ए रीते ए दश साथे पूर्वोक्त दश मेलवतां श्रुतज्ञानना वीश भेद थाय.

त्यां सूक्ष्म निगोदिओ लब्धि अपर्याप्तो जीव, तेहने भव प्रथम समये जेटलो जघन्य कुश्रुत तेथी बीजे समये जेटलो ज्ञाननो एक अविभाग परिछेद अंश वधे ते प्रथम पर्यायश्रुत जाणवुं. तेवा बे चार पर्याय. ते बीजुं पर्यायसमासश्रुत जाणवुं.

अकारादि लब्ध्यक्षर अनेक व्यंजन पर्याय सहित जाणवो ते त्रीजुं अक्षरश्रुत. एवा बे चार लब्ध्यक्षरनुं ज्ञान ते अक्षरसमासश्रुत चोथुं जाणवुं.

तिहां अकार ककारादिक जे छे ते भिन्न भिन्न अक्षर संयोगे भिन्न भिन्न अर्थना वाचक थाय ते व्यंजन पर्याय. जिहां अर्थ पूर्ण थाय तेटला अक्षर समूहनुं नाम पद कहीए; तेनुं ज्ञान ते पदश्रुत पांचमुं जाणवुं: एवा घणा पदनुं ज्ञान ते पदसमासश्रुत छठुं जाणवुं.

तथा गत्यादिक अन्यतर मार्गणा द्वार मध्ये एक मनुष्यादिक गतिना जीव भेदनुं ज्ञान ते संघात श्रुत सातमुं जाणवुं, अने मनुष्य, तिर्यंच, देवतादिक एम बे त्रण गत्यादिक जीवभेदनुं ज्ञान ते संघातसमासश्रुत आठमुं जाणवुं.

गत्यादिक मार्गणा द्वार मध्ये एक गत्यादिक द्वार मांहे सर्व संसारी जीवना भेद अवतारवानुं ज्ञान, ते प्रतिपत्तिश्रुत नवमुं जाणवुं. एवो बे चार मार्गणा द्वारे जीव भेद विवरे, ते प्रतिपत्ति समासश्रुत दशमुं जाणवुं.

तेमज गत्यादिक मार्गणा द्वार अवलंबीने जीवादिक पदार्थनुं सत्पद प्ररूपणादिक अर्थ कहेवाता द्वार तेमध्ये एक अनुयोगद्वारे

निरूपण करवुं. जेम देव पद, एक जेद जणी उता अर्थनुं वाचक ठे जे अउति वस्तुनो वाचक ते एक पद न होय. जेम खर, शृंग, देव ए बे पद नथी ते जणी ए अउति वस्तु न होय. एम उता पदनी प्ररूपणा करवी तथा देवता असंख्याता अने मनुष्य संख्याता द्रव्य प्रमाण ठे. एम (अणु के०) सूत्रनो अर्थ साथे जोमवो ते अगीआरमुं अनुयोगश्रुत जाणवु. एम घणी जातिए अनुयोग कहेवो ते बारमुं अनुयोगसमासश्रुत जाणवुं.

प्राजृतप्राजृत एवे नामे, दृष्टीवादमध्ये अधिकार विशेष ठे. जेम अंगमांहे अध्ययनना उद्देशा होयठे तेम पूर्वमांहे कषाय पाहुम, कर्म पाहुड, ते मध्ये अधिकार विशेष पूर्ण पूर्ण थये पाहुमपाहुड पूर्ण थाय. तेवा एकनुं ज्ञान ते तेरमुं प्राजृतप्राजृतश्रुत जाणवुं. अने एवां बे चार प्राजृत प्राजृतनुं ज्ञान ते चौदमुं प्राजृतप्राजृतसमासश्रुत जाणवुं.

तथा घणे पाहुमे पाहुडे एक पाहुम होय. जेम घणे उद्देशे एक अध्ययन होय ठे एवुं एक पाहुमनुं ज्ञान, ते पंदरमुं प्राजृतश्रुत जाणवुं तेहवा बे चार प्राजृतनुं ज्ञान ते शोलमुं प्राजृतसमासश्रुत जाणवुं.

तेम घणे पाहुडे एक वस्तु एवे नामे अधिकार थाय ठे, जेम अध्ययनना समुदाए सुयस्कंध थाय ठे, एवो एक पूर्वाधिकार ते सत्तरमुं वस्तुश्रुत जाणवुं. अने एवी बे चार वस्तुनुं ज्ञान ते अढारमुं वस्तुसमासश्रुत जाणवुं

तथा घणी वस्तुए एक पूर्व होय, एवा एक उत्पादादिक पूर्वनुं जे ज्ञान ते ओगणीशमुं पूर्वश्रुत जाणवुं. तेमज एक उत्पादपूर्व, बीजुं अग्रायणीय, त्रीजुं वीर्यप्रवाद, चोथुं अस्तिप्रवाद, पांचमुं ज्ञानप्रवाद, छठुं सत्यप्रवाद, सातमुं आत्मप्रवाद, आठमुं कर्मप्रवाद, नवमुं प्रत्याख्यानप्रवाद, दशमुं विद्याप्रवाद, अगीयारमुं कल्याण, बारमुं प्राणवाद,

तेरमुं क्रियाविशाल; चौदमुं लोकविंदुसार, ए चौद पूर्वनुंज्ञान; ते वीशमुं पूर्वसमासश्रुत जाणवुं. एम श्रुतना वीश नेद थया.

अविरति अज्ञान आदि दोषो टालवानुं साधन श्रुतज्ञान छे, पढी अवधिज्ञान कह्युं तेना ७ नेद कहे छे.

॥ अणुगामि वड्ढमाणय, पमिवाईयर विहा गहा उंही ॥
॥ रिजमइ विउलमई मण, नाणं केवल मिगविहाणं ॥

अर्थ— (अणुगामि के०) लोचननी पेरे साथे चाले ते अनुगामि अवधिज्ञान. (वड्ढमाणय के०) तथा निरंतर वधे ते वर्द्धमान अवधिज्ञान. (पडिवाइ के०) आवीने पाछुं जाय, ते प्रतिपाति अवधिज्ञान कहीए. ए त्रणथकी (इयरविहा के०) इतरविधा एटले प्रतिपक्षीपणे नेद. जेम के अननुगामि, हीयमान अने अप्रतिपाति, ए त्रण मेलवतां (गहा उंही के०) ७ नेदे अवधिज्ञान होय. हवे गाथाना उत्तरार्द्धमे मनःपर्यव तथा केवलज्ञान कहे छे. (रिजमइ के०) रुजु सामान्य पणे जाणे ते रुजुमति. अने (विउलमई के०) विस्तारे जाणे ते विपुलमति. ए रीते (मण नाणं के०) मनःपर्यव ज्ञान बे नेदे छे. अने (केवल मिगविहाणं के०) केवलज्ञान ते एकज विधान एटले एक नेदे जाणवुं. ए बधा मली पांचे ज्ञानना एकावन नेद कह्या. ॥ इत्यक्षरार्थ. ॥

१ त्यां जे जीवने, जे स्थानके अवधिज्ञान ऊपन्युं त्यांथी जेटलुं क्षेत्र, चारे दिशाओ तरफ देखे, तेटलुं क्षेत्र ज्यां ज्यां जे जे क्षेत्रे जाय, त्यांथी आगल आगल तेटलुं तेटलुंज देखे. ए लोचननी पेरे अनुगामिक अवधिज्ञाननो प्रथम नेद जाणवो.

२ अने जे हाटना दीपकनी पेरे अथवा शृंखला बद्ध दीवाना प्रकाशनी पेरे ज्यां अवधिज्ञान ऊपन्युं त्यांथी चारे दिशाए तेटलुंज

देखे; परंतु ते क्षेत्र अतिक्रम्या पठी आगल न देखे ते अननुगामि अवधिज्ञाननो बीजो भेद जाणवो

३ तथा जे जीवने जेटलुं अवधिज्ञान ऊपन्युं छे; ते थकी दिवस दिवस प्रत्ये अध्यवसाय विशुद्धे करी द्रव्य, क्षेत्र, काल, अने भावापेक्षाए अवधिज्ञान वधतुं जाय, विषय पण वधतो जाय, विशुद्ध थाय, ते त्रीजुं वर्द्धमान अवधिज्ञान जाणवुं

४ अने जे संक्लेशे करी मलिन थाय, निरंतर हलवे हलवे घटतुं जाय, ते हीयमान चोथुं अवधिज्ञान जाणवुं.

५ तथा जे अवधिज्ञान आव्युं, भवक्षये देवता तथा नारकीने जाय, अने गुण क्षये जेम चेलाने काजो उष्णरतां भाव विशुद्धिए अवधिज्ञान उपन्युं तेटलामां इंद्रनी साथे इंद्राणी रीशावी हती ते इंद्रे इंद्राणी मनावता देखी ते चेलाने हास्य आव्युं ते संक्लेशे करी अवधिज्ञान गयुं ए पाचमुं प्रतिपाती अवधिज्ञान जाणवुं. ए दीपक ओलवायानी पेठे एक कालने विषेज निर्मूल थाय

६ तथा जे परमावधिज्ञान केवळ ज्ञानथी पहेलुं अंतर्मुहूर्त्ते अति विशुद्ध आवे ते पठी अंतर्मुहूर्त्तने आंतरे केवळज्ञान उपजे तेमांहे ते अवधि समाई जाय जेम तारादिकनां तेज सूर्यना प्रकाश माहे समाई जाय अने प्रकाश एकलो सूर्यनो कहेवाय, तेम अहि पण छाद्मस्थिक ज्ञान नाठां कहेवाय, एकलो केवलालोक कहेवाय पण ज्ञेय विषय जाणवानो विरह न होय तेथी ते छठ्ठु अवधिज्ञान अप्रतिपाति जाणवुं

ए रीते अनुगामि, वर्द्धमान, प्रतिपाति ए त्रण भेदना इतर एटले उपरांठा बीजा विरोधिभेद अननुगामि हीयमान अने अप्रतिपाति ए त्रण भेद एकठा मेलवतां छ भेद थाय.

१ अवधिज्ञानी द्रव्यथी जघन्य पणे अनंत रूपी द्रव्यने जाणे

तथा देखे अने उत्कृष्टथी सर्व रूपी द्रव्यने जाणे देखे; एम द्रव्य विषय भेदे अनंता भेद थाय.

२ तथा क्षेत्रथी अंगुलनो असंख्यातमो भाग विषईआथी मांडीने प्रदेशाधिक प्रदेशाधिक क्षेत्र विषईआ वधतां वधतां असंख्यात लोकाकाश क्षेत्र विषईआ उत्कृष्ट क्षेत्रावधि लगे असंख्यात भेद होय.

३ तथा कालथी जघन्य पणे आवलिना असंख्यभागपरिमाण अतीत अनागत काल, उत्कृष्टपणे तो असंख्यात कालचक्र समय प्रमाणावधिथी मांमीने समय समय प्रमाण अतीत अनागत रूपी द्रव्य विषईक जाणे देखे एम असंख्य भेद थाय.

४ तथा भाव थकी जघन्य पणे अनंत भावने जाणे देखे अने उत्कृष्टथी पण अनंत भावने जाणे देखे ते भावावधिज्ञान जाणवुं. विभंगज्ञान ते मिथ्यात्वीने होय, ते माटे मलिन छे. अवलुं सवलुं जाणे पण ते अवधिज्ञाननीज जाती छे ते माटे एकत्र जाणवुं एम अवधिज्ञान भेद सहित कह्युं.

हवे जेम अवधिज्ञान विकल प्रत्यक्ष तेम मनःपर्यव ज्ञान पण विकल प्रत्यक्ष छे; जेम अवधि ब्रह्मस्थने होय तेम मनःपर्यव पण ब्रह्मस्थने होय, एवी सरखाई पणे करी हवे अवधिज्ञान पछी मनःपर्यव ज्ञान कहे छे.

ते मनःपर्यव ज्ञान बे भेदे छे. प्रथम रुजु के० सामान्यपणे स्थूलपणे ए पुरुषे घट लाववुं मूकुं? एम चिंतव्युं एवुं जे पारका मननुं जाणवुं ते मनःपर्यव ज्ञाननो रुजुमति नामे प्रथम भेद जाणवो.

तथा विपुल के० विस्तीर्णपणे घणा पर्याय सहित जाणवुं ते आवी रीते के एणे चिंतवेलो घट अमुक नगरमां थएलो, वर्णे रातो, परिमाणे एक, मण पाणीनो समावेश थाय एवो, द्रव्ये त्रांबानो, अमुकनो घडेलो इत्यादिक घणा विशेषे सहित पारका मनमां चिंतवेलो घट

तेने जाणे ते विपुलमति नामे मनःपर्यव ज्ञाननो बीजो जेद जाणवो. ए बे जेदे मनःपर्यव ज्ञान कह्युं,

हवे एक एकना वली चार चार जेद विशेषे कहे छे.

१ प्रथम द्रव्यथकी ऋजुमति, मनोवर्गणा द्रव्य अनंतानंत प्रदेशीआ जाणे तेथी विपुलमति बहु प्रदेशीआ अति सूक्ष्म मनोद्रव्य जाणे. २ बीजुं क्षेत्रथी ऋजुमतिवाळो मनुष्य क्षेत्रमांहे तीर्छुं अढीद्विप लगे, तथा उंचुं ज्योतीषीना उपरना तला लगे, अने नीचुं उंडी विजय छे त्यां लगे एटले रत्नप्रजा पृथ्वीना क्षुल्लक प्रतर लगे, एम अढारसें योजनमां रह्या जे संज्ञी पंचेंद्रिय जीव तेना मनने जाणे अने ते थकी अढी अंगुल क्षेत्र अधिक विपुलमति विषय विशुद्ध पणे जाणे छे.

३ काल थकी ऋजुमतिवाळो पल्योपमनो असंख्यातमो जाग अतित अनागत चिंतव्युं तथा चिंतवशे तेने जाणे, अने विपुलमति ते थकी कांइक अधिकेरुं जाणे.

४ जावथी ऋजुमति चिंतवेला द्रव्यना असंख्याता पर्याय जाणे अने विपुलमति तेथी अधिक जाणे, एम मनःपर्यवज्ञान कह्युं

हवे जेम मनःपर्यवज्ञान सर्व विरति ठते होय तेम केवलज्ञान पण सर्व विरति ठते होय, ए सगते मनःपर्यवज्ञान कह्या पठी केवलज्ञान कहे छे, तिहां द्रव्यथी रुपी तथा अरुपी सर्व द्रव्यने जाणे अने क्षेत्रथी लोक अलोक क्षेत्र अनंतो जाणे, कालथी सर्वाद्धा विषयने जाणे, जावथी सर्व गुणपर्याय विषद्यो एकरुप शुद्ध निरुपाधि अप्रतिपाति सकल ज्ञानावरण क्षये प्रगट थयो जे शुद्धात्मगुण सर्व विशेषे प्रकाशरुप ते केवलज्ञान कहीए, तेहने सर्व पदार्थ प्रकाशे करी आवरणरुप उपाधिने अजावे ज्ञेयवस्तुने अविशेषे करी इगविहाणं के० एक सरखो छे तेथी ए ज्ञाननो बीजो जेद कोइ नथी.

ए रीते मतिना अठ्ठावीश, श्रुतना चौद अथवा वीश, अवधि-

ना छ, मनःपर्यवना बे तथा केवलज्ञाननो एक एम सर्व मली पांचे ज्ञानना एकावन नेद अथवा सत्तावन नेद कह्या.

हवे ए पांचे ज्ञाननां आवरण कहे छे.

॥ एसिं जं आवरणं, पडुच्च चक्खुस्स तं तयावरणं ॥

(एसिंजं के०) ए मति प्रमुख पांच ज्ञाननुं जे. (आवरणं के०) रोधक आछादन करनारुं तेने ज्ञानावरणीय कर्म कहीए. जेम (पडुच्च चक्खुस्स के०) आंखनो पाटो आंख प्रकाशनुं आवरण तेम मति-ज्ञानादिकना जाणवाना विषय पदार्थने जे हरकत करे (तं के०) ते (तयावरणं के०) ते ज्ञाननुं आवरण जाणवुं. इत्यक्षरार्थ.

ज्ञान पांच प्रकारे छे तेथी तेना आवरणना पण पांच नेद छे. तेमां जेम पाटो बांधे थके आंखनुं तेज अवराय; तेम जे कर्मे करी मतिज्ञान अवराय ते मतिज्ञानावरणीय कर्म कहिए. एवीज रीते जे कर्मे करी श्रुतज्ञान अवराय ते श्रुतज्ञानावरणीय कर्म कहीए, तेमज जे अवधिज्ञानने आवरे ते अवधिज्ञानावरणीय कर्म कहीए, तथा मनःपर्यवज्ञानने आवरे ते मनःपर्यवज्ञानावरणीय कर्म कहीए, केवल संपूर्ण ज्ञान आवरे; जेम मेघ सर्व सूर्यनी प्रजाने आवरे एवुं जे कर्म ते केवलज्ञानावरणीय कर्म कहीए. अहिं जीव चेतनप्रकाश-स्वरुप, जीवरुप सूर्य ते केवलज्ञानावरणरुप वादले करी सर्व ढंकाय तो पण अक्षरनो अनंतमो नाग सर्व जीवने उघाडो रहे. अहिं श्रुत केवलज्ञान साधारण पर्यवाक्षर लेवुं जे जणी अनिधेय वस्तुधर्म ते स्वपर्याय छे; अने अनअनिधेय वस्तुधर्म ते परपर्याय छे; अने केवल-ज्ञानना तो ते अनिधेय, अननिधेय बेहु स्वपर्याय छे. एम बेहु ज्ञानना पर्याय सरखा होय ते पर्यवाक्षर तेहनो अनंतमो नाग उत्कृष्टो श्रुत केवलीने होय, अने जघन्य नाग निगोदिआ जीवने आहारसंज्ञादि चेतनारुप होय; कदापि ते पण ढंकाय तो जीव चैतन्यपणाने अजावे

अजीव कहेवाय तेथी तें वादले करी पण ढांकी न शकायो एवो, जे रात्रि दिवस विभागकारी सूर्यतेज सरखो चेतनारूप जीव गुण करवा कांवला सरखो सर्व देशघाती मतिज्ञानावरणादिक चार प्रकृतीए आवरीये, तेथी तेने क्षयोपशमविशेषे न्हाने मोटे अर्ऊछिडे प्रसरतां रविप्रकाशनी पेरे ज्ञाननुं तरतमपणुं होय तेमांहे पण एक मनःपर्यवज्ञान, बीजुं अवधिज्ञान ए बेहु ज्ञानना आवरणना केटलाएक रसस्पर्द्धक, सर्व घातिया, शेष देश घातियापणे ए बेहु क्षयोपशमथी अविरोधजणी देशघाति कह्यां, अने केवळज्ञानावरण सर्व घाति होय ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय, अंतराय, ए चार घाती कर्म कहिये, एम ज्ञानावरणीना पांच भेद कह्या ए सर्वे ज्यां सुधी आत्माना ज्ञानादिक गुणनुं सन्मान आव्युं नथी त्यां सुधी सर्व समये ज्ञानावरणीय कर्म बंधाय छे; माटे आत्माना ज्ञानादिक गुणनुं सन्मान आदरी निर्मल उपयोगे ज्ञानगुणमां परिणति स्थिर करवी

हवे ज्ञेय अधिकार लखीए छिये.—पंचास्तिकाय द्रव्य छे, छठो काल द्रव्य उपचारथी छे, ते पुद्गलादि द्रव्यनो वर्तनापर्याय छे, ते पंचास्तिकायने सामान्य अने विशेष स्वभावे जाणी परद्रव्यनुं ममत्व अने रागादि तजी पोताना सामान्य विशेषमयी सदालक्षण अभेदपणे निज स्वभावमां स्थिर थवुं तेमां प्रथम दश महासामान्य स्वभाव लखीए छिये.

१—उत्तरसामान्य अने विशेष स्वभाव जेने आधारे रहे छे एटले उत्तरसामान्य अने परिणामिकत्वादि विशेष स्वभावने सदाए कायम राखनारो आधारभूत जे धर्म, ते आस्ति स्वभाव कहीए

२—गुण अने पर्यायनो आधार एटले जेने आधारे स्वगुण पर्याय रहे छे ते वस्तु स्वभाव, बीजो जाणवो,

३—अर्थक्रियाकारीत्वपणानो आधार एटले जे माहे कार्य धर्मना अनंत तीरोभावे छतिपर्याय रहेला छे, तेज पर्याय कार्य करवाने माटे

समये समये सामर्थ्य पणे ऊपजे; अने पाछा तीरोभावे द्रव्यत्वमांहे द्रवे एटले जे मांहे उत्पाद व्यय प्रजायनी जनक शक्ति छे, ने आवीरभाव अने तीरोभावनो आधार पण एज छे ते द्रव्यत्व स्वभाव त्रीजो जाणवो.

४–जीव पुद्गलादिक द्रव्य जेटला छे तेमांथी कोई समये एक वधे के घटे नहि, परमाणु खंधादिकपणे परिणमे, खंध परमाणुपणे परिणमे. पण परमाणुनी गणतीमां कोई काले घटे वधे नहि; तेम जे जे द्रव्यमां जेटला गुणो अने पर्यायो जे जे जातना छे तेटलाज रहे. एक द्रव्य बीजा द्रव्यनुं कार्य करे नहि, एक गुण अन्यगुणना कार्यने करे नहि, अने आप आपणुं कार्य छोडे नहि, जे काले जे द्रव्यनो जे गुणनो जे पर्याय व्यक्ति शक्तिपणे थवानो होय तेमां फेरफार न पडे; एटले कोई द्रव्य, कोई गुण, कोई पर्याय पोतानी मर्यादा छोडे नहि तेने प्रमेय स्वभाव कहीए. ज्ञानवडे जेनुं प्रमाण थई शके छे ते प्रमेय स्वभाव जाणवो.

(५) पंचे अस्तिकायनीसत्ता उत्पाद, व्यय, ध्रुवरूप छे एक समयनी अंदर उत्पाद, व्यय, ध्रुव जेनी अंदर पामीए ते द्रव्यनुं सत्लक्षण जाणवुं एटले सर्वे समये द्रव्यना पर्यायने उपजतां अने विणसतां पण सत्ता कायम रहे एवा धर्मने सतत्व स्वभाव कहीए.

६–द्रव्यना पर्याय सर्वे समय खटगुण हाणिवृद्धिपणे उत्पाद, व्यय थतां द्रव्य गुरुता लघुताने पामे नहि अने उत्पाद व्ययनो आधार तेने अगुरुलघु स्वभाव कहीए.

७–चेतनत्व एटले सर्वे द्रव्यना त्रिकालवर्त्तीना प्रमेयने जाणनारो जे स्वभाव ते चेतनत्व स्वभाव कहीए.

८–अचेतनत्व एटले स्वपर पर्यायने जाणे नहि ते अचेतनत्व नामे आठमो स्वभाव कहीए.

९–मूर्त्तत्व एटले जे मांहे स्पर्श, रस, रूप, गंध, संस्थान आदि होय तेने मूर्त्तत्व स्वभाव कहिए.

१०–अमूर्त्तत्व एटले जेमांहे वर्णादि न होय तेने अमूर्त्तत्व स्वभाव कहीए, ए दश मांहेला पाठला चेतनत्वादि चार मांहेला बे बे स्वजाति अपेक्षाए सामान्य, अने परजाति अपेक्षाए विशेष स्वभाव जाणवा. ए मांहेला आठ स्वभाव सर्वे द्रव्यमांहे सदा पामीए

हवे ऊत्तरसामान्य स्वभाव अनंता छे पण मुख्य तेर स्वभाव अहिंआं लखीए छिए. (१) अस्तिस्वभाव, (२) नास्तिस्वभाव, (३) नित्यस्वभाव, (४) अनित्यस्वभाव, (५) एकस्वभाव, (६) अनेकस्वभाव, (७) भेदस्वभाव, (८) अभेदस्वभाव, (९) ज्ञेयस्वभाव (१०) अज्ञेयस्वभाव, (११) वक्तव्यस्वभाव, (१२) अवक्तव्यस्वभाव, (१३) परमस्वभाव. तेमां हवे अस्ति स्वभावनुं लक्षण लखीए छिए

पोताना द्रव्यादि चारमां जेनो व्यापकपणो सर्वे समये छे तेने अस्तिस्वभाव कहिए द्रव्य ते गुण पर्याय प्रदेशनो एक पिंडाधारपणो ते स्वद्रव्य, क्षेत्र ते प्रदेशरूप स्वगुण प्रवृत्ति थवानुं स्थानक ते स्वक्षेत्र, काल ते उत्पाद, व्यय, ध्रुवपणे नवा नवा पर्याये सर्वे समये वर्त्तवुं ते स्वकाल, भाव ते स्वगुण पर्यायनो कार्य धर्म ते स्वभाव. तिहां जीव द्रव्यनो स्वद्रव्य प्रदेश गुणनो समुदाय द्रव्य छे ते गुण पर्यायनो जनकपणो ते स्वद्रव्य अने जीवना असंख्याता प्रदेश एटले जाणवा देखवादि स्वकार्यना पर्यायने रहेवानुं स्थानक ते स्वक्षेत्र, पर्याय मध्ये कारण कार्यादिनो जे उत्पाद, व्यय, ते स्वकाल तथा अतित, अनागत, वर्त्तमाननो परिणमन ते स्वभाव सर्वे काले सरखोज होय तेने स्वभाव कहीये. जेम कार्यादि धर्म, ज्ञान गुणनो पर्याय जाणंगपणो, वेत्तापणो, परपरिछेदकपणो, विवेचनपणो इत्यादि स्वभाव जाणवा. एम स्वद्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, जे परिणामिकपणे परिणमतां सदा रहे तेनी अस्तिता जाणवी, ए सर्वेनी छति सदाए छति रहे ते अस्तिस्वभाव जाणवो. ए अस्तिस्वभावे द्रव्य छे, ते पोतानो मूल धर्म चूकी अन्यना धर्म पणे परिणमतो नथी, परिणामांतरे आगमन छे, ए

अस्तिस्वभाव ते सर्व द्रव्यमां पोताना गुण पर्यायनो जाणवो. जे अस्ति ते सद्रूपता तथारूपपणानी परिणति लेवी सर्वे द्रव्य पोताने धर्मेज परिणमे पण जे जीव द्रव्य ते अजीवद्रव्यपणे न परिणमे, तथा एक जीव ते अन्यजीव पणे न परिणमे, वली एक गुण ते अन्यगुणपणे न परिणमे, ज्ञान गुण विषे दर्शनादि गुणनी नास्तिता छे, अने ज्ञानना धर्मनी अस्तिता छे. तथा एक गुणना पर्याय अनंता छे ते सर्व पर्यायधर्मे सरिखा छे; पण एक पर्यायना धर्म बीजा पर्यायमां नहि, अने बीजा पर्यायना धर्म पहेला पर्यायमां नहि; माटे सर्व पोताने धर्मेज अस्ति छे. ए रीते अस्ति नास्तिनुं ज्ञान सर्वत्र करवुं ए द्रव्यने विषे प्रथम अस्ति स्वभाव कह्यो.

(२) एक जीवमां अन्य जीवना तथा पुद्गलादिक अन्य द्रव्यना द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, सामान्य विशेष स्वभावनो अभाव छे एटले अन्य द्रव्यादिक रुपे न थवानो स्वभाव तेने नास्ति स्वभाव कहीए वली भगवती सूत्रमां कह्युं छे ते नीचे प्रमाणे.

॥ "अत्थिते अत्थितं परिणमयी, नत्थिते नत्थितं परिणमयी॥

माटे ए विषे वधारे जाणवाना जीज्ञासुओए ग्रंथांतरथी जाणवुं.

३–सर्वे द्रव्यना स्वभाव सदाकाल अव्ययपणे रहे, द्रव्यथकी जूदा न पडे ते नित्य स्वभाव जाणवो.

४–सर्वे द्रव्यना पर्याय समये समये षट्गुणहाणिवृद्धिपणे परिणमे छे ते अनित्य स्वभाव जाणवो, जो पर्याय न पलटे तो अर्थक्रियाकारित्वपणुं सधे नहि माटे अनित्य स्वभाव अवश्य मानवो.

(५) द्रव्य पोताना गुण पर्याय सामान्य विशेष एकाधारत्वपणे वर्त्ते ते एक स्वभाव जाणवो.

६–दरेक द्रव्यमां क्षेत्र, काल, भाव, प्रदेश, गुण, पर्याय, कार्य धर्म अनेक छे माटे अनेक स्वभाव जाणवो. जो द्रव्यमां एक स्वभाव

न होय तो एकत्वाभावे सामान्यनो अभाव थाय अने अनेकत्वाभावे विशेष धर्मनो अभाव थाय

७–सर्वे द्रव्य पोतपोताना भिन्न भिन्न कार्यने करे, जेम जीव ज्ञान, दर्शन, चरणादि अने पुद्गल वर्ण, गध, रस, स्पर्शादिक भिन्न भिन्न कार्य करे माटे भेद स्वभाव जाणवो

८–दरेक द्रव्य पोतपोतानुं भिन्न भिन्न कार्य करवा छतां द्रव्यने प्रदेशथी गुण पर्याय जूटा पडे नहि, एकत्वपणे रहे माटे अभेद स्वभाव जाणवो भेदाभावे सर्वे गुण पर्यायनो शंकर दोष आवे गुण गुणी, लक्ष लक्षण, कार्य कारणता नाश थाय अने अभेदाभावे स्थान ध्वंश थाय एटले गुणी कोण? अने गुण कीयो?

९–द्रव्यमां समय समय नवा नवा पर्यायनो उपजवो अने पूर्व पर्यायनो व्यय थवो ते भव्य स्वभाव कहीए उपज व्यय विना कार्य थाय नहि माटे द्रव्यमां भव्य स्वभाव अवश्य मानवो.

१०–अने द्रव्य पोताना द्रव्य, गुण, पर्याय ठोमी अन्य द्रव्य गुण पर्यायपणे न परिणमे सदा पोताना रूपे अवस्थित रहे ते अभव्य स्वभाव जाणवो. द्रव्यने पोतानो स्वभाव सर्वे समय अवस्थित न रहे तो अन्य द्रव्य गुणपणाने पामी सत्ता नाश पामे

११–दरेक द्रव्यमांहे केटलाक एवास्वभाव छे के वचन गोचर आवे तेने वक्तव्य स्वभाव कहीये.

१२–वली केटलाक धर्म एवा छे के वचन गोचर आवे नहि तेवा धर्मने अवक्तव्य स्वभाव कहीए, वक्तव्य स्वभाव करतां अवक्तव्य स्वभाव अनंतगुणो छे.

१३–धर्मास्तिकायादिक तेना विशेष गुणो ते धर्मास्तिकायनो चलण सहकारीपणो, अधर्मास्तिकायनो स्थितिसहायपणो, आकाशास्तिकायनो अवगाहदान गुण, पुद्गलनो पूरणगलण, जीव द्रव्यनो

चेतना लक्षण, ए विशेष गुण कह्या. एम लक्षण, रूप, तथा द्रव्यांतरथी जिन्न पामवानुं मूल कारण ते परमस्वभाव कहीए.

ए ऊपर कहेला तेर ऊत्तर सामान्य स्वभावनां लक्षण संक्षेपथी बताव्यां विशेष ग्रंथांतरथी जाणीलेवुं

हवे दश विशेष स्वभाव लखीए ठिए.

(१) चेतनस्वभाव, (२) अचेतनस्वभाव, (३) मूर्तस्वभाव, (४) अमूर्तस्वभाव, (५) एकप्रदेश स्वभाव, (६) अनेकप्रदेश स्वभाव, (७) भावस्वभाव, (८) विभावस्वभाव, (९) शुद्धस्वभाव, (१०) अशुद्धस्वभाव. ए रीते दश विशेष स्वभाव संक्षेपे कह्या.

हवे प्रथम लखेला तेर सामान्य स्वभावने ऊपर लखेला दश विशेष स्वभाव मलीने सर्वे त्रेवीश स्वभाव थया; तेमांथी चेतनादिक चारमांथी बे बे सर्वे द्रव्यमां होय एटले एकवीश स्वभाव जीव अने पुद्गलमां पुराठे बाकीना द्रव्यमां विभावादि नथी. एम सर्वे द्रव्य पोत पोताना सामान्य विशेष स्वभाव सहित सर्वे काल लक्ष लक्षण अभेदपणे शाश्वता ठे, कोई लक्ष अन्यपणाने पामतो नथी, कोइनुं लक्षण कोई अन्य द्रव्यमां जतुं नथी, अतीत कालमां पण पररुपे थयुं नहोतुं, आवते काले पण अन्यरुपे थशे नहि, माटे पोते जीव जाति, ज्ञानघन, अनंत ज्ञायकता सहित ठे तेमां अनंत स्वजाति अन्यद्रव्यना अने परजाति अन्यद्रव्यना लक्ष लक्षण आवे नहि तो स्वज्ञेय शिवाय सर्वे स्वजाति अन्यद्रव्य अने परजाति सर्वे द्रव्य लक्ष लक्षण सहित पोतानी ज्ञायकतामां भासे; ते ज्ञेयरुप सर्वे परवस्तु जाणी ऊदासिन्नवृत्तिए ते ऊपरनो राग द्वेष ममत्व ऊठावी आपणा खपनां नथी ए वस्तु आपणने कांई गुण अथवा हरकत थई शकती नथी अनंत काल एनाज ममत्व संसर्ग परिचयथी पोताना स्वरुपने भूल्या ठिए. जेम कोई चंमालणी महा क्रुर अने दुष्टस्वभाववाली स्त्री तेल, कपुर, काचली, काजळ आदि अंगे लगावी आंख आंजी शरीर समारी कोई

मूढ कामी पुरुषने हाव भावे मधुर वचने ललचावी पोताना वश करी तेना तन, धन, सर्वे सामर्थ्यनो नाश करे, तेम परज्ञेयना रागरुप जे विभाव परिणति ते चेतन पुरुषने अहितकारी छे; तेम उपर लखेला ज्ञेयोथी आपणे कांई कार्य नथी एम जाणी त्यां लक्ष जतो वारी शुरू सिद्धसमान निज रुप लक्षमां राखी चलायमान थवुं नहि. ए प्रमाणे ज्ञेयाधिकार पूरो थयो.

हवे धर्म अधिकार लखीए छिए.

निर्मल स्फटिकमणिसमान जे आत्मवस्तु स्वभाव तेज आत्मानो धर्म छे. जे वस्तुनो जे मूल स्वभाव ते तेनो धर्म कहिए. आपणे आत्मा छिए, आपणो मूल स्वभाव ते आपणो धर्म छे, ए वस्तुस्वभाव धर्म सर्वे सिद्ध अने सर्वे संसारी जीवमां अनादिथी छे पण विभाव स्वभावपडे आत्माए परपुद्गल स्वरुपने पोतापणे जाणी ते उपर रागादिके परिणम्यो एवो संसारी जीव पोताना मूलरुपने भूलेलो छे, ते मूलस्वरुप प्रगट करवाने माटे जे जे कारण व्यवहार तेने कारण अथवा तारण धर्म कहिए, के जे वडे पोते पोताने निजस्वरुप संसार समुद्रथी तारी परमसमाधि स्थान आनंदपुरी रुप मुक्तिमां अनंत आनंद भोगी करीए निश्चयथी पोताने तारनारो पोतेज छे माटे अनंत आनंद भोगी करीए एम लख्युं पण अनंत आनंद भोगी पोतेज थवुं छे, अहिंआं कोइ बीजाने करवानो नथी व्यवहारथी शुरू सद्गुरु तारनार कहिए ए तारण अथवा कारण धर्मना बहु भेद छे, पण अहिआ टुंकामां लख्युं छे एक श्रुतधर्म ते जीवादि नव पदार्थना भाव चार निक्षेपे जाणी आश्रव बंधादि अजीवपरिणाम अजीवकार्य अशुद्धपरिणाम तजवा अने संवर निर्जरादि जीव परिणाम जीव भाव आदरवो भेदज्ञाने करी स्वपर गुणपर्याय लक्षण भिन्नभिन्न जाणी परगुणपर्याय लक्षण उपरथी ममत्व अने रागादि उठावी, उदासिन्नवृत्ति करी, निज गुण पर्यायलक्षणमां लक्ष स्थिर राखी अकंप,

अडोल रहेवुं. वली वांचना, पृछना, परिअट्टना, अनुप्रेक्षा, धर्मकथा एमांहे जे अनुप्रेक्षा लखी छे ते अनित्यादि बार भावना तथा मैत्र्यादिक चार भावना, वली साधुनी पंच भावना, वली एक एक व्रतनी पांच पांच भावना, ए सर्वे अनुप्रेक्षा समजवी एटले जिनेश्वरना प्ररुपेला स्याद्वादमय सिद्धांतोनो वांचवा, विचारवा, भणावबा, सांभलवा, उपदेश देवादि श्रुतधर्म जाणवो. चारित्रधर्म ते पंचमहाव्रत, पंच समिति, त्रण गुप्ति, साधुनो व्यवहार, अने देशविरतीने पंच अणुव्रत, त्रण गुणव्रत, अने चार शिक्षाव्रत ए श्रावकनो व्यवहार जाणवो.

वली क्षांत्यादि दश प्रकारे आत्मधर्म ते ज्ञानादिक भाव प्राण अने इंद्रियादिक दश द्रव्यप्राणमांथी एक पण स्वपर प्राणने एटले छकायना कोइपण द्रव्यभाव प्राणने क्रोधादिके हणवुं नहि ते क्षांतिधर्म (१) अष्ट प्रकारनो मद देहादिनुं ममत्व त्यागी अरिहंत सिद्ध अने धर्माचार्यादि ज्ञानादि गुणवंतनो विनय करवो, वली पोताना गुणनो उत्कर्ष तजी अन्य जीवोनुं पण अपमान न करवुं तें मार्दवनामा बीजो भेद (२) मन, वचन, काया अने परिणामथी कोईनुं कांइ ठगवुं नहि, कपट करवुं नहि, ते आर्यवनामा त्रीजो भेद (३) पोताना ज्ञानादि धनमांहे संतोष राखी अन्य पुद्गल परमाणु मात्रनी पण मूर्छा न राखवी ते मूक्तिनामे चोथो भेद (४) निज ज्ञानदर्शन चरण विलासमां तृप्तिवंत रही पंच इंद्रियोना विषयोने न इछवा अने अणसणादिक बाह्य अभ्यंतर तपे करी शुद्धात्म स्वभावमां तृप्तिवंत रहेवुं ते तपनामा पांचमो भेद (५) पंच इंद्रियोना विषयो, पंच अव्रत, चार कषाय, त्रण योगनी चपलता तजी शुद्धात्म उपयोगमां स्थिर रहेवुं ए संजमनामा छठो भेद (६) परद्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, आपणा द्रव्य क्षेत्र काल भावमां नथी एम जाणी अलिक वचन तजी आपणा द्रव्यादिक मांहे स्थिर थवुं अने वचनपण तेज प्रमाणे बोलवुं ते सत्यनामा सातमो भेद (७) आर्त्त-

रौद्रादिक ध्यान अने कपट आदि मलिन कार्य तजी निज आत्म-अंगे कर्ममल रहित रहेवुं ते शौचनामे आठमो भेद (८) कंचन कोमि मात्रनो परिग्रह प्रपंच न राखवो ते आकिंचननामा नवमो भेद (९) अढार हजार भेदे पुद्गल मथन तजी शुद्ध ब्रह्मरूपे रहेवुं ते ब्रह्मचर्यनामा दशमो भेद (१०) एम दश प्रकारे यतिधर्म अगर आत्मधर्म जाणवो. वली साधु अने श्रावकने ठ आवश्यक अवश्य करवां; ए आदि साधु अने श्रावकनो सर्वे व्यवहार क्रिया धर्म जाणवो. ए तारण धर्मना संक्षेपथी थोडा भेद लख्या विशेषे ग्रंथांतरथी जाणवा अने ऊपरना विशेष अर्थ पण अनुभवीओ पासेथी समजी, जाणी, आदरी, सुखी थाओ! धर्मनुं सार ए के अज्ञान मिथ्यात्व अने कषायवालो आत्म परिणाम थयो ठे तेने भेदज्ञानरुप सावुवमे निर्मल करवो एटले पोते पूर्ण सिद्धताने पामीए; एम संक्षेपथी धर्म अधिकार समजवो. एक शुद्ध अनुभव माहे सर्वे धर्मानुष्ठान समाय ठे पण बालजीव विशेष विना जाणे नहि; माटे सद्गुरु संग करी, सेवा करी, सकल विशेष जाणी लेवु समकित गुणठाणाथी मांडी बारमा गुणठाणासुधी ज्ञान, दर्शन, चारित्रना अंश निर्मल थइ वर्द्धमान धाराने पामे, अने कषायना सर्व अंश दशमे क्षपकश्रेणीना अंते नाश पामे, अने ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वीर्यावरणवमे थएली अशुद्धता बारमा गुणस्थानकना अंतसुधी नाश पामे त्यांसुधी ज्ञानधारा, कर्मधारा मिश्रपणे वर्त्ते माटे मिश्रधारा कहिए माटे मनुष्य जन्म पामी, सद्गुरु योग पामी सम्यक्तज्ञानवमे ज्ञानदर्शन अने चारित्र ए आत्माना त्रणे गुणोनी प्रमाद रहित थइ अंशे अंशे निर्मलता वधारी पूर्ण निर्मलता अने एकता करवी. आत्मा सत्तामांहे अनादि कालनो सिद्ध समान ठे अने अशुद्ध स्वभावपणे अनादिनो ठे तेथी अज्ञान मिथ्यात्व अने कषायवाला परिणाम पोतानी भूलथी करी पोताना स्वरुपने जाणतो नथी. जेम कोइ पुरुष पोतानुं स्वरुप पूछवाने

माटे गुरु पासे गयो, गुरुए कह्युं " अमुक सरोवरमां अमुक नामे मछ रहे छे ते तने ताहरुं स्वरुप बतावशे त्यां तुं जा; " पछी ते पुरुष ते सरोवरना किनारे जइ ते मछना नामथी पोकारी ते मछने पूछयुं के हुं माहरुं स्वरुप जाणतो नथी. मने माहरुं स्वरुप बताव. ते मछ बोल्यो हुं अहिंआं घणा दिवसनो तरस्यो छुं मने क्यांथीपण पाणी आणी आप के हुं तरस मटावी तने उत्तर आपुं. त्यारे ते पुरुष बोल्यो के केवी अचंवानी वात छे ! के रातदिन पाणीमां रहेतां छतां पण तुं कहुं छुं के मने पाणी आणी आप ? त्यारे ते मछ बोल्यो के तुं पण अनादिकालथी पोते चेतनारुप छुं, तुं पोतानारुपने बीजे ठेकाणे शोधुं छुं. ज्यारे तुं दुःखने वेदतो हतो त्यारे ते दुःखना अनुभवथी तन्मय थएलो तुंज पोते चेतनावंत हतो ज्यारे तुं विषयो अने पुद्गल संपदादि सुखने भोगवतो हतो त्यारे पण ते सुखना अनुभवमां तन्मय तुं पोते चेतनावंत हतो एवो अनादिथी चेतना उपयोगवंत तुं पोतेज छुं. उक्तंचः

॥ परिणमदि जेण दव्वं, तक्कालं तम्मयत्ति पण्णत्तं,
तह्मा धम्मं परिणदो, आदा धम्मो मुणेयव्वो ॥

तुं ताहरा स्वरुपने जाणतो नथी ए मोटी आश्चर्यनी वात छे! हवे तुं पोते पोतानुं उपयोगवंत स्वरुप जाणी, अन्यनुं ममत्व छोडी, पोताने स्वरुपे स्थिर रहुं तो शुद्ध अबाधित, एक, नित्य, अनाकुल, परमानंदमय, शुद्धताथी तन्मय तुं पोते एकजछुं. एम जाणवाथी निज शुद्धता पामी सुखी थाय. मात्र उपयोग अशुद्धज्ञान मिथ्यात्व अने कषायवडे मलिन थयो छे ते भेदज्ञानवडे निर्मल करी स्वतंत्र सुखीथा.

हवे समाधि अधिकार लखीए छिए.

जीव अनादि शुद्ध सिद्धसमान सत्तावंत छे विभाववडे पोतानुं स्वरुप जाणतुं नहि, परस्वरुपमां पोतानुं स्वरुप जाणी ते स्वरुपने

राखवा रागादि ऊपन्या तेथी अज्ञान, मिथ्यात्व अने कषाय ए त्रण रूपे अध्यवसाय थई आर्त्त अने रौद्र ध्याने करी समाधि पाम्यो नहि माटे पोतानुं शुद्ध स्वरुप जाणवाथी अज्ञाननी असमाधि मटे, पर-द्रव्यनुं अहपणु टुटवाथी मिथ्यात्वनी असमाधि मटे, अने परवस्तु ऊपरथी रागादि तजवाथी कषायनी असमाधि मटे, एम त्रण प्रकारे अशुद्ध अध्यवसाय वमे ऊपजेली उपाधि मटी समाधि थाय

आर्त्त, रौद्र टाली समाधि करवी ते नीचे प्रमाणे.

१–शरीरने अहंपणे जाणवाथी शरीरना हेतु धन, कुटुंबादि ते इष्ट लागे छे पण ते अथिर पदार्थ आपणी इच्छाए राख्या रहे नहि, अने आपणी इच्छाए परिणमे पण नहि, वली पोतानु स्वक्षेत्र अने ते अन्यनुं क्षेत्र ए जिन्न जिन्न छे. ते एक क्षेत्रे न रहे, तेनी असमाधि उपजे छे पण ज्यारे पोताना जे इष्ट ज्ञान, दर्शन, चरण, वीर्यादिक गुण निज शुद्ध परिणामे स्वतंत्र परनी सहायविना परिणमे छे ते ज्ञान वीर्यादिक निज हेतु स्वक्षेत्रथी जिन्न पमता नथी एम जाणे त्यारे सर्वे असमाधि मटी पूर्ण समाधि पामे

२–ज्यारे शरीरने पोतापणे जाणे छे त्यारे ते पुद्गल ऊपर थता विकारो शत्रु अने परिसहादि अनिष्ट संजोग मटाडवानी चिंतारुप असमाधि उपजे छे पण अचल, अखंडित, अव्याबाधमय, अजंग, निज ज्ञानानंदमय रुपने जाणे अने परद्रव्यादिक पोताना स्वक्षेत्रमा प्रवेश करी शकता नथी एवुं जाणे त्यारे अनिष्ट संयोगनी असमाधि मटी पूर्ण समाधि पामे

३–ज्यारे आत्मा पोताना स्वरुपने अणजाणतो शरीरने पोतापणे जाणे, माने, अनुभवे छे, अने ते शरीर तो अनेक रोगोनु स्थानक छे त्यारे पीडा चिंतवननी असमाधि उपजे छे. पण ज्यारे ज्ञानादिक गुणनो पुंज, शुद्ध चेतनामय, निरामय, निराकुल, सहेज, अविनाशी, त्रिकाल अखंड, स्वपरिणामिकताए परिणमे, अने परपरिणामिकताए

न परिणमे एवुं पोतानुं अंग जाणे त्यारे पीडा चिंतवननी असमाधि मटी पूर्ण समाधिने पामे.

४–सर्वे द्रव्य सर्वे समय पोताना प्रमेयने छोडे नहि, कोइ काले पोताना प्रमेय रहित थाय नहि, त्रिकाल अखंड निज परिणामिकताए रहे. माटे कोइ द्रव्यनी सत्ता नाश पामवानी नथी. पण पुद्गल पर्यायनुं ज्यांसुधी ममत्व छे अने पुद्गल पर्याय विनाशी छे ते वडे आगामी कालनी चिंतानी असमाधि उपजे छे. पण पोताना द्रव्य, गुण, पर्याय, सदा अस्तिपणे, वस्तुपणे, द्रव्यत्वपणे, प्रमेयत्वपणे, सत्त्वपणे, अगुरुलघुपणे, चेतनत्वपणे, अमूर्त्तत्वपणे, सर्व सामान्य अने विशेष स्वभावमयी रहे. कोइ काले नाश के हरकत पामता नथी. पोताने भोगववानी वस्तु पोतामां अभिन्न शाश्वती छे एम जाणे त्यारे आगामि कालनो शोच मटी पूर्ण समाधिने पामे.

ज्ञानादि पोताना इष्ट पोताथी वेगला थता नथी. पुद्गल परिणाम अनिष्ट आत्म सत्तामां प्रवेश करी शकता नथी. एक रस निज ज्ञानअंगमांहे रोगादिनो संभव नथी. आत्मानो प्रमेय गुण पर्याय त्रिकाले कायम छे वगडतो विणसतो नथी. एम जाणवाथी आर्त्तध्याननी असमाधि अने कर्मबंध रहित आत्मा त्रिकाल अखंड समाधि पामे छे.

५–जीव अनादिथी ज्ञानादि, क्षांत्यादि निज आत्मभावप्राणने अणजाणतो ते भावधर्मरूप निज प्राणने न संभाल्या, रखोपुं कर्युं नहि अने छकायना द्रव्यप्राण अने भावप्राणनी हाणि करतो रह्यो. पुद्गलमांहे आपो जाणी लांबा आयुष्य माटे, विषयो माटे, मोह अर्थे, शोभा अर्थे एम अनेक कारणोए छकायना प्राणने मार्या, हण्या, वध बंधन कर्या, अंग छेद्यां, ते वडे ज्ञानावरणादि आठ कर्मबंध करी नरकादि गतिमां छेदन, भेदन, ताडन, तर्जन, असह्य वेदना, परवशताए सही, हाय विलाप करी दुःख पामे, त्यां समाधि क्यांथी होय? माटे शुद्धात्म उपयोगमां स्थिर थइ मन, वचन, कायाए द्रव्य भावप्राणनी हाणिना अध्यवसाय छोडी, निर्मल ज्ञानानंद स्वभावमां स्थिर थवुं.

६–जे वचनथी अने जे चिंतवनथी स्वपर आत्माने हित न थाय एवुं अने जूवुं वचन, अने चितवन करी आत्मा जव चक्रमां जम्यो. माटे स्वपर आत्माने हित नहि एवुं वचन, अने चितवन तजी निज आत्म स्वजावमां स्थिर समाधिए वर्त्तवुं.

७–अनंत कालथी चार प्रकारे परधन चोरतो आत्मा निज ज्ञानादि धन न पाम्यो माटे तीर्थंकर अदत्त, गुरुअदत्त, स्वामीअदत्त, जीवअदत्त तजी वली पुद्गल वर्गणारूप, परद्रव्य परजावरूप, परधन ठोकी पोताना ज्ञानादिक धनने संजाली, वापरी समाधिमय रहेवुं

८–अनंत कालथी आत्माए बहुविध परिग्रह ग्रहण करी करी ज्ञानावरणादि कर्मबंधननो संग्रह करी, रखोपुं करी, चार प्रकारे अनंतवार पुद्गल परावर्त्तन कर्यां त्यां समाधि क्यांथी होय? माटे निजगुण संजाली निज रक्षणाए वर्त्तवुं तेथी परम समाधि पामे

९–जिन आज्ञा जाण्या, मान्या, आदर्या विना जव समुद्रनो अंत आव्यो नहि, वली ते आज्ञानो योग निगोदादि एकेंद्रिय अने विगलेंद्रिय अने समूर्छिम तिर्यंच अने मनुष्य पचेंद्रिय, अनार्यादि देशमां वली अढार कोडाकोडी सागरना धर्म वियोगमां धर्म पाम्यो नहि माटे मनुष्य जन्म, देवगुरुनी योगवाई पामी, परमेश्वरनी आज्ञा शुरू नये आत्मस्वरूप आराधवानी ठे, ते आराधी समाधिवंत थवुं.

१०–हिंसा अने रागादि अढार पापस्थान सेवी आत्मा परम असमाधि पाम्यो माटे हिंसा, रागादि अपाय, दुःखदाताजाणी तेने तजी सहेजानंद स्वजावमा स्थिर समाधिवंत रहेवुं.

११–कर्मना विपाक ज्यारे उदय आवे त्यारे पोताने जोगववा पडे, ने ते कटुक विपाक लेवा, मटाडवा, बीजो समर्थ थाय नहि माटे मिथ्यात्वादि कर्मबधना हेतु तजी ज्ञानादि करणे आत्मसिद्धिना कर्त्ता थई परम समाधिवंत थवुं,

१२–लोकाकाशना असंख्याता प्रदेशे पुद्गल परावर्तन करतां जन्म मरण करी कोई ठेकाणे समाधि पाम्यो नहि माटे निज आत्म

प्रदेशमां रह्या जे ज्ञान दर्शनादिक स्वपर्याय विचारी थई परम समाधिमय थवुं.

१३–स्वपर द्रव्यना द्रव्य गुण पर्याय विचारी, परद्रव्यगुण पर्याय उपरथी उदासिन्नवृत्ति करी. पोताना द्रव्यगुण पर्याय पोतामां समावी, शुद्धात्म अनुभव समाधिमां रहेवुं.

१४– पोताना द्रव्यगुण पर्याय अभेदपणे पोतामां जाणी, सर्व विचार टाली, अकंप, अचल, निज ध्याने परम समाधि लेवी.

१५–मन वचनना योग स्थिर करी पोतानी ज्ञायकता परिणति निज ज्ञानअंगमांहे स्थिर अकंप करी, परम मग्नताए समाधिवंत रहेवुं.

१६–काय योगनी सूक्ष्म क्रिया पण त्यागी, पोताना अखंड अंगे देहथी न्यारा परम ज्ञान ज्योतिमांहे परम पूर्ण आनंदे मग्न थवुं. एम अनेक विधे समाधिना योगो सिद्धांतोमां कहेला छे ते सर्वे योगोमांहे शुद्धात्म अनुभवयोग मुख्य छे. माटे अनुभव अभ्यास करी निर्मल ज्ञानानंदमय समाधिवंत थवुं.

दोहरा.

जिन देशित नव तत्त्वने, लख्ये यथावत जेह ।
शुद्धातम निज गुण रुचे, सम्यग्दर्शन एह ॥ १ ॥
गुण पर्ययुत द्रव्यने, नय निक्षेप प्रमाण ।
सकल स्वभाव विशेषने, जाणे तेह सुज्ञान ॥ २ ॥
रागादिक विकलप रहित, रत्नत्रयी निज रुप ।
आचरतां थिर भावथी, रमतां चरण अनुप ॥ ३ ॥
तजी पर परिणति रमणता, ग्रही आतम अधिकार ।
दर्शन ज्ञान चरण सहित, निजानंद चित्त धार ॥ ४ ॥
दृढ अनुभव अभ्यासथी, सिझे आतम काज ।
मनसुख शिव संपति वरे, निज पदमें निज राज ॥ ५ ॥

॥ इति श्री रस्तुः ॥